

शरत्-साहित्य

शरत्-पत्रावली

अनुवादकर्ता

डॉ० महादेव साहा

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर (प्राइवेट) लिमिटेड, बम्बई-४

तीसरी बार मार्च १९६१
मूल्य : एक रुपया पचास नये पैसे

प्रकाशक : बघोबर मोदी, मैनेजिंग डाइरेक्टर,
हिन्दी-ग्रन्थ-प्रकाशक (प्राइवेट) लिमिटेड, हीराबाग बम्बई-४
मुद्रक : श्रीमप्रकाश कपूर, ज्ञानमण्डल लिमिटेड बाघवली (बनारस) ५७७ -१७

वचनके साथी
'वनश्याम'को
समर्पित

भूमिका

(प्रथम संस्करणसे)

साहित्यमें व्यक्तिगत पत्रोंका एक विशेष स्थान है। भारतीय पत्र-साहित्यमें पत्रका पत्र-साहित्य भागें बड़ा हुआ है। उभीसवीं और बीसवीं सदीके कितने ही कहिलकारोंके पत्र-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। पत्र-साहित्यको संस्करणका शूक कहा जा सकता है।

पत्र-साहित्यके संकलनके रास्तेमें कितनी ही कठिनाइयाँ हैं। पत्र-लेखक अगर उनकी मकल अपने पाठ नहीं रख छोड़ता है या किन्हीं पत्र लिखा गया है वे उन्हें सँभालकर नहीं रखते हैं तो यह काम नहीं किया जा सकता। इन्हीं कारणोंसे कितने ही महान् साहित्यकारी तथा वृत्तोंके पत्रोंका संकलन बहुत-कुछ असम्भव-सा हो गया है।

बराबर संकलनके पत्रोंका प्रश्न है यह बड़े हर्षकी बात है कि किन्हीं उन्होंने पत्र लिखे उन्होंने उसे सँभालकर रखा और वे मित्र-मित्र अन्तर्गतपर पत्रिकाओंमें अपने मौ र्दे। पत्रिकाओं तथा संकलनके कतिपय मित्रोंकी सहायतासे बँगला साहित्यके अनेक ग्रन्थ भी संकलनाय वन्द्योपाध्यायने उनके पत्रोंका संकलन कई वर्ष पहले शुरू किया था। उन्होंने अनेक एकान्तिक पत्र-संकलन प्रकाशित भी किये हैं।

संस्कृत के पत्रोंके संकलनके कामोंमें ये उनके मित्रों तथा पत्रिकाओंकी सहायतासे कई वर्षोंसे किया हुआ था। संकलनायके संकलनोंने सेंट काम सहज बना दिया।

अंग्रेज दिन्दी अनुवादके छाप जानेके बाद मुझे कितने ही और पत्र मिले हैं किन्हीं अंग्रेजोंसे संस्करणमें देनेकी इच्छा है।

इन पत्रोंकी पढ़नेसे पता चलैगा कि संकलन अपने व्यक्तिगत जीवनमें कितने महान् थे। उन्होंने कितने ही नए साहित्यकारोंको तैयार किया, पत्रिकाओं और निस्वार्थ मददसे अनेक परिधम किया और जीवन-पथमें आनेवाली विभिन्न कठिनाइयोंका बड़े साहसके साथ सामना किया।

नए पुराने साहित्यकारों के सीकने के समय इन पत्रों में बहुत-सी बातें मिलेंगी। आशा है पत्रावली से पूरा फायदा उठाया जा सकेगा।

हिन्दी-ग्रन्थ-रचना करने वाले साहित्यकारों का साधु प्रामाणिक अनुवाद प्रकाशित कर हिन्दी के अनुवाद-साहित्य को समृद्ध बनाया है। सरकार के कई अवसरों पर उपास, कई दफ्तरी निबन्ध-संकलन अमीतक हिन्दी में नहीं आए हैं। मैं उनके अनुवाद में लगा हुआ हूँ और धीमे ही उन्हें हिन्दी-भाषा के सामने उपस्थित करने की आशा रखता हूँ। इसके अलावा मुझे सरकार की जीवनी और साहित्य पर एक-एक पुस्तक मिलने की इच्छा है। आशा है समय के साथ वह काम समाप्त हो जायगा।

स्वाधीनता कायावस्था,
कमकमता
मूल, १९५२

महादेव साहू

प्रकाशकता निवेदन

पहले संस्करण के समाप्त हो जाने पर बहुत जल्दी में यह दूसरा संस्करण निकालना पड़ा। और अब यह तीसरा निकल रहा है। अनुवादक महाशय बाबू में मिले हुए पत्रों का अनुवाद नहीं भेज सके। उन्हें पुराने पत्रों पर पत्र लिखा गया परन्तु कोई उत्तर नहीं मिला। स्थानान्तरित हो जाने के कारण शायद उन्हें पत्र ही नहीं मिला। इस बीच 'शब्द निबन्ध' की ओर असमाप्त उपमा (अगरज आदि) प्रकाशित हो चुके हैं और शब्द बाबू की एक अत्यन्त प्रामाणिक जीवनी भी विष्णु प्रसाद द्वारा मिली जा रही है। पिछले संस्करण में कुछ पत्र और पत्रांच कहीं-कहीं और दुबारा छप गये थे, उन्हें ब्याख्यान ठीक कर दिया गया है।

पत्र-सूची

१ श्री लक्ष्मणनाथ गंगोपाध्यायको लिखित	१
२ प्रमथनाथ महाशयको	११
३ पद्मीन्द्रनाथ पाण्डको	१५
४ हैमेशकुमार रायको	३२
५ हरिदास बहोपाध्यायको	३३
६ मणिकान्त गंगोपाध्यायको	३९
७ मुषीराम सरकारको	४२
८ श्री मुरलीधर बज्रको	४५
९ प्रमथ चौबरीको	४६
१० जीवारायनी गंगोपाध्यायको	५२
११ श्री हरिदास झाङ्गीको	७२
१२ श्री कलवचन्द्र सरकारको	७३
१३ श्री विष्णुपुङ्गव रायको	७४
१४ श्री भूषेन्द्रकिशोर राधिक रायको	१११
१५ श्री कृष्णचन्द्रनारायण मौमिकको	११४
१६ श्री कल्याणनन्द रायको	११५
१७ अविनाशचन्द्र बोयाङको	११९
१८ श्री मणिकान्त रायको	१२
१९ श्री पद्मसिंह बहोपाध्यायको	१२१
२० ज्ञानभाय चौबरीको	१२३
२१ काशी बज्रको	१२६
२२ श्री ठमाप्रसाद मुखोपाध्यायको	१२७
२३ रवीन्द्रनाथ ठाकुरको	१३१

२४ कैशारनाथ बन्धोपाध्यायको	१३४
२५ पारुचन्द्र बन्धोपाध्यायको	१४६
२६ आत्मशक्ति सम्पादकको	१४८
२७ श्री मण्डोदरनाथ रायको	१५१
२८ श्री बुद्धदेव महापात्रको	१५३
१९. - - - - । १९१३ के अन्तर्गत	१५३
३ । ..	१५५

परिचय

[विन-विन खेलकों और मित्रोंका पत्र मिले गये, उनका]

१ उपेन्द्रनाथ बंगोपाध्याय—छायाचरित्र के विद्योदय नामक । बंगाल के प्रसिद्ध उपन्यासकार । 'मित्रिका' नामक मासिक पत्रिका के सम्पादक । छायाचरित्र, छायाचरित्र, अमूल-दश अक्षराग विद्याल आदि उपन्यास नवग्रह, गिरिका आदि कहानी-संग्रह तथा 'आत्मकथा' इनकी मुख्य रचनाएँ हैं ।

२ प्रमथनाथ मजुमदार—छायाचरित्र के मित्र और साहित्य-पत्रिका ।

३ फणीन्द्रनाथ पाण्डे—'यमुना' पत्रिका के सम्पादक । इसी पत्रिकामें पहले-पहल छायाचरित्र की रचनाएँ प्रकाशित हुई और वे साहित्य जगतमें प्रसिद्ध हुए ।

४ हेमचन्द्रबुध्दर राय—छायाचरित्र के अन्तर्गत और कहानियों के अन्तर्गत उन्होंने किन्हीं ही रोमांचकाव्य अथवा कहानियों में लिखी हैं । पठन, मधुपर्क, विमलपद्म, माया-चन्दन आदि इनके कहानी-संग्रह हैं । आगे-पार आगे, अठेर आकाश, काम-वैद्याली पापेय पुष्टो आदि बड़ी कहानियों और उपन्यास हैं । 'बोबनेर दान' नामक इनका कविता-संग्रह भी उल्लेखनीय है ।

५ हरिदास बहोपाध्याय—छायाचरित्र के मुख्य प्रकाशक गुप्तदास बहोपाध्याय एक अच्छे मासिक ।

६ मणिलाल बंगोपाध्याय—'भारती' पत्रिका के सम्पादक । विदेशी कहानियों के अनुबादमें दण्ड । कलकत्ता, आकाश, सौर, मधुबा पापही और कलकत्ता आदि कहानी-संग्रह प्रसिद्ध हैं । 'सुन्दर मुक्ति' नामके एक नाटक भी उन्होंने लिखा था ।

७ सुधीरचन्द्र सरकार—छायाचरित्र के साहित्यिक मित्र । शिशु-साहित्यिक । 'मौज' (मधुपर्क) नामक शिशु-पत्रिका के सम्पादक ।

८ मुखर्जीधर धनु—शिशु-साहित्यिक और छायाचरित्र के मित्र ।

९ प्रथमनाथ चौधरी—बंगाल के प्रसिद्ध कवि कहानी, उपन्यास और निबन्धकार । 'सुख पत्र' के सम्पादक । श्रीवत्सेर शास्त्र, नाना कथा,

वीरबख्शेर टिप्पणी, नाना चर्चा, धरे बाहिर, आदि इनके निबन्ध-संग्रह हैं। नील ओहितेर आदि प्रेम पारवाही कथा आदि उनके कितने ही कहानी-संग्रह हैं। दशन, संगीत, किसानोंकी समस्या, इतिहास आदि पर भी इन्होंने कितनी ही पुस्तकें लिखी हैं। इनकी ध्वंग रचनाएँ आम तौरपर वीरबख्श के नामसे छपा करायी थीं। आप रबीन्द्रनाथ के सहनोई थे।

१० लीलाधारी गंगोपाध्याय—शरत्चन्द्रकी साहित्यिक शिक्षा और कहानी-लेखिका।

११ हरिदास शास्त्री—शरत्चन्द्रके मित्र।

१२ भक्तयशस्त्र सरकार—साहित्यरसिक और शरत्चन्द्रके अनुग्रह लाभन।

१३ दिलीपकुमार राय—मुद्रच्छिन्न नाट्यकार त्रिजेन्द्रकाय रायके पुत्र। उपाध्यायकार, निबन्धकार संगीतज्ञ और अरविन्द मठ। मनेर परत रंगेर परत बहुचर्च्य कुबारा बोका आदि इनके प्रमुख उपाध्याय हैं। लीरेकर आदि कितने ही निबन्धसंग्रह छप चुके हैं। प्रमथ संगीत आदिपर भी इन्होंने काफ़ी लिखा है। शरत्चन्द्रकी 'निकुण्ठ'का इन्होंने अंग्रेजी अनुवाद किया है।

१४ भूपेन्द्रकिशोर दक्षिणराय—कान्तिकारी कार्यकर्ता और शरत्चन्द्रके मित्र। बेगु' नामक पत्रिकाके सम्पादक।

१५ कृष्णेश्वरानारायण भीमिक—'मोटरीय' नामक हास्तरसकी पत्रिकाके सम्पादक और शरत्चन्द्रके मठ।

१६ अनुमान' राय—शरत्चन्द्रके मठ और साहित्यरसिक।

१७ अविनाशचन्द्र घोषाल—शरत्चन्द्रके मित्र। 'वातायन' पत्रिकाके सम्पादक।

१८ मल्लिकार्जुन राय—अरविन्द घोषके मठ और सहकर्मी। प्रवर्तक संघ (चम्पननगर, बंगाल) तथा कितने ही उद्योग-व्यवस्था, बैंक बीमाकम्पनी तथाकथक। प्रवर्तक मामक मासिक पत्रिकाके सम्पादक और सार्वजनिक लेखक।

१९ पद्मपति चट्टोपाध्याय—नाट्यकार, पत्रकार और शरत्चन्द्रके मठ।

२० जहानघारा खीचरी—'वर्षावाणी' और 'वैद्यकी' सम्पादिका।

२१ काशी चन्द्रम वदू—शेषकार, निषेधकार, उपप्रासकार और शीघ्रीकार। मीरपरिचार, हिन्दू-मुसलमान गेदे, श्रीपट्टि-बैगाण आदि इनकी रचनाएँ हैं।

२२ उमाप्रसाद मुन्गोपाध्याय—स्वर्गीय आशुतोष मुन्गोपाध्यायके पुत्र, साहित्य-रसिक और 'बगवाणी'के सम्पादक। इसी पत्रिकामें पहले पहले धारावाहिक रूपमें प्येर दाबी (पयके दाबेदार) नामक शरत्चन्द्रका उपन्यास प्रकाशित हुआ था।

२३ रवीन्द्रनाथ ठाकुर—परिचय अनावश्यक।

२४ केदारनाथ चम्पोपाध्याय—सुप्रसिद्ध उपन्यासकार और कहानीकार। बंगला-साहित्यमें 'बाबा मोसाय'के नामसे प्रसिद्ध। इन्होंने शेष सप्ता, अमरासि ओके, कबुलति पायेन बुस्तेर दिवाली इत्यादि दर्जनो उपन्यास और कहानियाँ लिखी हैं। चीनर यात्रीमें इन्होंने बस्तर-विद्रोहके समयकी अपनी चीन-यात्राका विवरण दिया है।

२५ घादबन्धु चम्पोपाध्याय—शैक्षिक और विदेशी भाषा केन्द्र कई दर्जन उपन्यासोंके लेखक। यमुना पुत्रिने मित्रादिनि, सोयना, चोर, काँटा, हेरफेर, हाईनेन, आदि इनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। 'एचि-रिम' नामसे इन्होंने रवीन्द्रनाथपर एक पुस्तक लिखी है।

२६ महेन्द्रनाथ करण—बैगाणकी सम्पादित अथवा 'पोद' आदिके कावकर्ता। 'श्रीन्द्र साधिवर्ण-परिचय' पुस्तकके लेखक और शरत्चन्द्रके मक।

२७ अमल होम—प्रसिद्ध पत्रकार, साहित्यरसिक और शरत्चन्द्रके अनन्य मक।

२८ सुरेन्द्रनाथ गंगोपाध्याय—साहित्यरसिक और शरत्चन्द्रके रिश्तेमें मामा।

२९ मण्डोन्द्रनाथ राय—साहित्यरसिक और शरत्चन्द्रके मित्रके पुत्र।

३०—सुन्दरेश—साहित्यरसिक और शरत्चन्द्रके मक। बनस्पतिशास्त्रके अध्यापक।

शरत्-पत्रावली

१

[श्री उपेन्द्रनाथ गंगोपाध्यायको लिखित]

जी ए बी का दफ्तर,
रगून १०-१-१९१३

प्रिय ठीकन

तुम्हारा पत्र पाकर खुशियां बुर हुई। दो दिन पहिले फगीन्द्रकी बिट्टी और 'बरिबरीन' मिले। तुम जगोपर अधिक दिनोत्क शोध करना सम्भव नहीं, इसलिये अब शोध नहीं है। लेकिन कुछ दिन पहले लक्ष्मण ही बहुत शोध और कुछ हुआ था। मैं केवल अक्षरजम खोजता था कि वह करते क्या है। एक मी बिट्टी अब नहीं देख तो अक्षर ही इनकी मति-गति बरक यह है। तुमसे एक बात कह दूँ तुम्हें मुझमें एक बड़ी बुरी आदत है कि जगम ही सोच बैठता हूँ कि लोग जो कुछ करते हैं जान-बूझकर ही करते हैं। इच्छा न होते हुए भी कोई कोई आदतके कारण किसी दूसरी तरहका बर्ताव करते हैं। अनविद्यता (संकेहन) नामक एक बात है। मुझमें वह आत्यधिक मात्रामे है। सुनत्रको आज दो हफ्ते हुए एक बिट्टी किसी मी। आजतक उसका बर्ताव नहीं मिला। ये लोग क्यों तो झिन्ते हैं और क्यों मिलना बन्द करते हैं। तुमने समावर्तिका 'काशीनाथ' देकर अच्छा काम नहीं किया। वह 'बोला का काशीदार है। बचपनमें अम्मातके लिए किसी मई कहानी है। छम्बाना तो बुर रहा काश्योंको दिखाना मी ठावित नहीं है। मेरी हार्दिक इच्छा है कि वह म छने और मेरे नामको मिर्झामें न मिथ्याया जाय। भईका 'बोला' ही काशी हो गया है।

मैं 'यमुना' के प्रति स्नेहीन नहीं हूँ। पणालाप्य सहायता करूँगा। पर छोटी कहानियाँ लिखनेकी अब इच्छा नहीं होती। तुम काम ही लिखो। निबन्ध लिखूँगा अगर मेज़ूना। 'चरित्रहीन' कब पूरा होगा यह नहीं कह सकता। आभा ही दुखा है। पूरा होकर समाप्तिहीन ही मेज़ूना वह कहना ठीक नहीं होगा। तुम अगर कलकत्तेमें होते तो तुम्हारे पास मेज़ूना। इसी बीच तुम समाप्तिहीन लिख देना कि 'काशीनाथ'को न छर्प। अगर काप देग तो कलकत्ते गढ़ जाऊंगा। तुमने दो-एक कहानियाँ लिखनेका कहा है और मेज़ूनेको लिखा है। अगर मिल सका तो किसे दूँगा तुम्हें या जमीनको ?

इस बातका गुप्त रूपसे तुम्हींको लिख रहा हूँ। गिरिन लव छोटा था तभी मैं परिवारसे बाहर बच्चा आया था। उठने बगैरे रात घाबर घसे मेरी माद भी न हो। उपीन तुम्हें एक बात और कहूँ। एक दिन उठकी एक पुस्तक खरीदनी चाही थी। तुमने मना करते हुए कहा था कि पुनर्नगर ठसे दुखल होगा। उठी बातका याद रख कर ही मैंने नहीं खरीदी। ताफ-ताफ एक पुस्तक मँगी मी थी लेकिन उठने नहीं मेरी। बज्जन्में उठकी अनेक वेष्टाओंका संशोधन कर दिवा करता था। मैं लिखता था इतिहास उन आगोंने भी लिखना शुरू किया। उठ मकानमें धावद मैंने ही पढ़के उठकर प्यान दिवा। इसके बाद वे लोग तरफदेहे लिखकर एक इतिहासित मातृकाशिका निकालते थे। आखिरक उठने एक मी प्रति तुल फुलनेको नहीं थी। धावद वह लक्ष्य है कि मेर ऐसा मूर्ख आदमी उठकी चीजोंको नहीं समझ सकता। जाने दो, उठके लिए दुःख करना बेकार है। लंगरकी गति ही धावद नहीं है। मेरा स्वास्थ्य अत्यन्त कम अच्छा है। पेशिग मज्जी हो गई है। आब-कल पढ़ना एक तरफसे बढ़ किया है। मेरा अतमात 'भारतसौदा' (सैन्टिफिक) फिर समाप्त होनेकी ओर बरि-बोरे बढ़ रहा है। उठ व- ठम्पासको तुम्हारे लिखनेका इरादा है न अगर नहीं है तो बहुत बुरा है। बड़ाकात मी करो और ठसे भी न छोड़ो।

मेरा कलकत्ता आना—इस बेसको छाड़कर धावद सम्भव न होगा। तमस रहा हूँ कि स्वारम्भ भी ठीक नहा रहेगा लेकिन ठीक न रहमा ही अच्छा है, पर बहो आना ठीक नहीं। येना ही कम रहा है। मेरी पत्रव्यवहारे तुम्हारे हाथोंमें बसप ही। उठ कलकत्ते बहुत-सी चीजें लिखी हैं। प्रथम सैनपर ओर भी बिरांगी।

करते। सोचते कि ऐसा हो ही नहीं सकता। मेरी लोगन्य ठपीन पच पाते ही भिन्नना कि तुम इस बातपर अब विश्वास नहीं करते। मैंने कुछ दिन पहले शावर सुरेनको खिला या कि मुझसे विद्वय करके ही मानों वे चीजें छप रही हैं। इसका कारण यह है कि मैंने भी समाजपतिको खिला कि उसे अब न छापें, फिर भी मुझे कोई उत्तर न देकर उनकी छपाई बकती रही। जो कुछ भी हो अब भीतरकी बात भी मासूम हुई। तुमने भी वही बात समाजपतिको कही थी। उसके बारेमें अब और जानकर राश मासूम समझ सका। तुम मेरे कितने संगठनकारी हो वह भी अगर न समझता ठपीन तो आज इस तरहकी कहानियों न मिल सकता। मैं मनुष्यके हृदयको समझता हूँ। तुम किस प्रकार अपने अन्तर्वासीके सामने निरर हो बिना संकोचके कह सकते हो कि मैं छात्रको स्वमुख ही प्यार करता हूँ मैं भी बिबकुल ही आनता हूँ और उसी तरह विश्वास करता हूँ।

जाने दो इस बातको। केवल एक 'चन्द्रनाथ'को लेकर ही इतना इंगाम्य। यद्यपि यह समझमें नहीं आ रहा है कि वह पचीपाछके पत्रमें कैसे छपेगा।

तुम लोगोंने सारी बातें न समझकर चारी औरतें न समझकर अनानक बिठाफन देकर काफी बेकसूरीका काम किया है और उसका पक्ष भीय रों हो। दाप तुम लोगोंका ही है और दूसरे किसीका नहीं। पचीपाछके लिए तुम कुछ पचापिछमें पड़ हो इस पग-पगपर रेल रहा हूँ।

मैं और भी मुमीकतमें पड़ गया हूँ। एक ओर मेरी बिबकुल इच्छा नहीं है कि 'चन्द्रनाथ' ऐसा है वैसा ही छपे। यद्यपि वह कुछ छप भी गया है और बाकी हिस्सा मुझ नहीं मिल है। सुरेन बहुत डरता है कि कहीं वह चीज लो न जये। वे मेरी चीजोंको हृदयसे प्यार करते हैं। शावर इसीलिए उनकी इतनी उत्कर्षा है।

एक बात और ठपीन 'छात्रवर्ष'के लिए प्रमथ बार-बार परिशिदीन' मोंग रहा था। अन्तमें इस तरहसे भिन्न कर रहा है कि क्या कई। वह मेरा बहुत दिनोंका पुराना रोन्त है और दास्त कहनेसे जिस बातका बोध होता है वह स्वमुख बही है। उनने गर्बके साथ सबसे कहा है कि मैं 'परिशिदीन' हूँगा ही और इसी जाधामे ज' आदिके बार-पोंच उपम्यालोंको प्रमथमें आकर

कौन सा है। वही 'मार्तण्ड' का मुक्तिदा है। अब दिज् बाबू आदि (हरिदास गुप्तासके पुत्र) ने उसे बर दबाया है। इस 'यमुना' में भी निरापन छपा है कि उसी पत्रिका में 'परिवर्तन' छपेगा। समाजपति भी बराबर रजिस्ट्री-निर्दिष्टों मिल रहे हैं। फिर क्या करें, कुछ भी समझ नहीं आ रहा है। अभी-अभी प्रेमनाथकी बम्बी रोने-धोनेकी चिट्ठी मिली। वह कहता है कि यह उसे नहीं मिला तो वह मुँह दिताने कायक नहीं रहेगा। परंतु कि उसे पुराने इस्-मिन् क्लब बगैर छोड़ना पड़ा। क्या करें, क्या सोच कर बचाव देना। शुद्धाय बचाव चाहिये। क्योंकि एकमात्र तुम ही इससे इसका इतिहास जानते हो।

बहुत अच्छा नहीं है। छल-भाठ दिनोंसे चर आ रहा है। अगर बम्बी समझना तो तुम्हेंका यह पत्र दिला देना। तुम आपसमें कितना चाहो बड़ो लेकिन मैं तुम कागोंका किसी समय थिरक पा, कमसे कम ठगका सम्मान तो देना ही।

—लेखक शरत्

(कभी बाबू यह पत्र आप पढ़कर ठेकेको भेज दें।)

बं० १४, पोचार्डग हाउस स्लीड,
रंगून १०-५-१९१३

शिव ठेके, आज तुम्हारी भी चिट्ठी मिली और प्रमर्शकी भी। तुम मेरे बारेमें बिल्कुल स्वस्थ हो गये हो इससे कितनी खुशिका अनुभव कर रहा हूँ, इसे मिलकर व्यक्त करनेकी प्रेरणा पागलपन होगी। तुम्हें यह कैसे नहीं हो रहा है या कुछ नहीं हो रहा है। इससे समझ गया कि अत्यन्त खूब मायस मेरे कर्तव्यका निष्पत्ति कर दिया है। मैंने अपनेको मूर्ख कहा था—क्या वह मिथ्या है। तुम लोगोंके सामने मैं अपनेको पण्डित समझना क्या मैं इतना बड़ा अहमक हूँ। हो सकता है कि बनाकर कहानियाँ मिल सकती हैं, पर इसमें वास्तविकता नहीं। बी. ए., एम. ए. बी. एल., इन विषयोंको मैं अत्यन्त अच्छा करता हूँ। यही किन्ता था। प्रमर्श किन्ता है कि कहानियोंको उसकी सान्ध्य सभ्यतामें अत्यन्त सम्मान मिला है। शिवेन्द्रका शयने इतनी प्रशंसा की है कि निराल

सारस-पभावही

ही होता। सीसीका 'नारीका मूख' कहा जाता है कि 'अमूम' दुभ्य है।
 रब बाबूका कहना है कि ऐसी कहानी छायाद रवि बाबूकी भी नहीं है और
 ऐसा निबध बंगला मापामें उन्होंने पहले कभी नहीं पढ़ा था। सत्य मिथ्या
 रसबास् जाने। पन्नीकी पत्रिका छोटी है सही पर वैसी अच्छी पत्रिका छायाद
 राज-कक एक मो नहीं निकलती है। ईश्वर करे, पन्नी इसी तरह परिश्रम करके
 नमनी पत्रिकाका सम्पादन करे। दो दिन बाद हो या दस दिन बाद श्रीबुद्धि
 निवार्य है। पर चेष्टा करनी चाहिये—परिश्रम करना चाहिये। और मेरी बात।
 ठसे छोटे भाईकी ही तरह देखता हूं। उसकी पत्रिकासे अगर कुछ बच जाता
 तब दूसरी पत्रिका पायेगी। लेकिन आज कक इतने अनुरोध आ रहे हैं कि
 ते बस हाथ होते तो भी काम पूरा कर सकता ऐसा नहीं समझता। 'वरिषहीन'
 उसकी पत्रिकामें नहीं प्रकाशित होगा यह बात किसने कही है। प्रमक्को
 कुनैके स्थि दिया है। लेकिन अगर वह कह बैठता कि वही प्रकाशित करेगा तो
 सच्य है कि मुझे सम्मति देनी पड़ती लेकिन वह लोग ऐसी माँग नहीं
 करते। छायाद पाशुस्थिपि पढ़कर कुछ डर गये हैं। उन्होंने सावित्रीको नौकरानीके
 लमें ही देना है अगर ब्रॉल होती और कहानीके वरिषका कहाँ कित तरहते
 प होता है कित कोबलेकी कानमे कितना अमूम हीरा निकल सकता है अगर
 स बातको समझते तो इतनी आसानीसे उसे छोड़ना नहीं चाहते। अन्तमें हो
 जाता है कि एक दिन अकसोस कर कि हाथमें आनेपर भी कैते रत्नका
 ल्होंने त्याग कर दिया है। मुझे उसने पूछा है कि उपसंहार क्या होगा।
 ते ऊपर भित्ति मरता नहीं अवश्य ही वह उस तरहका पढ़का उपल्लास
 इसी पत्रिकामें प्रकाशित करनेमें आगा पीछा करेगा यह कोई आश्चयकी बात
 ही। लेकिन स्वयं ही वे लोग कह रहे हैं कि 'वरिषहीन'का अन्तिम धंध
 अपात् तुम लोगोंने भित्ति पड़ा है उसके बाद उतना और। रवि बाबू मी
 कुछ अच्छा हुआ है (सीसी और वरिष-विशेषणमें)। पर उन्हें डर है कि अन्तिम
 रंगको मैं नहीं बिगाड़ न हूँ। उन्होंने इस बातको नहीं सोचा कि जो अन्तमी
 का बूतकर मेसकी एक नौकरानीको प्रारम्भ ही लौच कर लोगोंके सामने
 बिर करनेकी दिम्मत करता है वह अपनी समताको समस्त-बूतकर ही ऐसा
 रखा है। अगर इतना भी नहीं धार्मिका तो बड़ ही उतनी उम्रतक तुम

लोगोंकी शुद्धभाई करता रहा । और एक बात । प्रमथ कहता है कि 'भारतवर्षको मैं अपनी ही पथिका समझूँ । और वैसा करता भी हूँ । मैंने प्रमथको बचन दिया है कि यथासाध्य करूँगा लेकिन साध्य कितना है वह नहीं कहा । और भी एक बात है—ये वाम लेकर लेक लरीदेगे—तब उन्हें कमी नहीं होगी । लेकिन वाम देनेमे ही सबके लेक नहीं मिलते हैं । मेरे बारेमें शायद अब उन्होंने इस बातकी समझा है । बहरहाल 'परित्राहीन' मेरे हाथोंमें आते ही फकीको मेज दूँगा । अपने पास नहीं रखूँगा । पर प्रमथ फकीके हाथोंमें उसे नहीं देगा क्योंकि फकीके ऊपर ये कुछ नाश्वर्य है । ऐसा ही होता है । क्योंकि मानिक पत्रोंके लबाबक एक-दूसरेको नहीं देख पाते । और कुछ नहीं । पर प्रमथ केवल मेरा वाक्य-बन्धु ही नहीं है । वह मेरा परम बन्धु और बहुत ही सच्चा भादमी है । लचमुच ही लजन म्याल है । मैं उसे बहुत प्यार करता हूँ । इसीलिए मग वा कि उसकी जोर बरदस्तीसे मैं पार नहीं पाऊँगा । इस विषयमें ठीक खबर बादमें दूँगा ।

तुम झिझकते हो कि तुम लोग 'यमुना' को बड़ी करोगे । तुम लोग कौन ? तुम 'यमुना'के परम वन्दु हो और निःस्वार्थ बन्धुत्व करने आकर तुम्हें लोत्तना मांग करनी पड़ी है । इसे कितने स्पष्ट बयानोंके कारण ही तुम्हारा विषयमे जो कुछ सुना है उसमें रचमाण भी बिघाट नहीं किया । ही सचता है कि कुछ कूटनीतिक पाक चले हो—अच्छा ही किया है । जिसे प्यार करना उसको इस तरह ही सहायता करना । फकीको तुम ही प्यार करते हो । लेकिन इसके अन्तर्गत तुम लोग धन्दका कार्य ठीक नहीं समझ सका । इस बार समझा कर लिखना । 'पथका निर्देश' और 'रामकी सुमति'के बारेमें मेरा मत है कि 'पथका निर्देश' ही अच्छा है । पर यह बहानी बरा कठिन है । मगि अच्छी तरह नहीं समझ पायेगे । मैंने भी बनेबोनेसे अनेक प्रकारके मत सुने हैं । जो स्वयं करानी लिखते हैं वे ठीक जानते हैं कि 'रामकी सुमति'को तो लिखा भी जा सकता है, पर 'पथका निर्देश' लिखनेमें कुछ अधिक पोषणी उठानी पड़गी । शायद सभी मिल भी नहीं सकेंगे । इस तरहकी गड़बड़ीकी परिस्थितिमें हीक जोकर एक निबन्ध पका जानेग । ही सचता है धैर्यकी कमीके कारण समाप्त होनेके पहले ही बन्द कर दें । और अपनी आलोचना खुद कर सकें । लेकिन कलकत्ता और इस देशके लोगोंकी रायमें दोनों ही कहानियाँ सुप्रसिद्धि विषयमें एकदम हैं ।

हिम्न बाबूका कहना है कि कहानियाँ आकर्षक हैं। कवीकी पत्रिकामें प्रति मास इस तरहकी कोई भीत्र प्रकाशित हो, इसकी विशेष चेष्टा करनी चाहिये। पर मैं अब बहुत छोटी कहानियाँ लिखनेकी इच्छा नहीं करता। कुछ बड़ी हो ही जाती हैं। मुझ लोगोंकी तरह काफी छोटी मानो लिख ही नहीं पाता। इसके अलावा एक बात और यहाँ मुझे कहनी है। मैं तो 'अमृतनाथ'को किन्तु कुछ नये छंदोंमें हावने की चेष्टामें हूँ। हों कहानी (फाउंड) कौकी ली रहैगी। इसके बाद वा तो 'अतिथी' और नहीं हो तो उसके भी कोई अच्छी थीर 'अमृत'में प्रकाशित होवी चाहिये। और निरन्तर। इसकी भी अत्यन्त आवश्यकता है। अच्छे निरन्तर विशेष रूपसे आवश्यक है। ऐसा नहीं होता है तो केवल कहानियोंसे पत्रिकाको सपासमें बड़े लोग बड़ी नहीं समझेंगे। मुझ बगल मुझ छोटी कहानी लिखनेके परिश्रमसे सुटकाग हो सकते हो, तो मैं निरन्तर भी लिख सकता हूँ और धापर कहानीहीकी तरह करम और सुपाठ्य ठीकीमें। इस विषयमें अपनी राय लिखना। अगर कहानी लिखनेका काम मुझ लोग बड़ा के सकते हो तो मैं केवल उपस्थात और निरन्तरमें पहुँ। नहीं तो दिखाया है कि रातमें भी परिश्रम करना पड़ेगा। मेरी लकीरत ठीक नहीं। रातमें नहीं लिख पाता और पढ़ाईमें भी मुकसान होता है। आखिरका निरन्तर उपस्थात, कहानी उन-कुछ लिखनेसे लोग समझकी करके सकार उठावेंगे और लुपटी पत्रिकाओंमें भी कुछ देना होगा।

'देवदास' और 'पापाज' मेक देना। मैं फिरसे लिखनेकी चेष्टा कर देखूँगा। अच्छा पत्नी। कापियों छाप कर कपरा क्यों बरबाद कर पा है। उसके आइनोंकी लकवा क्या कुछ बड़ी है। मैं ऐसा नहीं समझता पर इस बातका अधिष्ठ मपेला है कि अगले रात उसकी पत्रिका और पत्रिकाओंकी पत्रिकें लड़ी हो आधगी।

पत्नीको अगावतार आधका होती है कि मैं धापर उसे छोड़कर अन्यत्र लिखने आऊँगा। केवल इस आधकाका कारण क्या है। वह मेरे छोटे माई चेष्टा है। इस बातसे वह क्यों विधात नहीं कर पाता है, बड़ी जाने। मैं नहीं जानता।

कहानी 'अमृत-पत्रिका' कहानी लक्ष्मण ही अच्छी है। लेकिन और कुछ बड़ी

होनी चाहिये थी। और शेषको तबमुख ही शेष करना उचित था। ऐसी कहानीको हमने इतनी कसूरवाजीमें क्यों लालची नहीं बनाया। एक बात बाद रखना कहानी कमसे कम १२ १४ पन्नेकी होनी चाहिये और नतीजा बहुत स्पष्ट होना चाहिये।

हुरेनने मेरी बिछीका जवाब क्यों नहीं दिया। उसे अपने हाथकी कटम दी है, क्योंकि उससे अच्छी चीज मेरे पास देनेके लिए नहीं है। वह उसका क्या खूबबहार कर रहा है। पूछ कर मिलना। मेरी कटमका सम्मान न होने पावे। और बार कबसे होना बाकी है। योगेश मजूमदार कहाँ है। पूँडू, बूझी और लोरीन इन लोगोंके लिए भी अपनी कटमें ठीक कर रखी है। किसी दिन मेरा वृत्ता।

गिरिन क्या बौकीपुर बीय। वह क्यों है, वह नहीं मासूम होनेके कारण उसे जवाब नहीं दे सका। मेरे पास प्यारे नहीं है, कभी यह बात बाद नहीं आई। अच्छा, आक बर्हिठक।

हाँ, एक बात और। तुषाकृष्ण बागचीने एक स्थिति बताना मेरा है। वह कहता है कि पारी बाते छुट हैं। अच्छी बात है। मैं जानता हूँ कि कौन-सी बात छुट है। आदमी जब अस्वीकार कर रहा है, तो बही काम कर देना उचित है। इसपर वह बड़ा आदमते है। कमीन्द्र बाबू, आपका तार पाकर भी जवाब नहीं दिया। कारण जवाब देनेकी बलु मेरे हाथसे बाहर है। पर व्याधा करता हूँ कि कसूर ही हाथोंमें आयेगी।

अगली मंजरी आलोचना और 'नारीका मूख' मेरेगा। उसके बादबाकी डाकसे 'जगन्नाथ और एक कोई चीज'। 'परिग्रहीन' 'यमुना'में प्रकाशित हो, पही मेरी आन्तरिक हण्ड है। ईश्वरकी इच्छासे बही होगा। निश्चित रहे। पर तुन रहा हूँ कि उसमें मेरकी नौकरानीके कारण बचिका लेकर बरा चस-चस मचेगा। मचने सीकिये। लोग कितनी ही निन्दा क्यों न करें। जो ब्येरा कितनी निन्दा करेंगे, वे ठठना ही अधिक पढ़गे। वह भला हो या बुरा, एक बार पढ़ना शुरू करनेपर पढ़ना ही होगा। जो लयकते नहीं हैं जो ककाका मर्म नहीं जानते वे शायद निन्दा करेंगे। पर निन्दा करनेपर भी काम बनेगा। किन्तु वह पारकोर्कोडी और एनकिविसके सम्बन्धमें बहुत अच्छा है, इसमें तन्वीर नहीं।

और यह एक संपूर्ण वैज्ञानिक नैतिक उपन्यास (साइन्सफिक् एथिक्ल नॉवेल) है, इस बात इसका पता नहीं चल रहा है।

—शरत्

१४ पोम्पर्टग हाउस स्ट्रीट

रंगून २९ अगस्त १९११

प्रिय ठपीन बहुत दिनोंके बाद तुम्हें बिट्टी किसने बैठा हूँ। तुमने भी बहुत दिनोंसे अपनी कार्र सबर नहीं दी। मत किस्सो, इसके लिए दुःख नहीं करता और ठण्डना भी नहीं देता। दो-तीन महीनोंके बाद समझता फिर साक्षात्कार होगा। तब वे साथी बातें होंगी।

इत महीनेकी 'बमुना मिस्त्री, तुम्हारी 'अरमी-बाम' पड़ी। इस सम्बन्धमें तुम मेरी रायका विश्वास करोगे या नहीं तुम्हारे ही सम्बन्धमें प्रकट कर रहा हूँ— 'बापके मुँहसे बेटेकी प्रशंसा सुननेसे कोई घबरा नहीं।' मेरी बचार्थ राय यह है इत तरहकी मजुर कहानी बहुत दिनोंसे मरी पड़ी। धायद यह तुम्हारी सबसे अच्छी कहानी है। अनाचरक आहम्वर नहीं है। लोगोका शोष दिकाना संसार के कल्लेको छामने रत्नना, इत्यादि कुछ नहीं है। केवल एक सुन्दर फूलकी तरह निर्मल और पवित्र है। मजुर अति मजुर। यही मैं चाहता हूँ। पढ़कर अत्यन्तके अतिरेकसे जोले यदि गीली न हो जायें तो वह कहानी कैसी। बहुत अच्छी बन पड़ी है। ठपीन आन्तरिक अभिप्राय प्रकट कर रहा हूँ। बीच-बीचमें ऐसी ही कहानी पढ़नेको मिस्त्री चाहिये। हाँ, मुझ क्लेश करना कठिन काम है। लेकिन ऐसी चीज भिन्न बाप तो मैं और कुछ नहीं चाहता। मेरी इतनी प्रशंसासे तुम्हें गापय कर संकोच होगा और धायद सभी मेरे साथ एकमत भी नहीं होंगे। लेकिन मुझसे अच्छा मर्मज्ञ आजके युगमें एक रवि बाबूको छोड़कर और कोई नहीं है। वह मत सोचना कि मैं गर्ब कर रहा हूँ। लेकिन पादे मेरो अग्राम-निर्मरता कहो चाह गर्ब ही कहो मेरी चारबा यही है। ऐसी कहानी बहुत दिनोंसे नहीं पढ़ी थी। सुना है तुम्हारी एक बड़ी और अच्छी कहानी 'मारतबार्'में प्रकाशित हुई है। 'मारतबार्' अभी पहुँचा नहीं। नहीं कह सकता

बह ऐसी बनी है लेकिन यदि माब और मामुबमें ऐसी हो बन पड़ी हो तो वह भी निरपराह ही बहुत अच्छे कहानी होगी ।

इन्के अन्धावा तुम्हारे किम्बोकी बीबी बहुत सुन्दर है । मैं यदि ऐसी सुन्दर माया पाता मायापर इसी तरहका अधिकार पाता तो शाबद मेरी कहानी और भी अच्छी होती । हाँ मैं अपने साथ तुम्हारी मुझना नहीं कर रहा हूँ । इससे शाबद तुम्हें संकोच होगा । लेकिन हर्ष होनाभर मैं उसे बचाकर नहीं रख सकता ।

आजकल कैसे हो । मैं बहुत अच्छा नहीं हूँ । यह बर्गकाक मेरे लिए बड़ा ही दुःखमय है । १ १२ दिन भर हुआ था वो दिनते अच्छा हूँ । मेरा प्यार ।

—शरत्

२

[प्रमथनाथ महाचार्यको लिखित]

डी ए. बी का दफ्तर

एगून २१-१-२२

प्रमथ, तुम्हारे थिड़ी भित्री । आज ही अभाव दे रहा हूँ । ऐसा तो नहीं होता । वो मेरे स्वभावको जानता है, उसके सामने अपने सम्बन्धमें इतनी अधिक कैम्पित देना बेकार है ।

मेरे सम्बन्धमें कुछ जानना चाहते हो । संक्षेपमें वह कुछ-कुछ इस प्रकार है ।—

१ शहरके बाहर एक छाने-से मकानमें नगीचे किनारे रहता हूँ ।

२ नौकरी करता हूँ । १ रु मंथन मिच्छा है और १ रु मत्त । एक छोटी दुकान भी है । लाये-लाने किसी तरह काय निकल आता है । पूँजी कुछ भी नहीं है ।

३ बिरुकी बीमारी है । किसी भी धन

४ पढ़ा है बहुत । छिछा प्रायः कुछ भी नहीं । पिछले १० बरोंमें शरीर विज्ञान बीजविज्ञान, मनाविज्ञान और कुछ इतिहास पढ़ा है । शास्त्र भी कुछ पढ़ा है ।

५. अगले मेरा सब-कुछ ही बच गया है । पुस्तकालय और 'चरित्रहीन' उपन्यासकी पाण्डुलिपि भी । भारीका इतिहास करीब चार-पाँच सौ पृष्ठ मिला था, वह भी बच गया ।

इच्छा भी इस वर्ष सम्पार्जना । मेरे द्वारा कुछ हो वह शायद होनेका नहीं इसीलिए सब-कुछ स्वाहा हो गया । फिर शुरू करूँ, ऐसा उत्साह नहीं हो रहा है । 'चरित्रहीन' ५ ० पृष्ठोंमें प्रायः समाप्त हो चला था । सब-कुछ गया ।

तुम्हें एक और सचर देना बाकी है । तीनोंक लाख पहले जब हृदयकी बीमारीके पहिले कक्षय बिलार्य पड़े, उस मीने पढ़ना छोड़कर कैबलिन अंकन शुरू किया । पिछले तीन बरोंमें बहुत-से कैबलिन एकट्ठे हुए थे । वे भी मरभ्य भूत हो गये । अंकनका कैबल सामान भर बच गया है ।

अब मुझे क्या करना चाहिये अगर वह बतला दो तो तुम्हारी रायके मुताबिक कुछ दिनोंतक खेडा कर देखूँ । उपन्यास, इतिहास, चित्रकारी, कौन सा ? किचको फिर शुरू करूँ बतलानो तो ?

तुम्हारे स्नेहका

—अरु

४ अप्रैल १९११ रंगून

प्रमथ, तुम्हारी पछेपाकी बिडीका अमीतक बचाव नहीं दिया । सोच रहा था तुम क्या मुझे क्यों इतना प्यार करते हो । मैं इस बातको बहुत दिनोंसे सोचता हूँ । 'प्रमथ एक अहंकार करूँगा माफ़ करोगे ?

अपार माफ़ करो तो कहूँ । मुझसे अच्छा उपन्यास या कहानी एक रवि बाबूके बिना और कोई नहीं लिख सकैगा । अब यह बात मनसे और जानसे लम्बी प्रतीत होयी उही दिन निबन्ध या कहानी या उपन्यासके लिए अतुरोप

करना । इनके पहले नहीं । तुमसे मेरा यह एक बड़ा अनुरोध रहा । इस विषयमें मैं छुट्टी लातिरहती नहीं चाहता । मैं लय चाहता हूँ

१७ अप्रैल १९११ रंगून

प्रमथ, तुम्हारा पत्र कुछ मिथ्या भाव जवाब दे रहा हूँ । "परिशीन" का जितना हिस्सा तिरसे लिखा था (और बहुत दिनोंसे नहीं लिखा) वैसे कम तुम्हें पढ़नेके लिए भेजनेकी बात सोची है । अगली मैसेसे जवाब इसी कसरके भीतर ही भेजूंगा । लेकिन और कुछ भी नहीं कह सकता । पढ़कर बापित भेज देना । इसका परव्य कारण यह है कि इनके लिखनेकी ठीकी गुण होगीकी किसी भी हालतमें अच्छी नहीं होगी । पसन्द करोगे या नहीं इस विषयमें मुझे पार छन्देह है । इसीलिए उसे छापना मत । समाजवादि महाशयने अस्वन्त आग्रहके साथ उसे मांगा था क्योंकि उन्हें सचमुच ही अच्छा लगा है । मेरी ये सब बाहियात रचनाएँ हैं । इनके यथार्थ माथोंको बहुत ठंडाकर कौन समझेगा और कौन इसे अच्छा करेगा । तुम अगर सचमुच ही समझते हो कि यह तुम्हारी पत्रिका (भारतवर्ष) में छापने लायक है तो हो सकता है कि आपनेके लिए अनुमति दे दें, नहीं तो तुम बेशक मेरे मयककी ओर दृष्टि रखकर जिससे मेरी ही चीज छपे ऐसी प्लेज किसी भी हालतमें नहीं कर सकते । निरेश लय—साहित्यमें मैं यही चाहता हूँ । इसमें मैं विषायक नहीं चाहता । इसके अन्तर्गत तुम्हारे द्विचक्र (द्विचक्रकाक राय) सहमत होये कि नहीं कहा नहीं जा सकता । अगर कोई आर्थिक परिवर्तन करती समझता है तो यह नहीं होगा । ठरकी एक भी कमहन नहीं छाने देगा । पर एक बात कह हूँ । बेशक नाम और प्रारम्भको देखकर ही "परिशीन" मत समझ बैठना । मैं नीतिशास्त्रका एक विद्यार्थी हूँ लम्बा विद्यार्थी । नीति शास्त्र समझता हूँ और किसीन कम समझता हूँ मेरा ऐसा लयान नहीं । जो कुछ भी हो पढ़कर जोय देना और फिर होकर अपनी राय लिखना । तुम्हारी रायकी कीमत है । लेकिन राय देते समय मेरे गम्भीर उद्देश्यको पार रचना । यह कोई बहतखेपी कियाज नहीं है अगर आपनेके लायक समझना तो कहना मैं आतिरी हिम्मेकी कित हूँगा । ठमें मैं

जानता ही हूँ। मैं उस्ता-सीबा मेरा कबमधी मोकपर आया नहीं बिलखा।
 छुल्ले ही उरेस्य मेहर शिखता हूँ और वह घटनाक्रमों बरत नहीं आता।
 पैयालधी 'यमुना' कैसी आगी। 'पय-निर्देश' का समस्त किया। शीघ्र उत्तर
 देना।—

१४ मई १९११ रंगून

प्रमथ, रंगून-शास्त्रमें हिस्साकी मृत्युका समाचार पढ़कर आश्चर्यचकित
 हो गया। ऊँहें मैं कम जानता था ऐसी बात नहीं। हाँ तुम्हारी तरह
 जाननेका अवसर नहीं मिला है। लेकिन किटना जानता था मैंने किए वह बहुत
 कम नहीं था।

उनके सम्मानकी रक्षाके लिए मुझसे जो कुछ बन पड़ता वह अवश्य ही
 करता। वह साहित्यिक और धार्मिक थे। वह मेरा मुख्य समस्त थे और
 नहीं समझनेपर उनके सामने भी मुझे बन्ध नहीं थी। इसलिए सोचा था कि
 किन्हीं मेमूँगा। अवकाश होनेपर वे प्रकाशित करेंगे नहीं होनेपर नहीं करेंगे।
 इसमें कल्याण-अभिमानका कारण नहीं था। लेकिन अब ऐसे तैर-नाम्-सैरे
 मेरा दाम बगावेंगे। हो सकता है कहेंगे प्रकाशित करनेके अवसर नहीं है।
 हो सकता है कहेंगे कि बरतकर बँक दो या बरतकर कर दो। अतएव मई
 मुझ बमा करो। तुम मेरे किन्ते बने मुझ ही इसे मैं जानता हूँ। इस बातको
 एक दिनके लिए मैं नहीं भूलूँगा। तुमने मुझे गलत समझा मुझपर शक किया
 तो भी मेरे मनका माग अवकाश पड़ा। लेकिन वह बुरी बात है। इसकी
 पब्लिकाके लिए मैं अपनी मर्जावाको नष्ट नहीं करूँगा। मैं छोटी पब्लिकमें
 बिलखा हूँ, मई वही मेरे लिए काफी है। मुझे बड़ा सम्मान मिलता है, भद्रा
 मिलती है इससे अधिक और किसी भीबकी आशा नहीं करता। एक बात
 और 'वरिषहीन के सम्बन्धमें।' बिलखा है बाबूने भी उर्दू रचित किया
 है—कहा जाता है कि वह इतना अनैतिक है कि किसी पब्लिकमें प्रकाशित
 नहीं हो सकता।—बापद पेला ही हाथ क्योंकि तुम आग मेरे धनु नहीं
 हो कि सिखा दोषा पण करोगे। मैं भी सोच रहा हूँ कि लोग बहुत समय है
 इसी तरह करते रहने प्रवृत्त करगे।

मैं अपने नामके लिए अगर भी नहीं सोचता खेगोकी जैसी इच्छा हो मेरे संबंधमें सोच ।—जाने दो हम बातको । काम ही मेरा विचार करेगा । मनुष्य बुविचार-अविचार दोनों ही करेगा इसके लिए चिन्ता करना भूल है । मैं ईश्वर पर ही नहीं भिन्न पाता बाकी सबकुछ भिन्न करता हूँ मैं सम्यक्दृष्टि निकट आनी किसी खोजोंकी परीक्षा नहीं कर सकता । यह मेरे लिए अशक्य है । हाँ रवि बाबूको छोड़कर ।

३

[फणीन्द्रनाथ पालकी लिखित]

डी ए. बी. का दफ्तर

एगून, जनवरी १९११

फणीबाबू आप लोग कैसे हैं ? बराबर चिट्ठी देना न भूलें । मैं फिर जो कुछ समय है करूँगा । उगीन कहाँ है ? मथानापुर जब आयेगा ' मुझे 'चन्द्रनाथ' जब भेजेगा । मुझे क्या करना होगा आप बतलायें । नहीं बतलाने पर मुझमें किसी काम-काज नहीं होगा । आनेके बादसे मैं पेरिस और दुम्कार मुग्त रहा हूँ । नहीं तो अवतक धायन कुछ बिस्तार । फिर भी एक चिट्ठी लिखें । धार्यनको मेरी बात बाव दिखाने दें ।

—शरत्

एगून, (माघ) १९११

विय फणीन्द्रबाबू 'धर्मकी प्रमति' कहानीका अंतिम हिस्सा भेज रहा हूँ । उसके संक्षेपम अप्रसन्न कुछ कहना जरूरी लगलता हूँ । कहानी कुछ बढ़ी हो गई है । शायद एक बारमें प्रकाशित नहीं हो सकेगी । लेकिन दो सके तो अच्छा होगा । जरा छोट मरहम छापनेसे और दो-एक पृष्ठ अधिक देनेम हा सकती है । छोटी कहानीका कमरा छापनेसे उतना अच्छा नहीं जाता । विशेषतः आपकी पत्रिकाका अब क्या प्रसार होना चाहिये । यद्यपि मेरी छोटी कहानी लिखनेकी

आवत आबकक कुछ कम हो गई है। पर आशा करता हूँ कि वो-एक महीनेमें सम्पन्न ठीक हो जायेगा। मैं प्रतिमास छापी कहानी २०, १२ पृष्ठोंकी और निम्न में दूँगा। कहानी अवश्य ही, क्योंकि व्यापक इतका समाचार कुछ अधिक है।

अगली बार जिसमें कहानी छोटी हो इधर ध्यान रखें। एक बात और। आप समाचारसिरी में रहें। उनकी पत्रिका में अगर आपकी पत्रिकाकी पंजी-बहुत आकांक्षा रहे तो अच्छा होगा। इस बारके साहित्य में मेरे नामसे न जाने क्या कूदा-करकट छापा है। वह क्या मेरा किया हुआ है? मुझे तो पत्रिका भी पता नहीं है और अगर है भी तो उसे छपा क्यों? आदमी बचपनमें बहुत-कुछ भ्रमता है, वो क्या उसे प्रकाशित करना चाहिये? आपने 'बाँसा' छाप कर मुझे मानो कठिनाई कर दिया है। उसी तरह समाचारसिरी भी मानो उसे छापकर मुझे कठिनाई किया है। अगर उसीको बिना किसी भी नामसे छपा कर दें कि मेरी रायके बगैर कुछ भी न छापें। आवश्यक होनेपर मैं कहानीकी बहुत भिन्न लच्छा हूँ—आपकी पत्रिका तो नहीं-ही है। उस लच्छाकी सिगुनी-बोगुनी पत्रिकाको बरतते ही भर दे लच्छा हूँ। इसके अन्तर्गत मेरे किए एक सुग्रीव और है। कहानीके अन्तर्गत सभी प्रकारके विवरों पर निबन्ध भिन्न लच्छा हूँ। अगर आपको कस्य हो तो भिन्न। कोई भी निबन्ध हो मैं तैयार हूँ। 'रामकी सुमति' कई बारमें आपको वा एक बारमें, मुझे भिन्न। वह तो बरतते किए और भिन्नको आवश्यकता नहीं होती।

'वरिष्ठान' प्रायः समाचारपर है। पर प्रायःकाकाको छोड़कर रातको मैं नहीं भिन्न पाछ। रातको मैं केवल पढ़ता हूँ।

एक बात और। आप 'बमुना' में प्रकाशनार्थ ठपपास, कहानी और निबन्ध आपनेके पहले कुछ एक बार भिन्न ले, तो बड़ा अच्छा हो। यही समझिये कि भेजके भिन्न भिन्न बीबीको छाँट है, उन्हें इस समय अर्थात् महीनेपर पहिले बार मुझे भेज दें, तो मैं बीबीको छाँट दिवा करूँ। आपकी 'बमुना' बहुत अच्छी नहीं हुई है। अन्तिम कहानी अच्छी नहीं बनी है। हाँ इससे आपका लक्ष्य पढ़ जायेगा (शक-टिकट), लेकिन पत्रिका अच्छी हो उठेगी। इधरते बापस करनेका लक्ष्य मैं दूँगा। लेकिन निम्नोंको भेज देनेपर मैं कुछ देस हूँ, ऐसी

इच्छा होती है। पहले ही कह चुका हूँ मैं केवल कहानियों ही नहीं लिखता, सब तरहका मिल सकता हूँ। इस कविता नहीं लिख पाता। अच्छा आप लैरीन बाबू के बरिष्ठ या ठपीन सुरेश गिरीनसे कहकर निष्पन्नादेवीकी रचना— कविता लेनेकी चेष्टा क्यों नहीं करते? उनके बड़े भारी विभूतिको घायर आप भी पहिचानते हैं। उनको लिखनेपर निष्पन्नासे निष्पन्न अच्छा कविता तो मिल ही सकती है। बहुतोंसे उनकी कविता और निबन्ध अच्छे होते हैं।

मुझे लिखना उपधार हो लकेगा, अन्त्य ही करूँगा। बचन दिया है उसके अनुसार काम भी करूँगा। साहित्यके अन्दर लिखनी भी नीकता क्यों न प्रकाश करे, इसर अब भी वह नहीं आई है। इसके सिवा वह मेरा चेष्टा नहीं है। मैं देखकर लेनाक नहीं हूँ। और कभी होना भी नहीं चाहता।

मैं क्या मजरीक होता, तो आपको सुमीठा हो सकता था। लेकिन इस देशको मैं घायर किसी तरह नहीं छोड़ लूँगा। मैं मरेमैं हूँ। सामान्यतः मुद्रिकमें नहीं जाना चाहता, और जाऊँगा भी नहीं। अपनी बात यहीतक।

अगले बरपते यदि आप पत्रिकाको कुछ बड़ी कर लें, कुछ मूल बढ़ा कर, तो चेष्टा करें। प्रत्येक अंकमें पहलेके कायक चीजें रखी हस स्पष्ट कर दें। इसी-विषय कहता हूँ कि कहानियोंको एक ही अंकमें छापना अच्छा होता है। क्या कुछ छोटी उठाकर भी उसमें बहुत-कुछ विज्ञापन कैदा होगा।

उपेनेने मुझे कई बार लिखा कि वह 'अमरनाथ' मेज रहा है। लेकिन अभीतक नहीं मिल्य। शायद उसे नहीं मिल रहा है। अगर आप 'अमरनाथ'को छापना चाहें तो मैं उसे नवे छिरेले लिख दूँगा। मनाजीपुरके लोटेनके मुँहसे मैंने सुन लिया है कि कैसी चीज है। मुझे कुछ-कुछ पाद भी है। अतएव नवे छिरेले लिख देना मुद्रिक नहीं है। अगर आपको इस तरहकी नई रचनाएँ चाहिये तो मुझे लिख करें।—अरुणभट्ट बहोपाय्या

दंगून १२-२-१३

मिप कबीराबू अभी-अभी आपका पत्र मिला। पहले बात—'बंगवासी'में ओदपन आदि निकाककर निरर्थक किशुलकगी य करें। आप क्या भी न

भरवाये। आपकी पत्रिकामें अगर अच्छी चीज रहती है तो मास हो या कुछ दिनोंके बाद हो यह बात अपने आप प्रचारित हो जायेगी। कोई रोक नहीं सकेगा। आपका कोई डर नहीं। प्रचार करके प्राइड हट्टा करना अज्ञान केरुन बयबा करवाव करनेसे कहा अच्छा है।

दूसरी बात—'यमकी स्मृति' को छोटे दायरेमें एक ही बारमें अपना अच्छा होगा। इस तरहकी छोटी कृतिनिर्माण को कमया अपना अच्छा नहीं होता। जो कुछ भी हो, जब नहीं हुआ तो उसकी आलोचना बुरा है। मैं दो दिनोंके अंदर ही एक कहानी और भेजूंगा। मेरी रायमें 'यमकी स्मृति'से वह अच्छी होगी पर दुसरी बात यह है कि प्राचा उठी तरह बड़ी हो गई है। बड़ी कोटिध करनेपर भी छोटी नहीं हो सकी। अभिप्रेतमें चेष्टा कर देखूंगा कि क्या होता है।

तीसरी बात—'अग्रनाथ'को लेकर शायद कुछ बल्लेबा है। इसीलिए कहा है कि उसके कोई फलदा नहीं। 'चरित्रहीन प्रकाशित किया जा सकेगा। हों उसके लिए पत्रिका कुछ बड़ी करनी चाहिये लेकिन मूल्य कितना होगा और कबसे बढ़ावेंगे वह किसी। मूल्य बढ़ाये बिना पत्रिका बढ़ी करके परका आदा गीका करना ठीक नहीं होगा।

चौथी बात—समाजवादिने अनजन न करें यही कहा है। उनकी सुधामर करनेके लिए नहीं कहा। फणीशानु, आपकी दुकानका मास अमर लख है तो व्याज हो वा बार दिन बाद करीबवार बसा होंगे ही। मास अच्छा नहीं होने पर हजार कोटिध करनेपर भी दुकान नहीं चलेगी। दो-चार दिनमें हो वा महीनमें, दिवाचन पिट ही जायेगा।

मेरे कल्पनकी छत्र-छद्म रचनाओंको आपकर मुझे कितना अस्मित दिवा वा रहा है और मेरे साथ कितना अन्धाय किया जा रहा है इसे मैं तिलकर व्यक्त नहीं कर सकता। समाजवादिने समस्तवार होनेपर भी इस तरहकी रचना केस आप ही यह अचरजकी बात है।

पाँचवीं बात—छोटीन बाबूसे आपका मेक-बोका होता है। उन्होंने क्या मेरी 'दीदी'की आलोचना देखी है। शायद लख गुस्ता हुए होंगे न ! लेकिन मेरा रोप क्या ! जिन्होंने किया है वही जिम्मेदार हैं। इसके अन्धवा इन रचनाओंको उन्होंने छोटे दायरेमें आप है न !

छठी बात—मेरी यह कहानी (जिसे मैं दो-एक दिनमें ही भेजूँगा) किस महीनेमें छापगे ? शीत महीनेमें 'रामची सुमति' लख होगी । अतएव उस महीनेमें नहीं वैशाखमें व । लेकिन जिस महीनेमें भी व होवे शरत्में छापनेपर जगह कम होगी । वद्यपि प्राइमोंको पढ़नेकी बीज अधिक मिलेगी ।

आठवीं बात—वैशाखसे पत्रिका तर्जोममुन्दर हानी चाहिये । पित्रके पीछे काफी सजा बरबाद नहीं करके, उन बच्चोंको किसी और तरीकेसे पत्रिकामें लगाया जा सके, तो अच्छा होगा । हाँ मैं नहीं जानता कि प्राइम किस चाहते हैं या नहीं । अगर फैशन नहीं है तो निवृत्त ही देना होगा । अथ मुझे निवृत्त, कहानी आदिके चुनावमें जरा सा स्थान दे, तो अच्छा हो । मैं देख-सुन किया करूँ । मुम्बहिनेमें आकर वा नाम देलकर कूड़ा-करकट देना मुय है ।

आठवीं बात—झीकटी निवृत्त देवी अगर कृपा करके अपनी रचना आपको देती हैं तो अवश्य ही अच्छी बात है । उनकी कविता किशनकी शक्ति अपूर्व है । श्रीमती अनुष्ठा देवीकी रचना पाना शायद मुश्याम्ब है । वह 'म्यस्टी' में लिखती हैं । आपके यहाँ मिलगी कि नहीं यह कहा नहा जा सकता । किशने-पर भी शायद आक मीह लिखाइकर देला-लेला मिलेगी । वह सब बड़ी ब्रह्म-कार्य हैं । इनको शायद यमुना देवी छठी पत्रिकामें किशनकी प्रशंस ही नहीं होगी । पर जरा काशिश कर देखें । मिला जाय तो अच्छा ही है और न मिले तो भी अच्छा है । मेरे तीन नाम हैं—

आकाशना निवृत्त हज्जारी—अनिका देवी

छेठी कहानिका—शरत्-पञ्चायती

बड़ी कहानिका—अनुष्ठा

सब-कुछ एक ही नामसे देनेपर लोग समझेंगे कि इनके पास इस आदमीके लिखा और कोई नहीं है ।

यहाँ मेरे एक मित्र हैं उनका नाम है प्रफुल्ल अहिरी बी ए । अच्छे शायनिक हैं । निवृत्त बहुत अच्छा लिखते हैं । हाँ नाम नहीं है, क्योंकि किसी मासिक पत्रिकाके लेखक नहीं है । मैंने इनसे अनुग्रह किया है आपकी 'यमुना'में किशनके लिए । मिला तो मेरा वृत्ता ।

अनुष्ठा यह है कि 'यमुना' का आकार छोटा है । इसमें अधिक प्रकाश

नहीं चम सकता, राम भी कम है। अचानक राम बतानेकी चेष्टा करतक सफल होगी वह नहीं कहा जा सकता। अगर निताश ही सम्भव न हो तो कुछ दिनोंके बाद क्लार महीनेसे ग्राहकोंका मत लेकर और यह सिद्ध करके कि अधिक राम देकर वे घाटेमें नहीं रहेंगे मूल्य और आकारमें क्या वृद्धि नहीं की जा सकती ? आप खुद बहुत दीखे जाइमी हैं। लेकिन ऐसा करनेसे नहीं चलेगा। आपने सब और पृथग कुछ नहीं करनेका फैसला किया है, तो इसी बीचको जब विशेष भ्रष्टाकी नजरोंसे देखनेकी चेष्टा कर और जिसे 'सांसारिक बुद्धि' कहते हैं उसकी भी आशेचना न करें। 'प्रवासी' आदि किसी सम्मेलनकी छोटी पत्रिकाएँ सब कितनी बड़ी हो गई हैं। आपने मुझे पुरुष-सैलकोंकी आकाशचना किन्नेको कहा है। लेकिन मेरे पास बंगला पुस्तकें नहीं हैं। मासिक पत्रिका एक भी नहीं छेला। मुझे क्यों क्या मिलेगा कि आकाशचना किन्ई। किन्नेसे लोगोंकी दृष्टि सम्भव ही आकर्षित होती है और एक बहस किन्नेका ठकान हो जाता है। मैं वह जानता हूँ। अगर बड़ी होता है तो भी चिन्ताकी कोई बात नहीं। मेरी आकाशचनानामें अगर गम्भीर एतरी है और अगर उसे कोई सिद्ध कर सके (कर सकना यद्यपि कठिन है), तो वह भी अच्छी बात है।

यहाँ मुझे एक बात और कहानी है। मेरी किताबें-पुस्तकेंमें कुछ छपे हो चुकी हैं। सबकेका पूरा बल किसी दिन आपके लिए और किसी दिन 'चरित्रहीन' के लिए नष्ट हो रहा है। हाँ, पढ़नेको रात मिलती है। लेकिन नोट करना इत्यादि नहीं हो पा रहा है। कई दिनोंसे एक और बात सोच रहा हूँ। कभी-कभी इच्छा होती है कि हर्बर्ट स्पेंसरके पूरे सम्भववादात्मक दर्शन (Synthetic Philosophy) की एक बंगला समाकाशचना—नहीं आकाशचना—और यूरोपके अन्धान्ध दार्शनिक जो स्पेंसरके अनु-मित्र हैं उनकी रचनाओंपर एक बड़ा धारावाहिक निबन्ध किन्ई। हमारे देशकी पत्रिकाओंमें केवल अपने साक्ष्य और वेदान्त, ईश और अद्वैतके अन्तारा और किसी तरहकी आकाशचना नहीं रहती। इसीलिए बीच-बीचमें वह इच्छा होती है। क्या करूँ, बतलाइये ? अगर आपकी पत्रिकामें स्थान न हो (होना सम्भव नहीं) तो इस तरहकी कोई पत्रिका बतला सकते हैं जो छाप सकती है।

आप मुझे बराबर बिट्टी दिखा करे। यहाँ मिलनेसे मुझमें मानों इच्छा नहीं रह जाती। इसे भी एक काम समझें। रचनार्थ रचिहरी करके ही भेजिए। सर्व आप क्यों देंगे। मेरी ऐसी बुरी बधा नहीं है कि इसके लिए सर्व देना पड़े। ये बातें फिर न कहें।

आधीबाद देता हूँ आपकी दिनोंदिन जीवृद्धि हो—बही मेरा पारितोषिक हो। 'चन्द्रनाथ' अब न मोंगे। अगर आवश्यकता हुई तो मैं फिर लिख दूँगा। यह रचना अच्छी छोड़कर बुरी न होगी।

मेरे तीन तरहके नामोंके बानेमे आपकी राय है। मेरा क्या है, इससे सुझाया होगा। एक नामसे अधिक किम्बत्ता अच्छा नहीं। क्यों?

उन्मत्त क्या कहता है। यह तो बिट्टी-पत्री मिलनेका नहीं। उसके छनेसे बहुत सुझाया था, नहीं छनेसे काकी पेशानी होती है। उस व्यक्तिका आपके प्रति अत्यधिक स्नेह था। उनसे काम करा तक तो देखते बाब न आवे।

जो कुछ भी हो और कैसा था हो, परचर्च नहीं और चिन्तित न हों। मैं आपका छोड़कर कहीं जाऊँगा वा किसी ओपरे जानेकी चेष्टा करूँगा इस तरह की बात कभी मनमें भी न आवे। 'मेरा सब कुछ ही होयोंसे मर नहीं है।

आप पहले इस विषयमें मुझे सतक करनेके लिए पत्रमें लिखते थे कि दूसरी पत्रिकावाले मुझसे अनुरोध करेंगे। उसे ही करें, सैराव करते शुरू होती है (Charity begins at home), सब है न। क्या कसटी जमाव दें। मेरा आधीबाद हों। इति।

—हारतृपन्ना चन्द्र०

[वि० १९१९]

प्रिय फकीरान्, आपके निबन्ध वापिस मेरे हैं। दोनों निबन्ध बुरे नहीं हैं, दिने का लकटे हैं। चाहुपर किन्हा निबन्ध अच्छा है।

'चन्द्रनाथ'को लेकर बड़ी गड़बड़ हो रही है। अबमाने और हाथमें पावे बगैर विवाहन आदि देना परछे शिकी मायानी है। वे लारा 'चन्द्रनाथ' नहीं देंगे। उसके लिए बेकार चेष्टा न करें। पर कुछ-कुछ गकक करके मेरेबने। मेरी लम्बिक भी इच्छा नहीं है कि मेरी पुरानी रचनार्थ, ज्योंकी त्यों प्रकाशित हों।

बहुत गठियों हैं। उन्हें सुधारनेका मौका मिले तो छप सकती हैं, अन्यथा हरागिर नहीं। एक 'काशीनाथ'को केहर में कापी कबित्त हुआ है। छ-मिश्रोवे फिर इस छन्दकी छाना मिले, यह मैं यहीं चाहता। उन्होंने अवश्य ही संग-कामना की है। लेकिन मेरा मत तो यही आने बदल गया है। 'चन्द्रनाथ'को प्यार रहते। 'चरित्रहीन'को खेद महीनेसे घुस कर और 'चन्द्रनाथ' बैतालसे घुस हो गया हो (हाँ उक्त हास्यमे वृत्ता पाठ नहीं) तो मुझे बाकी हितोक्त परिवर्तन-परिवर्तन इत्यादि करना ही होगा। बैतालमें कितना छपा है देल छेने-पर मुझे बाकी हितोक्त न मिल तो भी थोड़ा-थोड़ा करके मिल ईगा। अगर बैतालमें न छपा हो तो 'चरित्रहीन' छेगा।

मैं 'चरित्रहीन'के लिए बहुतेरी चिट्ठियाँ पा रहा हूँ। कोई बपकेका जेब, कोई सम्मानका काम कोई बोली ही कोई मित्रताका अनुरोध भी कर रहे हैं। मुझे कुछ भी नहीं चाहिये। आपसे कहा है कि आपका कितने संग-होमा बही करेगा। मैं बात नहीं करकता।

अप छपा कर इस पते पर पत्रसुन चौक और बैतालकी 'बमुना' मेरे—
श्री प्रमथनाथ भट्टाचार्य, १९, युगलकिशोरदास सेम बसकता।

ये जग अर्थात् गुप्तास बाजूके पुत्र अपनी नई पत्रिकामें मेरी रचनाओंके लिए कितने चेष्टा कर रहे हैं। हाँ मेरे प्रियतम मित्र प्रमथकी खातिर। लेकिन वह बात मेरी है। जो कुछ भी हो पत्रसुन चौककी 'बमुना' उनका दें। उन्होंने और उनके दलने में 'काशीनाथ'के सम्प्रत्यमे कुछ गुप्त समालोचना की है। और एक बात है कि 'बमुना' का लोककर मैं और किसी पत्रिकामें निबन्धित रूपसे नहीं लिखूँगा। इससे भी एक काम बनेगा। मेरी रचनाओंकी अन्दरेचना करनेकी हिम्मत उन्हें भी नहीं होगी। मैं मूर्ख नहीं हूँ, इस बातकी प्रमथ जानता है।

निराशाकी अपने दलमें लीकनेकी चेष्टा करना। वह सबमुप ही अन्ध मिलती है। और बाजारमें नाम भी है। बहुधा और अधिकारमें मुझने उनकी रचनाएँ बाणी होती हैं—येभी मेरी बारणा है। इस बीचमें 'मानसी'के भीमुर चकीर बापूने अगर मुत्ताकात हो तो कई कि उनका पत्र मिल और छीम ही उत्तर दूँगा। मुझे भी शुभार है। इसीलिए पत्र नहीं दे पा रहा हूँ—छीम दूँगा।

क्या आप एक बात कहना सकते हैं ? और कितने दिनोंतक 'साहित्य' पत्रिकामें मेरा साह्य होता रहेगा ? लोग धारद सोचने कि मुझमें लिखनेकी समझा 'काशीनाथ' से अधिक नहीं है । इससे नाम शिगड़ता है । उपीन बेकारको धारद इस बातका कयाक भी नहीं है । फिर भी उसने मेरी अन्तरिक हित-कामनाके लिए ही ऐसा किया है, इसीलिए कितनी तरह तरह किया । और दूसरा चारा नहीं । पर पूछता हूँ क्या उनके पास उस तरहकी कहानियाँ और हैं ? अगर हैं तो देखता हूँ मुसीबतमें पहुँचा । आपसे एक बात और कह दूँ । उस दिन गिरिजकी चिट्ठी मिली । 'चन्द्रनाथ'का लेकर उन लोगोंसे उपीनको कहा मुनी हो गई है । वे लोग वर्यापि आपके बिना नहीं है तथापि इस बटनासे और 'काशीनाथ'के 'साहित्य'में प्रकाश होनेके कारण वे लोग 'चन्द्रनाथ' देनेके लिए तैयार नहीं । वे लोग मेरी रचनाओंको बहुत चाहते हैं । उन्हें हर कमा रहा है कि कहीं का न आव और कहीं किसी दूसरी पत्रिकावालेके हाथोंम न पहुँच जाय, इसीलिए सुरेन्द्रने बोझ-बोझ हिसाब नकक करके मेझनेका हयाद किया है । अगर मैलाकमें 'चन्द्रनाथ' छप गया है, तो मुझे चिट्ठीसे या तारसे 'हाँ-ना' लिख में । तब मैं सुरेन्द्रसे एक बार फिर समुपेय कर देखूँगा । वह कहकर अनुमोद करूँगा कि दूसरा चारा नहीं है, देना ही होगा । अगर स्या नहीं है तो अच्छा ही है क्योंकि कि तब 'चरीनहीन' छप सकेगा ।

मुझे कहानियाँ और निरुक्त में । बाकी बाँच आप ही देख दें । मैली मैली कहानियाँ कमसे कम मेरा हाथ रहते न छूयें नही मेरा अभिप्राय है ।

बहुत जल्दीमें चिट्ठी लिख रहा हूँ (कामके बीच ही) इसीलिए लारी बातें गहपहते नहीं छाब पा रहा हूँ । लेकिन अब कुछ लिख रहा हूँ उसे बीच समझें ।

हिन्दू बाबूको लगावक बनाकर बड़ी राज-बजके साथ हरिदास बाबू पत्रिका निकाल रहे हैं । अच्छी बात है । वे अपना दोगे अठपन रचनायें भी अच्छी मिलेंगी । इसके अलावा बहोंकी मदद करनेके लिए समी तैयार रहते हैं । यही संसारकी रीति है । इनके लिए साधने-बिचारनेकी आवश्यकता नहीं है ।

उठके लिए अब कुछ मेझना है उसे मैलाकके पहले इस्तेके अन्दर ही मेझ दूँगा । केवल 'चन्द्रनाथ'के बारेमें चिन्तित रहा । वह मैली कहानी है । टीकी

कैसी है, जाने बगैर छापना उचित नहीं इस बातका जर्र कम था है। जो कुछ भी हो बहुत कम ही इस विषयमें सूचना पानेकी आशामें हूँ।

तरीयत ठीक नहीं है। कल रातसे ही जुत्ता-सा है। बड़े न तभी अच्छा है। आपकी तरीयत कैसी है? जुत्ता ठीक हुआ? इति।

आप जोगीकी छेरका—छात्र

१४ जोमर पोवातंग—ठाठन स्त्री,

१५, १६, १७

प्रिय पत्नीबाबू, आपका पत्र मिला और प्रेषित मासिकपत्र अर्थात् 'प्रवासी', 'मानसी' 'मराठी' 'साहित्य' इत्यादि सभी मिले। 'अन्वयाव'में जो कुछ परिवर्तन उचित समझा किन्ना और मसिम्में भी ऐसा ही करूँगा। कहानीके लीरपर 'अन्वयाव' बहुत मधुर कहानी है लेकिन अतिरेकसे पूर्ण है। कथकपन अथवा नौबतानोमें इस तरहकी रचना सामाजिक होनेके कारण ही धायर ऐसा हुआ है। जो कुछ भी हो कम कम हाथमें आ गया है, वो इसे अच्छा उपन्यास बना डालना ही उचित है। कमसे कम इना बढ जाना ही सम्भव है। प्रतिमास बीच पूरा होनेसे करके पक्ष समाप्त होगा कि नहीं इसमें लम्बेह है। इस कहान की विशेषता यह है कि किसी प्रकारकी अनैतिकतासे इसका सम्बन्ध नहीं। सभी पक्ष लगेगे। 'चरित्रहीन' कथकके लीरपर और चरित्र निर्माणके लीरपर अवश्य ही अच्छा है। लेकिन इस तरहका नहीं। 'चरित्रहीन'के स्मि प्रमथ कमादार छणावा कर रहा था। लेकिन आस्तिरके तगादे इस तरहके हो गए थे कि आजगमकी मित्रता अब जाय कि तब। इसी तरहसे ठलके पढ़नेके स्मि 'चरित्रहीन' भेज दिया है। हाँ यह में नहीं जानता कि ठलके मनके माय क्या है। लेकिन अपने मनके मायीको बसे ताफ-ताफ किल दिया है। ठलका अभाव अभीतक नहीं मिला है। मेरी उम्र हो गई है। इस उम्रमें जो कुछ बनता है उसे मशीनके अनुसार नष्ट नहीं करता। आप मेरे बारेमें स्वयं ही क्यों चिन्तित होते हैं? 'पसुना'की उन्नतिकी ओर मेरा सबसे अधिक ध्यान है, इसके बाद और कुछ। 'चरित्रहीन' बही जाया किल पड़ा है। क्या समय पर

भी नहीं बनता । जब समाप्त होगा यह भी नहीं बता सकता । 'बम्बनाब' जिसमें अन्ध बनकर इस वर्ष प्रकाशित हो, इसकी चर्चा सबसे आवश्यक है । इसके बाद अर्वाक्ष जगसे वर्पते आकार और भी बढ़ा देना होगा । इस वर्ष माहक कितने हैं ? पिछले सालके कम या अधिक, यह कितने । बाहर में दुनयी पत्रिकाओंमें जिसकर नामको अधिक प्रचारित कर सकता तो 'यमुना'का उपकारके बिना अपकार नहीं हो सकता । लेकिन बीमारीके कारण जिस ही नहीं पाया और बढ़ होगा भी नहीं । कन्दबाबी करनेसे नहीं समेता पचीबाबू, घान्त होकर विरपात रक्तकर आगे बढ़ना होगा । मैं बराबर आपकी काममें लग्य रहूँगा । लेकिन मेरी शक्ति बहुत ही कम हो गई है परिश्रम नहीं कर सकता । एक आलोचना और जित्त रहा हूँ दो-तीन दिनों ही समाप्त होगी, कलेन्द्र ठाकुरके विरुद्ध । (छावर करा अधिक बढ़ी हो गई है ।) कास्मूनके 'साहित्य' में उन्होंने उड़ीसाकी लैर आशिके सम्बन्धमें एक निबन्ध लिखा था, वह झुठले आशिरतक यकृत है । पुगतत्त्वके बारेमें (माम कयनेके लिए) ठक-झुठक नहीं लिखना चाहिये मेरी आलोचनाका बही उद्देश्य है । नहीं जानता कलेन्द्र ठाकुरले 'यमुना'का सम्बन्ध कैसा है । उचित समझे तो छपें, नहीं तो 'साहित्य' को दें । नहीं वह कहानी आन भी नहीं मिली । निरुपमा देवीकी कोई रचना मिली क्या ? उन्हें किसी बीजकी जिम्मेदारी है उन्हें तो बहुत अच्छा हो । हँ, छोटीन बाबू अगर मेरी अनुगतिमें मेरा मार के हैं, तो अच्छा ही हो । छावर निरुपमा भी बहुत-सा मग के सकती हैं । छुरेन विधीन उपीन भी । पर वे लोग निबन्ध जित्त उन्हें कि नहीं, वह नहीं जानता । निरुपमा जिम्मेदेके लिए आदमी अगर करा पढ़ा सिखा हो तो अच्छा होता है क्योंकि हमले मनको एक मित्रता है । कितना-कहानी अगर वे कितने तो मैं कैसा निरुपमा में ही पढ़ा रहूँ । कहानी लिखना बैसा आता भी नहीं और लिखना उठना अच्छा भी नहीं करता । उग्र हो गई है अब करा विचारपूर्ण कुछ लिखनेकी पाप होती है । मेरा कहानी लिखना बहुत कुछ कर्बवस्ती लिखना है । और-अवदंतीके काम बैसा मुकपम मही होता । प्रमथकी कठिन चिट्ठी छाप मेक रहा हूँ । मेरा माम 'अनिमादेवी' है वह कोई न बनने पावे । मैं ही हूँ रतक अनुमान क्याकर प्रमथने ही, एक, पणते कहा है । उन्हें कभी चिट्ठी लिखना ।

आपकी पत्रिकाको मैं अपनी ही पत्रिका समझता हूँ। इसको छति पहुँचा कर कोई काम नहीं करूँगा। केवल प्रमाणको लेकर ही मैं संकटमें पड़ा हूँ। वह भी परिचित ही नहीं परम बन्धु, सदाका अति स्नेहका पात्र है। इसीसे क्या चिन्तित होता हूँ नहीं तो क्या। प्रमाणकी बिछीसे बहुत-सी बातें समझ सकेंगे। इस समय ज्वर १२५ है। ज्वर रगूनमें नहीं होता है, लेकिन मुझे ज्वर होता है घुसरे कार्योंसे—शब्द हृदयसे सम्प्रेषित है। इस देशका साधारण स्वास्थ्य अच्छा ही है। लेकिन मुझे बरबाद नहीं हो रहा है। इति।

आपका—धरत

२८ मार्च १९१३

प्रिय बन्धीबाबू, आमी-आमी आपका रजिस्ट्री पेंकेट मिला। अगर रजिस्ट्री करते हैं तो घरके पतेपर क्यों भेजते हैं। आपका पता ही ठीक है क्योंकि आपका जब घरपर आता है तो मैं जानियेमें रहता हूँ। अगर रीट-रजिस्ट्रीमें भेजते हैं तो घरके पतेपर भेजें। दोनों निबन्धीको बखतर चीज भेज दूँगा। बैतालके लिए बड़ी राइबड़ी दिखाइ पड़ रही है। जो कुछ भी हो इस महीनेको इस तरह बच्यो—(१) पयनिर्देश (२) नारीका मूल्य और सम्मान्य निबन्ध आदि। 'बन्धुनाय' न छापें। क्योंकि अगर छपनेके ही योग्य हो तो प्रमश छपना होना। बैठ महीनेके 'वरिषहीन' वा 'बन्धुनाय' और भी वह और अच्छे कम प्रमश छापें। ईर्लू, सुनेन गिरीनको क्या बनाव देता है। बैतालके लिए कोई खास सूत निकलती नजर नहीं आती। हाँ आपका मेरे ऊपर राजा सर्वप्रथम है इसमें सन्देह नहीं। मैं बहुतक बीबित हूँ आपको अधिक बख नहीं पाना पड़ेगा। लेकिन भाई मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं है। इसके अन्धका किला-कछनी किलनेकी प्रार्थि नहीं होती। मानीं मुलोबतमें पड़कर मुझे कहानी लिखनी पड़ती है। फिर भी किल्ला—कमसे कम आपके लिए। सबमुन ही इस बीच कहानी लिख भेजनेके लिए बहुत-से अनुरोध आये हैं। लेकिन मैं प्रायः निरुत्तर हूँ। उसनी कहानियाँ लिखने बेई तो मेरा किलना-पढ़ना बन्द हो जाय। मैं प्रतिदिन दो पन्नेके अधिक कमो नहीं लिखता। इस-बारह पन्ने पढ़ता हूँ। वह छपे मेरी

जानी है। वह मैं इतना नहीं करूँगा। जो कुछ भी हो आपका वैसा ही रहना चाहता हूँ।
 ठीक तरह निकल आए। इसके बाद बाबा ने मुझे देखा। देखिये,
 पहले आपके माहक क्या करते हैं। उसके बाद समझकर काम करना होगा।
 मेरा बड़ा भाव्य है कि आपकी माता भी मेरी दोस्त होती हैं। उन्हें कह दें,
 मैं अच्छी तरह हूँ। आपका करता हूँ, सभी कुशल हैं। वैसा ही बनकर अगर
 उठना अच्छा नहीं होता, तो पत्रिका में क्या बातें बातें कर दें कि मेरी
 एक कहानी प्रकाश प्रकाश होगी।

(मेरा पत्र आप लिखते-लिखते क्यों दे देते हैं ?) मुझे बहुतों को बड़ी पत्रिकाओं में लिखने के लिए करते हैं, क्योंकि उनके नाम अच्छे होय। आपकी पत्रिका छोटी है, किन्तु आपकी पढ़ते हैं। हाँ मैं भी हूँ। बातें स्वीकार करता हूँ। आप-मुक्तानका विचार किया था, तो उनकी बात सच है और सच रहता सभी वेदा करते हैं। लेकिन मुझमें कुछ आत्म-संशय भी है और कुछ आत्म-निर्भरता भी है। इसीलिए जब जिस रास्ते को मुझे लेना समझते हैं मैं उसे मुझे लेना समझने पर भी नहीं मेरा एकमात्र अवलम्बन नहीं। अगर मैं चेष्टा करके अपनी पत्रिका को बढ़ा कर सकूँ, तो उसीमें काम समझता हूँ। इसके अलावा आपको बहुत-कुछ आशाएँ दिला है अब सीधे ही तरह उसे अम्बवा नहीं करूँगा। मुझमें बहुत-से दोष हैं, पर मैं लोकोत्तरे जाने दोषों से ही भय नहीं हूँ। मैं बहुत अपना बातें अधिक करने की चेष्टा करता हूँ। आप चिन्तित न हों। मेरी वह बिना किसी को पढ़ने के लिए न है। अगर वैसा ही दिखाने पर कि माहक पत्र नहीं बिके बल्कि खड़े हैं तो आपा करनी चाहिये कि आगे और भी बढ़ेंगे। 'पत्र-निर्देश' पूरा एक ही बार में छपे। प्रकाश न छपे। एक बात और। नारीवाले लेखों में उपार्थों की बहुत गलतियाँ हैं। एक अगर अनुष्णा के बदले आमोदिनी का नाम छप गया है। 'भूषण के संग मृगिका' इत्यादि अनुष्णा का है, आमोदिनी का नहीं। निष्कर्षों को समुद्र रसकर उसकी अधिक रचनाएँ पाने की चेष्टा करें। वह सब कुछ ही अच्छा मिलती है। वह मेरी छोटी बहन भी है और छात्र भी।

—भारत

(अप्रैल १९११)

मित्र फजीबाबू, मेरी तरफसे आपको एक काम करना होगा। मैं प्रपञ्चित मासिक पत्रिकाओंके बारेमें एक प्रकारसे कुछ भी नहीं जान पाता, इसलिये आश्वेचना नहीं किया पाता। मैं उठना थकिया आकाशचक्र नहीं हूँ। अतएव इस दिशामें कुछ चेष्टा करूँगा—अथर्व 'वसुना'कीके लिये। इसलिये आपसे अनुरोध है कि मेरे लिये सो-तीन मासिक पत्रिकाएँ जो जो वे वेङ्गनेकी चेष्टा करें। मैं खुश हूँगा। 'प्रवासी', 'साहित्य', 'मानसी', 'भारती'। रचनाएँ देखर पत्रिकाओंको दुस्तरमें सेनेकी इच्छा नहीं। और उठनी रचनाएँ पाऊँगी की करें ? हों हो-एक पत्रिकाएँ स्वातिरवाणीमें मिल रही हैं। लेकिन इस स्वातिरवाणीकी आवश्यकता नहीं। वसिष्ठ कम्प्लिट हो रहा हूँ कि वे श्रेष्ठ अपनी पत्रिका में रहे हैं और परिमर्तनमें मैं कुछ नहीं दे पा रहा हूँ। मुँह खोलकर इसे व्युत्पन्न करनेमें भी श्रम हो रही है। इन बातोंको खोलकर ही आपसे यह अनुरोध कर रहा हूँ। पता—१४, कोमर पोस्टाटंग स्ट्रीट। बैंगलूर के आस पास तो बहुत अच्छा हो। मेरे हृदयमें पत्रिकाएँ आती हैं। लेकिन उनमें बड़ी अनुमिषा है। आपको अनेक प्रकारके अनुरोधोंसे बीच-बीचमें तम करूँगा। मेरा स्वभाव ही ऐसा है। भूरा न मानें। आप उम्रमें मुझसे बहुत छोटे हैं। छोटा माई-सा ही समझता हूँ। इसलिये बेकार कहनेके लिये कहता हूँ। बूढ़ी हाकते बिड़ी और रचनाएँ मेरीया : इति।

—शरत्

१४ कोमर पोस्टाटंग-स्ट्रीट,

बंगलूर (बैंगलूर १९११)

मित्र फजीबाबू, मिठनी हाकते 'वसुना'का कुछ दिस्सा मेरा है। अगली हाकसे कुछ दिस्सा और मेरीया। अत्यन्त पीड़ित हूँ। जेडकी 'वसुना'के लिये विशेष चिन्तित हूँ। मित्रा हरर हतना अधिक है कि कोई काम नहीं कर पा रहा हूँ। अमुकी और रेलवेमें काम होता है। बाध्य होकर काम-काज भिल्लना-पटना सब-कुछ व्यग्नित रहा है। छोटीन बाबूको मेरा आन्तरिक स्नेहाशीर्षार कर है। इस महीने तो किसी तरह पत्राएँ। जंगल होनेपर आपादके लिये कोई पत्रिका

वही रहेगी। मैं लैटीनको पिट्टी नहीं मिल सका। उन्होंने मुझे जो कुछ किया है उसे पढ़कर सबकुछ ही मुझे बड़ी खुशी हुई। मुझे निश्चय हुआ है—देखें। जिसके ऐसे मित्र हैं वह बड़ा ही महात्म्यात्मी है। 'अरिबहीन'को व्यक्तित्व व्यवस्थामें ही प्रमत्तको पढ़नेके लिए भेजा है। बार-बार भिन्न करनेके कारण मैं उसके अनुरोधकी उम्मेद नहीं कर सका। बापिल मिलनेपर बाकी हिस्सेको किर्लगा। कहानी इन महीने नहीं मिल पाईगी। क्योंकि समय नहीं है। एक आलोचना मिलनेमें हाथ लगाया था समाप्त न कर सका। समाप्त हुई तो आपके हाथोंमें पहुँचनेमें २५ तारीख हो जाएगी। अतएव इस महीनेमें काम नहीं आया। सबकुछ ही बहुत चिन्तित है। बहुतोंकी सेवा करनेपर भी नहीं किया पा रहा हूँ। अगर कोई किस सेनेवाला होता तो बोझ देता। वैसे कोई नहीं मिलता। बैतालकी बमुना सबकुछ हो अच्छी हुई है। लैटीनकी कहानी अच्छी है और निश्चय भी अच्छा है।

—धन

रंगून १४९१९२३

विक्टर, आपकी माता मेरे बारेमें पूछताछ करती हैं, मेरे लिए बड़े औमाध्यकी बात है। उनसे कह दें, मैं बिल्कुल ठीक हो गया हूँ। मेरे बारेमें पूछताछ करनेवाला संसारमें एक प्रकारसे कोई नहीं है। इसलिये अगर कोई मेरे बारेमें मन्त्र-मुक्त बनना चाहता है तो पुनः इस कृतकतासे भर जाता है। मेरे जैसे महात्म्य संसारमें बहुत ही कम हैं। 'उपकार कर रहा हूँ, पछ, मान, त्याग-त्याग कर रहा हूँ' इत्यादि बड़े-बड़े भाव मेरे हृदयमें कभी नहीं आते। कभी ये भी नहीं और आनन्द भी नहीं है। वैसे वह बड़ी बात तो नहीं है। समझ भूया हाँ हाँ तो उसके लिए धायर पहले ही सेवा करता, इतने दिनोत्कृष्ट हुए नहीं रहता। 'और एक बात छठवाँरी पञ्जीरातक सेनेमें मुझे क्या भी मिली है। एक पत्रिकामें निवसित मिलता हूँ, यही काफ़ी है। जो मेरी रचनाएँ पत्रक करता है, वह इसी पत्रिकाको पड़ेगा, वही मेरी धारणा है। इसके जन्मवा होमिओपैथीकी भाषामें इसमें पाँचा उसमें थोड़ा, कुछ समझाते कुछ ऐसे-वैसे, तर्जुमा करके, दूसरेके भाषाको सुनकर—ये सुनवाई

बन्धनमें ही मुझमें नहीं हैं। और इतना क्लिष्टने आर्क तो पढ़ना बन्द करना पड़ेगा और पढ़ना मृत्युके सिवा मैं छोड़ नहीं आऊँगा। मेरी छोटी बच्चा नियाँ बाने केसे बड़ी हो जाती हैं, यह बड़ी मुश्किलकी बात है। एक बात और। मैं कोई ठहरेस्य लेकर एक कहानी लिखता हूँ और उसके स्पष्ट हुए बिना नहीं छोड़ पाता। मैंने समझा था 'विद्योका छस्स' आपको पसन्द नहीं आवेगा। शायद आपनेमें आगा-पीछा करियेगा। इसलिये कहीं मेरे मुझहमेमें आकर, आपनी छति करके भी प्रकाशित कर दें इस आशंकासे आपको पहलेसे ही सावधान किये दे रहा था। अर्थात् विश्वस्त होना चाहिये। अगर सन्तुष्ट ही अच्छी लगी हो तो छपकर ठीक ही किया है। इससे पाठक कुछ भी क्यों न करें। 'नारीका मूस्व' अगली बार समाप्त करके कुछ और शुरू करूँगा। 'नारीका मूस्व' की बहुत सुख्याति हुई है। मैंने उस चरखे चौदह 'मूस्व' लिखना तय किया है। इस बार या तो 'प्रेमका मूस्व' या 'भ्रमबादका मूस्व' लिखूँगा। उसके बाद क्रमशः धर्मका मूस्व समाजका मूस्व आत्मका मूस्व छपका मूस्व छापका मूस्व और वैद्यन्तका मूस्व लिखूँगा। 'चरित्रहीनके चौदह-पन्द्रह अध्याय लिखे हैं। बाकी दूरी कामियोंमें वा रही कागजोंपर लिखे हैं नकल करना होगा। इसके अन्तिम कई अध्यायोंको बचार्थमें *Harad* बनाऊँगा। लोग पहले को धाई लेंगे लेकिन अन्तमें उनका मत बदलेगा ही। मैं छूटी बवाई पसन्द नहीं करता और अपना बदन छमका बगैर बात नहीं करता। इसीलिये कहता हूँ कि अन्तिम हिरता सन्तुष्ट ही अच्छा होगा। नैतिक हो वा अनैतिक अन्य अन्तिमें कोई, 'हो एक चीज है।' और इसमें आपको बदनामीका डर क्या! बदनामी होगी तो मेरी। इसके अलावा कौन कहता है कि मैं धीठाकी टीका लिख रहा हूँ? 'चरित्रहीन' इसका नाम है।—पाठकको पहलेसे ही इसका आभास दे दिया। वह मुनीतिव्यवहारिणी चरखे लिये भी नहीं है और स्तब्ध-पाठक भी नहीं है। अगर वे दास्तदायके 'रिक्लेक्शन'का एक बार भी पढ़त हैं तो 'चरित्रहीन' के विषयमें कहनेको कुछ भी नहीं खेगा। इसके अलावा वो कलार्क छोरपर, मनाविज्ञानके तीस्पर महान् पुस्तक है उसमें दुरचरित्रकी अन्तारणा होगी ही। क्या कृष्णकाशके बहीबतनामेमें नहीं है? कसबा ही लम्ब-मुठ नहीं है, देखका काम करनेकी जरूरत है। पाँच अध्यायोंको यदि बचार्थमें

मित्रता-पराया का लक्ष्य अनुशासनात्मक अत्याचार आदिके विरुद्ध स्तर ऊँचा किया जाय ता हमने बहुतकर आनन्दार्थी बात और कहा है। आज लोग ऐसे सुदृढ़ व्यक्तिकी बात न भी सुनें, लेकिन एक दिन सुनेंगे ही। 'इसी लक्ष्यको लेकर मैंने एक समय साहित्य-समा बनवाई थी। आज मेरी यह उम्मा भी नहीं है और वह शक्ति भी नहीं है।—(युगान्तर, १ मार्च, १९४६)

बंगल १० १ १९११

प्रियकर तुम्हारी मेरी हुई 'बड़ी खीरी' मिली। कुटी नहीं हुई, पर वह शास्त्र-शास्त्रकी रचना है। न समझी तो शायद अच्छा रहता।

आजकल मानिक पत्रोंमें जो छोटी कहानियाँ प्रकाशित होती हैं उनमें पन्द्रह आमाके बारेमें व्यक्त्यचना ही नहीं हो सकती। वे न तो कहानियाँ हैं और न साहित्य ही। केवल स्वादी और कमजोरी किशोरपनकी और पाठकोंमें अत्याचार। इन बार में इतनी कहानियाँ छपी हैं लेकिन एक भी अच्छी नहीं है। अविचार्य ही असंजनीय हैं। किन्तीमें उत्तम नहीं पाय नहीं केवल शर्मोंका आक्रमण, पत्रनाशोंका समावेश, और अशररस्ती Pathos सूझी बेस्याको मुकती लक्ष्यकर आर्थिको मुनाहेमें हाकनेकी चेष्टा देखनेसे मनमें एक किशूना क्लेश अपना करना होती है। इन लेखकोंकी ऐसी कहानियाँ मिलनेकी चेष्टा देख कर सबसुख ही मेरे मनमें इस तरहका एक भाव उत्पन्न होता है जो और कुछ भी नहीं न हो स्वल्प कदापि नहीं। छोटी कहानियोंकी आवश्यकता होती हुई है।

दो-एक बातें 'अरिजहीन'के सम्बन्धमें कहूँ। इसके सम्बन्धमें कौन क्या कहा है सुनते ही मुझे झिन्नता। इस पुस्तकके विषयमें आगेमें हमने प्रकारके आभ्यास है कि इस सम्बन्धमें कुछ ठीक बाराया बनाना जो कटिन है। अनैतिक (immoral) तो लोग कह ही रहे हैं। लेकिन आगेकी साहित्यमें जो कुछ शास्त्रवत् अच्छा है ठलमें इससे कहीं अधिक अनैतिक बटनाशोंकी ध्यायता की गई है। फिर भी साहित्यिकोंकी राय मुझे सुविध करना।

(युगान्तर, १ मार्च, १९४६)

[श्री हेमचन्द्रकुमार रायको लिखित]

१४ ओम्बर पोवाठवाडा ठाउन ह्यौद,
रंगून या २०-११४

मिय हेमचन्द्रबाबू बीसमें बहुत बिर्नोतक रंगूनमें नहीं था कुछ दिन पहिले
छौटनेपर आपकी थिन्नी मिली। पिछली बाकसे हो उसका जवाब देना उचित
था। लेकिन उत बात शरीरकी हालत इतनी बुरी थी कि कहीं कुछ गन्त न
मिल सके। इस आशयसे उत्तर नहीं लिखा। शुभ न मानें। शरीरके कारण
मेरे लिए सर्वथा सहाय्य भ्रष्टाचारकी रखा करना कठिन हो गया है। पर
भरोसा इस बातका है कि मैं जूरा आबसी हूँ, आप लोगोंकी कामने क्या ही
समाका पाव हूँ।

‘चरित्रहीन’ सम्भवता अगले वर्षके मध्यभागतक समाप्त होगा। वह ठीक
बात है कि सम्मान न होनेतक साधारण पाठक इस बीबको कित तरह प्रश्न
करेंगे इसका अन्वय नहीं लगाया जा सकता। अपनी रचनाओंपर आपकी
हुपा होकर सबमुख ही आनन्दित हुआ हूँ। बहुतेरे कृपा करते हैं। ली पर
मेरी रचनाएँ निरान्त साधारण किरमकी हैं। उनमें ऐसी कौन-सी विशेषता है।
पर, इत सबको ठीक रक्ता हूँ कि मनके साथ रचनाका ऐस्य बना रहे और
जो सोचता हूँ वही लिख सकूँ। यह क्या सोचेगा वह क्या करेगा उधर एक
प्रकारसे होला ही नहीं। शायद इसीलिए ही बीबमें लोगोंको अच्छा भी लगता
है—कमी नहीं भी लगता है। फिर भी कदाचित् वाञ्छितस्य करके वे लेखकोंका
अनमान नहीं करना चाहते हैं। आपकी रचनामें विशेषत्व है। मुझे बहुत अच्छी
लगती है। बहुत दिन पहिले कपीको मिल भेजा था कि वह आपकी कृपा
अधिक प्राप्त करनेकी विधिपत्र भेजा करे। वह कहा था सकता है कि बंगाली
भाषापर मेरा बिलकुल अधिकार नहीं है—बल्कि सम्भार बहुत ही थोड़ा है।
इसीलिए मेरी रचना तरह होती है—मेरे लिए कठिन मिलना ही अवश्य है।
मेरी मूलता ही मेरे कामकी दिशा हुई। अच्छा, भारतवर्षमें हरिद्वार आदि

भ्रमण-वृत्तान्तमें जो 'हिमालय' नाम का नाम था, वह क्या आप ही हैं ! इस प्रश्नका उत्तर दें ।

कभी-कभी समय मिलनेपर समाचार दिया करें । आपकी बिट्टी कहाँ रहती है, ईश्वरनेर भी वही मिली गरी कारण है कि कभीकभी फतेर भेज रहा हूँ । साधर लारी बाँटोका बचाव नहीं हो सका । छीर बहुत कमजोर कम रहा है । आज बहीतक बस—आगे पत्रों दूसरी बाँटें मिलेंगी । मुझे बहुत-सी बातें कहनी हैं ।

कभी और 'पत्रिका' को बत देखा करें । आप अगर समयपुत्र ही देखते हैं तो मेरी विन्ता आपकी हो जायगी । वह मेरी आन्तरिक बात है—मन रखनेकी बात नहीं । मन रखनेकी बात कदाचित् ही करता हूँ ।—आप स्वर्गोका अनुप्रासकी—

श्री शरत्चन्द्र चटोपाध्याय

५

[श्री हरिदास चटोपाध्यायको लिखित]

रंगून, १५-११-१५

मित्रवर, श्रीकान्तकी 'भ्रमण-कहानी' लगभग ही अपनेके पोथी है, ऐसा मैंने नहीं समझा था—अब भी नहीं समझता । पर छोटा था कहीं काँटें छाप है । बिछोड़कर ठठके प्रारम्भमें ही जो छेप थे वे सब किसी दृष्टिमें आपकी पत्रिकामें स्थान नहीं पा सकते, वह तो जानी बुझ ही बात है । पर दूसरी किसी पत्रिकामें साधर वह आपसि न ठठे, इसका भरोसा था । इसीलिए आपकी भाव्य मेधा । अगर कोई तो और मिले । और बहुत-सी बातें कहनेको हैं, पर व्यर्थ । स्तेपविदूष बहीतक । अतिरिक्त लारी बाँटें सब करी जायगी ।

मेरा नाम किसी भी हाथमें प्रकट न होने पाए । 'वह कौन ?' हैं श्रीकान्तकी आत्मकथाके कुछ सम्बन्ध तो रहेगा ही, इसके अन्वयात् वह भ्रमण-कहानी ही है, पर 'मैं' मैं नहीं हूँ । अनुकूल हाथ मिलेगा है, अनुकूलें सब कर देखा

हैं—यह तब नहीं है। 'रविशाम्बुने अपनी आत्मकथा लिखी थी, लेकिन अपनेको किस प्रकार सबसे पीछे रखनेकी सफ़र बोधा की थी। वो लिखना नहीं जानते; अर्थात् किनकी रचनाओंकी परत नहीं हुई है, वे चाहे बिना बड़े आदमी क्यों न हों, अपने बगैर उनकी कभी रचनाएँ आपनेमें निरपघातकी सीमा नहीं। वे लोग समझते हैं कि सारी बातें कहनी ही चाहिए। वो कुछ देखते हैं, सुनते हैं, वो कुछ होता है, समझते हैं सब-कुछ लोगोंको दिखाना-सुनाना चाहिए। वो विश बनाना नहीं जानते वे जिस तरहसे हायम एक्टिंग करते ही सोचते हैं कि वो कुछ दिखाई पड़ रहा है उस-कुछ बिभित कर जायें। लेकिन कबमें अनुभवसे अन्तमें समझ आते हैं कि बात ऐसी नहीं है। बहुत-सी बड़ी चीजें छोड़ देनी पड़ती हैं, बहुत-कुछ बोझोंके बोझका संवरण करना पड़ता है तब विश बनता है। बोझों या अंकन करनेसे न बोझना या न अंकन करना अत्यन्त कठिन है। बहुत आत्मसंयम करना बहुत बोझका दमन करना पड़ता है सभी सबकुछमें बोझना और अंकन करना होता है।

बाद वह तो आपको ही देखकर देने लगा। माफ़ करें—वह उस तो मेरी अपेक्षा आप ही तब अच्छी तरह जानते हैं। वो कुछ भी हो भीकान्त पढ़कर लोग किताब छी-छी करते हैं। हल्काकर मुझे लिखें। तबतक भीकान्तकी एक भी पंक्ति नहीं लिखेंगा।

मैं फिर एक कहानी लिख रहा हूँ। अर्थात् समाप्त करनेके इरादेसे लिख रहा हूँ। अच्छी ही होगी। comedy होगी, tragedy नहीं। देखें कि कितनी कसरी समाप्त होती है।

इस कहानीका भाव गोराके प्रेक्षाभूते किया गया है। अर्थात् अपने कहनेके लिए 'अनुकरण' है पर पकड़ी नहीं जा सकती। सामाजिक पारिवारिक कहानी है। मेरे मनमें बड़ा उल्लाह हुआ कि सुन्दर होगी। पर क्यासे क्या हो जायगा, कहा नहीं जा सकता।

प्रियवर,— ज्यादा है कि कई कहानी ठीक समयपर ही भेज चुकीं।
 अगर नहीं भेज सका तो एक छोटी कहानी भेज दूँगा।

रंगून ७-१९-१५

आपको असमय कहानी नहीं मेज सकता और उसे समझ करनेकी आशा में आपनेके लिए मैं नहीं कह सकता । पर चन्द्रकास्यकी कहानी स्वतंत्र है । अगर समय दें तो इस सम्बन्धमें एक बात कहूँ । सम्यक् महोदयगण कृपा कर इस कहानीका निरालोचन न करें । मुझे आशा है कि कमसे कम जो रचनाएँ प्रकाशित होती हैं और हुए हैं, यह उनसे बहुत नीचे आसन पानेके योग्य नहीं है । अनेक सामाजिक इतिहास इसके मर्मिके गर्भमें प्रच्छन्न हैं । मेरी बहुतोरी चेष्टा और बड़की बस्तु कमसे कम मित्रोंसे तो कुछ कह पानेके योग्य होगी ही । हाँ प्रारम्भ सराब है—पर यथार्थमें अन्धरी पीजका प्रारम्भ सराब होता है ऐसा दिखार भी तो पड़ता है । यही मेरी कैफियत है । क्या अबकी बार छेनेगी ? हाथकी शिथिलबटको छने अक्षरोंमें देखनेकी आशासे ही उसे मेजा है, यह बात भूमिकामें किसी हुई है ।

—आपका शरत्

५४१६ बी स्ट्रीट, रंगून

१९ २ १६

बहुत दिनोंसे आपका पत्र नहीं मिला । आशा है सब ठीक है । माह, मैं इस बार बुरी तरह मिरा हूँ । सुदूरसे प्रमथ मारकी हवा लगी कि क्या कुछ कुछ समय नहीं पा रहा हूँ । इस बार हाव्य और भी सराब है । झुनटा हूँ यह बमाफी बीमारी है । देख नहीं जोड़नेसे यह भी नहीं छोड़ती । इस लिए थोमेंसे एक घायर अनिवार्य हो रहा है । मैं कुछ नहीं जानता भगवान् ही जानते हैं । हर जगह है घायर किन्तुभीमरके लिए पंगु हो हो जाऊँगा । 'मानसिक संवत्सराके कारण कुछ भी काम करनेकी इच्छा नहीं हुई—अबपर दादाको यह कहकर 'समय बर्मेका मूल्य' पढ़नेको दें । इसकी पेपर कॉपी माग तैयार कर सका था । बाकी हिस्सा पेपर कर बादमें भेज रहा हूँ । इसके बाद जो कुछ लिखनेका विचार किया है, वह पूरे देशोंके सामाजिक नियमोंसे अपने देशके समाजकी एक गुप्तात्मक आलोचनाके विषय और कुछ भी नहीं है । इसलिए उपर किसी प्रकार व्यक्तित्व आलोचनाका

कर नहीं। नहीं जानता, इस निष्कर्षको 'भारतवर्ष'में छापनेकी उन्हीं प्राप्ति होगी या नहीं किन्तु अगर यहाँ हाँती है तो आप आपित भेज दें। मैं दूर स्थित कर एक पुस्तक तैयार कर रखूँगा और भविष्यमें इसके अधिकतम अंग काटकर छापानेकी चेष्टा करूँगा। सम्भव ही नहीं, इस समाज-सत्त्वको लेकर बहुत दिन बिताए हैं। बहुत-सी बातें किसनेके लिए लिख लक्ष्यका है। लेकिन इन बातों को क्या मज्जा मारते बैठे क्या आप यह भी निश्चय नहीं कर पाता।

अक्सर शास्त्रोंके बहुत भाष्यार्थें बँधायी थीं, लेकिन कहानी किसका सम्पूर्ण रूपसे मानसिक विस्तारपर निर्भर करता है। अगर मेरा मान्य विचारकोके लिए फूट गया है और इसे ठीक-ठीक जान जाऊँ, तो धीरे-धीरे इस सम्बन्धको सबका सब लूँगा। हो सकता है, जब इस पंगु होनेको सम्भवतः आधीरात्रि लपटियाँ और विस्फोटके साथ भी कर लूँगा। मैं इस लक्ष्मी के लक्ष्मीमें इस तरहकी कठिन बीमारी कभी सम्भव होगी, इसे कभी नहीं सोचा था; और अगर यही होता है तो शास्त्र जगत्में इसकी मुझे आवश्यकता थी। अक्षयपत्नी ईश्वरको बहुत प्यार किया है। बीजमें सबका सम्पूर्ण रूपसे मूक गया था। फिर अस्तिम का कर्म अत्यन्त बड़ी शक्ति होने जाती है तो सम्भव ही है।---

[मार्च १९२६]

आपका वचन मित्र। लेकिन आत्मिक रूपमें केवल एक अज्ञान ज्ञानके कारण उत्तर देनेमें इतनी देर हुई।

मेरी बीमारीकी बात सुनकर आपने भी डुक किया है, मैं धारद उठे कल्पना करनेकी भी हिम्मत नहीं कर सकता था। हरबते आपसीबाँध बढ़ा है कि दीर्घजीवी और विस्तृत हैं। मान्यम् आपको कोई विशेष दुःख न है। मैं चौकित हूँ। यहाँ अन्धता होनेकी आशंका नहीं। शरीरके और अंगोंको ठीक रखकर अन्तरीक्षर मुझे पंगु होनेकी ही सजा देते हैं। तो यही अन्धता है। बीज-बीजमें सोचता हूँ कि शास्त्र मेरे बचने-मिटनेकी इति हो गई है, इसीलिए वे शरीरों के लक्ष्मी कर केवल शक्ति ही काम करनेको करते हैं। लेकिन इसमें एक दोष यह है कि इसका करनेकी शक्ति भी माया होता गया है। तो इसकी किसी स्थापनाके स्थानमें रहकर ठीक कर लेना होगा।

आपने मुझे जो कुछ देना चाहा है वही मेरे लिए बख्त है। इस वरके अनुर
मर नहीं जाय, तो हो सकता है कि अपने-पैतेका बर्ज भरा हो जाय। पर
छुटताका सब तो भरा नहीं हो सकता। —मैं एक लाटकी सुधी डेकर
आऊँगा। फिर बहालका ठिकठ मिल सकेगा उसीके चले जानेकी आत्यरिक
हस्ता है। आप मुझे तीन सौ रुपये भेजें, तो भलेमें आ सकूँगा।

इस मनहूत स्थानको छोड़ देनेके बाद आपकी यह सारी अतिरिक्त आर्थिक
शक्ति अगर कुछ कम कर सकूँ तो इस एक लाटमें इसीकी सेवा करूँगा।

मैं कुछ अन्ध हूँ। सुनने कुछ कम है। कसिराभी ठेक माफिया करके देल
रहा हूँ, वह अन्ध है वा सुन। अभी पूर्णमासक अत्यन्त हो आपगा। मेरे
करोड़ों आशीर्वाद हैं। इस प्रकारका आशीर्वाद आपसे आपको बहुत कम
भोग्यने दिया है। सुझमें एकरते क्या मिलेगा, नहीं जानता। वहाँके लारे
निपम-कादल बड़े लाहबकी मनीषर हैं, जो कुछ भी मिल जाय। आप मुझे जो
कुछ भी देंगे, वही मेरे लिए बखर्चमें बख्त होगा।

[मार्च १ १९११]

कल आपके दिये तीन सौ रुपये मिले। ११ अप्रैलके पहले किसी भी
लाटमें ठिकठ नहीं मिल रहा है।

६९६, शिवाराम, बनारस सिटी

७-४-११

परम कल्याणीय, आपका पत्र मिला। यहाँ बहुत धनी पड़ रही है।
ऐसा हो गया है कि बाजारके लिए भी नहीं लगता। काकमेरबने पोल नहीं
भना। चैत्रका मनीषा है, आपा नहीं आ सकता है। उन्हें एक प्रत पाकन
करना है।

बेटी बुरी बगद है कि एक भी पैक नहीं किसी वाली। सिध्दे बार-लौब
धिनोते ब्याताार कलम डेकर बैठता हूँ और दो पन्ने जुब बैठकर उठ जाता हूँ।
ऐसा लगता है कि जब कभी लिख ही नहीं सकूँगा। जो कुछ था अब आपसे
समाप्त हो हो गया है, कौन जाने। एक बड़ी बखेदार बात है। यहाँ मनु-सिवा-

के एक नामी पण्डित हैं। वह मेरी कम-कुछकी विचार कर हैयन रहे और मैं भी हैयन रह गया। मेरे अतीत-जीवनको (जिसे आज भी कोई नहीं जानता) अक्षरशः इस तरह बतलाने को कि जगत्-से सिर नीचा हो गया। और भविष्यका जीवन तो और भी औरत। वे बारम्बार कहने लगे कि यह किसी महायोगी और नहीं तो राजगुरु किसी व्यक्ति की कुण्डली है। हाँ मैंने अपना परिचय गुप्त ही रखा था। इस आदमीकी बड़ी ख्याति है। आम्बरनी भी काफ़ी है। बाकी लोग बेठे रहे और पण्डितजी मेरी कुण्डली देखने लगे। पारिवर्तिक तो किया ही नहीं बारम्बार पूछने लगे कि वे कौन हैं और कहाँ रहते हैं। जर्मनानमें ब्रह्मपति का इतना पूर्ण संस्नान करते हैं उन्होंने पहले कभी नहीं देखा था। अच्छा भ्रातृ अगर वह सच है तो मेरे जैसे नास्तिकके सम्पत्तिमें वह कैसी विडम्बना है यह कैसा परिहास है, बतलाइये तो। आयु किन्तु ४८ या अधिकसे अधिक ५४। उन्होंने सम्प्रसक्त अतिरेकमें मृत्यु नहीं कराई, उपचारण ही नहीं कर लें। कहने लगे कि इनका अगर ४८ में मोक्ष नहीं होया है तो उसके बाद संसार त्याग करके ५१ में शरीर त्याग करेंगे। पर बड़ी बात यह है कि यह सच नहीं होगा, इसे मैं मन्वी भौति जानता हूँ। लेकिन अतीतको इस तरह अक्षरशः लय कैते बतलाने मैं समीचे बगावत इस बातको सोच रहा हूँ। क्या जानूँ छोपते-छोपते मुझमें फिर न कहीं कैंटीमें का मिर्च।

—अन्तरा

अबसे मेरा आप लोग 'सम्मान' करके लें। अबस ही ऐसा 'कोई' नहीं है कि शाप देकर मरम कर हूँ। यहाँ एक और नायी गायक हैं—शुधीर म्युडुरी। उन्होंने गिनकर बतलवा कि मैं एक अवर्तल्य आर्थिक आदमी हूँ। इस लयका अविष्कार उन्होंने भी किया। देखता हूँ मुझे से आकर उठी हलमें मिठा रह है।—('सेवा भाद्र आश्विन १९५२')

कल्याणीय, गत बुधवारको मुझे ज्वर आया। आज आठ दिनोंके बाद भी नहीं उठता, आपने दवाके अभिनयका अधिकार माँगा था। अतएव मैं

साम्प्रदायिक, पानिवात, हावड़ा
७ आषाढ़, १९५४

सहर्ष देनेके लिए राखी हुआ था। लेकिन माममें विधिकी विदग्धता ब्याह, नहीं तो 'बिम्बा' नाटकको अवतक समाप्त कर डालता।

आप उसे दूधरेसे लिखाना चाहते हैं। लेकिन क्या वह मुझे बर्दाश्त कर सकेगा? ठलके लिए देखता हूँ अनेक अनुविचार हैं। बीचमें डेस्कके स्वयं न रहनेसे वे सब स्थान पूर्ण कर देना कठिन ही समझता हूँ और अभिनयकी दृष्टिसे भी वह बहुत अप्पन होगा इसकी भी आशा नहीं रखता। मेरा अपना भिन्ना होनेसे वह बाधा नहीं रखती; और मैं भी एक नाटक 'बिम्बा' नामसे प्रकाशित कर सकूँगा; बूधरेका विश्वास होनेसे तो नहीं कर सकूँगा। किन्तु आपके मासकेमें तो मेरी कोई मारज ही नहीं है।

प्रथम अंक प्रयोग शुरू देखने के गये, तो दिखा ही नहीं। काफी जो भी उसे अभिनययोगी करके लिखना आरम्भ किया या कि इसी समय बिम्बा का पड़ा।

पर आप लोगोंको विस्मय होनेसे—(अर्थात् 'बिम्बा'की आधारमें)—बहुत छति होगी। स्वयं ही अभिनेताओंको बैठन देना पड़ रहा है। इस हावमें क्या करें, समझमें नहीं आता है। पर एक तरहसे पूरी पुस्तक तैयार है। केवल बोझ-बहुत खोबखो और बोझ-सा बिल कर काफी करवाना है। अगर इस बीच मैं अप्पन हो गया तो अन्त ही कर सकूँगा। कुछ दिन पहले आपने वह पैसब किपा होता तो कोई बात ही नहीं थी।

पुनश्च। देखनेके लिए पहले हिलेको तुम्हें हाव मेल रहा हूँ। इसे देखकर अगर समझें कि बाकी हिलेका आप भिन्ना सकेंगे तो मुझे बचाना।—

६

[मणिलाल गंगोपाध्यायको लिखित]

रंगून, ०-१-१४

मिथ मणिबाबू, बहुत दिन हो गये आपकी लिखीका ब्याप नहीं दिया है। इस मुरिदे लिए खुद ही अग्रजत हूँ, इसपर आप और कुछ न कोचें।

धारत-पञ्चावली

अपनी रचनाकी आलोचना सुनकर आप दुःखित नहीं हुए हैं। इस बातकी आपकी ज्ञानी सुनकर चैनकी लौ लगी। कभी-कभी सोचा करता था कि मेरे लो यही पाठ्य है कि दूसरोंके दोषोंको बिसाई। लेकिन उन्होंने क्या सोचा होगा। लेकिन इन बातोंको—बहुत मुसीबत हुई।

इसके बाद भी मैंने आपकी पुस्तक छिद्र एक बार शुरूसे आखिर तक पढ़ी थी, उसमुझ ही बहुत अच्छी लगी है—इस बार मानो कुछ अधिक समझ सका हूँ कि यह रचना क्यों पुरस्कारों सेरी तरह अच्छी नहीं लगती है। यथार्थ ही आपकी रचनाका tone कवि जैसा है। निराकार (abstract) भावकी कमिछ किन्हीं अच्छी नहीं लगती है। उनको आपकी रचना अच्छी नहीं लगती है इस बातको निश्चित करते कह सकता हूँ।

किन कविताओं या छोटी कहानियोंमें अनेक तथ्य हैं, पढ़ाने हैं। मगर किन्तु कुछ जीये-सादे सांसारिक हैं। मैंने देखा है अधिकतर लोगोंको यही अच्छी लगती है क्योंकि उन्हें वे अच्छी तरह समझते हैं। उन्हें समझाना भी आसान है। यहाँ और एक बात कहूँ। बहुत दिन पहले बहुतसी पत्रिकाओंमें आपकी 'किन्तु'की आलोचना करते हुए लिखा था—“हिन्दू विषयाका यथार्थ और सही पर जाना क्या बचि हत्यादि हत्यादि।” (मेरे एक मित्रने इस आलोचनाकी बात मुझे लिखी थी—मैंने कुछ उसकी सम्भावना नहीं देखी है।) इस बातको जानकर एक बार मुझे ऐसा लगा कि इस आदमीकी हिमाकतकी तरह मैं भी एक मोर प्रतिवाद किसी पत्रिकामें लगा हूँ—मुझे लगा कि कहूँ और कापी कहे सम्झोंमें कहूँ—“केलककी बचि बहुत अच्छी है। सिर्फ़ इस ही अनुसार और बेवकूफ हो इलीमिय उन्हें इतमें होप दिलाई पड़ा।” किन्तुने कौन-सा अपराध किया वह मेरी समझमें किसी भी तरह नहीं आया। वह बेचारी एक और निरुपाय अमागे कापीको यथार्थ छिद्र देखने गई थी अगर जरूरत हुई तो मुझमें एक बूँद पानी देने या इसी तरहका कोई काम करनेके लिए—बच नहीं न। इतनेहीवे मरमारत अग्रह हो गया। हो सकता है कि मन ही मन कुछ स्नेह भी करती हो—क्योंकि वह उसका लेखका कापी था। क्या यह होपकी या कथिबिच्छ बात है? कारण वह निष्ठा है—अर्थात् हिन्दू विषयाके सामने अगर कोई मर जाता है, और अगर उसकी उँगलियों छूनेसे भी वह निष्ठा हो सकता है, तो

हिन्दू विषयाको यह भी नहीं करना चाहिए। क्योंकि यह विषय है और जो व्यासजी मर रहा है वह परपुरुष है। यही इनकी हिन्दू विषयाका कारण है।

कहता है कि भोग इतना संकीर्ण मन् लेकर बूढ़ोंका होय दिलानेकी हिमाकत करते हैं और दिखाते हैं और भोग उच्च आश्वमेधनाको पढ़कर कहते हैं 'जात तो ठीक है। ठीक ही तो बिता है।'।

मैं ठीक-ठीक यह नहीं बतला सकता कि आश्वमेधना कैसी थी। अपने मित्रों से जैसा सुना वैसा ही बिता है। आपने सापेक्ष यह आश्वमेधना देखी होगी।

कुछ पाठक यह भी समझते हैं कि जहाँ-तहाँ बप-रप संन्यासी और हिन्दू धर्मकी बड़ी-बड़ी बातोंक न जानेसे कहानी या उपन्यास किसी भी रूपमें सम्भव नहीं हो सकता।

बाद आप किन्तु हैं कि किसी विषयाका व्यास हुआ—तो फिर आप आदोंगे कहें—आरो-आरो कहकर सब छोड़ देंगे। और वे जोस विष्णुकुल पूरक याकिया देनेमें सिद्ध पद होते हैं यही इनका बल है—अर्थात् वे भीकार करके और धार्मिक बलसे जीतनेकी चेष्टा करते हैं और जीत भी जाते हैं।

दिन-ब-दिन इसका साहित्य मानी विष्णुकुल एक ही सौपेमें उभय-स होना आ रहा है—प्रतिदिन संकीर्णसे संकीर्णतर हो रहा है, (इसीलिए कभी-कभी मुझे लगता है कि उच्छृंखल रचनाएँ शुरू कर पूँ केबल गुस्सेमें आकर कैसा-तैसा लिखने लगे।) मैंने कुछ दिन पहिले अपनी बीबीके सामने 'नारैका नृत्य' शीर्षक एक निस्त्व बिता। बीबीने, किसीमें मुझे स्थिर देख और उसीको मैंने बढ़ाकर बिता दिया। इसके बिना सम्बन्धित और मित्रोंने मुझपर कितना श्रेष्ठ प्रकट किया यह नहीं कहा जा सकता। किसी-किसीने देखा भी कहा है कि मैं भ्रष्ट-भाषाभाष हूँ—ठीक-ठीक हिन्दू नहीं हूँ। हिन्दू धर्मपर मैंने कभी भी कटाक्ष नहीं किया, केवल इसकी अनुदारतापर आक्रमण किया है। किन्तु ही लोगोंने आश्वमेधना (मयानक प्रतिपाद) करनेका शर दिलाया, पर आखिर किसीने कुछ भी नहीं किया। उसी समय मेरे एक सामाने लिखा कि मैं दिक्से तो मारुप हूँ और बाहरसे हिन्दू। यद्यपि मेरे गलेमें तुलसीकी माख है, सम्प्रा क्रिये पौर में बल प्रहस नहीं करता, भिल्ल-सिल्ले हाथसे पानीरक नहीं दीया। (इस न माने मयि बाबू, आपसे ये बातें कहना अभ्यास है।) मैं जो कुछ हूँ

वही आपकी किस्मत । इन सब बातोंके होते हुए भी उन्होंने मुझे कितनी यादों की ओर मैं बाहरते होंग रखा है, वह कहकर धमकाया, इसे काँतक निर्ले । इसके बाद ही बीमार हो गया, नहीं तो इसका भी कि इसी तरह के 'दिलताईया मूम्य' और 'हिन्दू धार्मिक मूम्य' सीर्यक निबन्ध लिखना शुरू करूँगा । छोड़िए, अपनी ही बातोंसे पिन्नी मर सी—कैसे हैं ! लचीपत ठीक हुई क्या ! नमा कुछ किता ! हाँ, अच्छी बात है, जो कुछ भी किस्म अन्तमें बचीर (impatient) होकर समाप्त न करें । शायद वही आप गलती करते हैं ।—

आपका भी उत्तराग्र बटोराम्माप

एक अनुप्रेष, इस चिट्ठीमें जो कुछ भी क्यों न लिखा हो कुछ न मानें— अगर कोई गैर वास्तव बात भी किसी हो तो भी ।

पुनः—आपकी भाषाकी एकदम छोटी-मोटी बुद्धियोंको लेकर आपकी शोर-शुभ मचाते देखता हूँ । मैं मैं खुद आपको (उन बुद्धियोंकी) तरह नहीं भिन्नता । लेकिन आप भी नहीं देखता । आप आप-बुद्धि ही वैसी माया और हिम्मे दिल रहे हैं—अच्छा ही कर रहे हैं । जिस बातको अच्छा समझ है उसे केवल दूसरोंके करनेसे न छोड़ें । पर अगर खुद देखते हैं कि उन्हें बदलना आवश्यक है, तो बदलें ।

७

[भी सुधीरचन्द्र सरकारको लिखित]

प्रिय सुधीर,—कल रातमें सुम्हारा पत्र मिला । जो निबन्ध हो रहा है और इसके जो धारि हो रही है, उसे क्या मैं नहीं समझता ? पर आप अधिकतर नये लिखते लिखना पढ़ रहा है । अगर दो-एक महीने देर होती है, तो वह बिल्कुल अच्छा है, पर इस तरहसे शुरू होकर भरे हंगते होय हा, इसीका मुझे डर है ।

पर अब छपना बन्द नहीं होगा । आगामी साप्ताहिक इतना मेव होगा की आपका अधिक होगा । एक बात और । फिरते लिखनेमें बहुतों पर समझा है । वही पहले जो एक बार कहा है उसे फिर न कह लूँ । लिखना छान है उसकी

बहुत-सी कापिबों मुक्त नहीं मिली हैं। जितना छपा है उसे सार खिन्नी करके भेज दें तो मेरा चौपाई परिग्रह कम हो जाय। अतस्त ही इसके भेज दें। अस्तथाभी करनेसे तो कम-कुछ फल ही मिलेगा। लेकिन ऐसा करना क्या अच्छा होगा। पर और जितना भी विकल्प हो, माय महीनेके अन्तर्गत अधिकतर छपाई समाप्त हो ही जायगी। मेरे हाथोंकी शक्ति ठीक वैसी ही है। सादर सब ख्याली नहीं होंगे। आस्तुनमें आनेकी इच्छा है। मेरा स्नेहाशीर्वाद है। इति—(मानन्द बाजार पत्रिका, ८ माघ, १९४४)।

[१४ माघ १९१९]

आपका सुना होगा मैं प्रयास पशु हो गया। कहा जा सकता है फल-फिर नहीं पाता, पर मिलने-पहुँचनेका काम पहले वैसा ही कर सकता हूँ। लेकिन मन इतना विमर्ष है कि किसी काममें हाथ लगानेकी इच्छा नहीं होती—अमाने पर भी वह अच्छा नहीं होगा। केवल जो पहले लिखे हुए थे—अथा-विहार-चौपाई, इत तबकी मेरी बहुत-सी रचनाएँ हैं—उन्हींको किसी तरह जोड़-तोड़कर जड़ा कर देता हूँ। 'हरिजीन'के बारेमें ऐसा नहीं नहीं करना चाहता इतलिय इतने दिनोंतक सो-सो सम्पादन भेज रहा था। नहीं हाँ तो अब दुम मेरी पाठ बैठकर ठीक कर लेना। मैं आकुर्वितिक विविधताके लिए कलकत्ता आ रहा हूँ—एक वर्ष रहूँगा। ११ अप्रेलको रवाना होऊँगा, क्योंकि इसके पहले किसी तरह टिकट नहीं मिल सका। आजकल उताहमें एक, कभी-कभी देव उताहमें एक कहाँन बूढ़ता है। 'अच्छी बात है। आनेकी इच्छा होती है तो आना, लेकिन क्या टिकट मिलेगा? (मानन्द बाजार पत्रिका, ८ माघ, १९४४)

१४१९ वीं स्ट्रीट, रंगून

२०-१-१९

परम कस्यापीय। मैं बूढ़ हूँ इतलिय आपको आधीबाढ़ देता हूँ। मुझे परिष्क न होनेपर भी आपने मुझे पत्र लिखा इसे परम सौम्याप्य न समझकर पृष्ठा समझता, मैं इतने लौंभे मनका नहीं।

सिध्द बम्पन आना पड़ रहा है। वह पत्र जब आपकी हाथोंमें पहुँचेगा तब मैं इस पत्रपर नहीं रहूँगा। अगर कृपा कर कभी इस पत्रका उत्तर दें तो बिलकुल मोहता पत्रसे अवगत हुए ये उसी तरह जान सकेंगे। यद्यपि समझ रहा हूँ कि इसकी आवश्यकता समय-समय आपकी नहीं होगी।

लेकिन इस बातको रखते हूँ। मेरी रचना आपको अच्छी लगी है, वही मेरी परिमत्तका पुरस्कार है। आपने इस बातको सुनिश्चित कर मुझे सुखी किया है, इसलिए हार्दिक धन्यवाद देता हूँ। आशीर्वाद देता हूँ आप भी इसी तरह सुखी हों।

समयान्तरे आपकी कुशलताके लिए प्रार्थना करता हूँ।

आशीर्वाद—श्री हारत-पत्र कठोबभाव

९

[प्रथम चौधरीकी लिखित]

६ नीलकमल कुँड़ू सेन, बाने—गिबपुर

१६-६-१६

सुनिश्चित निवेदन। किसी भी कारणसे आपकी थिड़ी भिन्न सकती है, इसकी व्याख्या मैंने कभी नहीं की थी। आज मद्रासी भी एक थिड़ी भिनी।

करीब पौन महीने हो गये हैं इस देशमें आया हूँ। बानेके ही बादसे आपसे मिलनेकी चेष्टा की है, लेकिन मिलना अवलोक सम्भव नहीं हुआ। किन्तु चलो बानेसे आपके घर पहुँचा जा सकता है, वह नहीं जानता। इसके अन्वय संकोच भी था—कहीं बेमौके पहुँचकर आपका समय न गड़ करूँ। अब जब आपने खुद ही मुझसे है तो अवश्य ही आर्योग्य। देखूँ, कुछ उपचारको अगर आपके दफ्तरमें हाजिर हो सकूँ। नहीं तो पत्रिचारकी आपके वाच्यमन्त्राद्ये सम्मनपर आर्योग्य। मेरी मुवाकातका एक विशेष कारण यह है कि आपकी रचनाओंका मैं भी एक भक्त हूँ। कमसे कम अधिक पढ़ाती हूँ। इसीलिए जब बाहरके लोग आपकी निन्दा करते हैं तो मुझे भी खलता है। बीबी बर्षोंकी रचनाओंको

में ध्यानसे पढ़ता हूँ। मेरी लिए कमिनाई यह है कि उनके श्लेषके कारण नहीं समझ पाता, और आप भी क्या समझते हैं। यह भी मेरी समझमें नहीं आता। यह सब बहुत बुरा ही उच्च कोटि की होती है, इसमें मुझे सन्देह नहीं। पर जिस रूपमें यह प्रकाशित होती है उसे नहीं समझ पाता। मेरी बकब मोदी है इसीलिए किसी भी बातको मैं ठोस रूपमें ही समझना चाहता हूँ। आपके मित्रके कारण यही है। सोचा है साक्षात्कार करनेपर सारी भीषणोंको विशेष रूपसे समझ लेंगा। श्रीगुरु बादबेश्वर पण्डित महाशयसे एक दिन यही प्रश्न किया था। उन्होंने समझा भी दिया था। अपने सप्रेम्यकसे भी पूछा था। उन्होंने भी समझा दिया था। अब आपकी बारी है।

श्रीगुरु श्रीरोद बाबू (नाट्यकार) ने एक दिन मुझसे कहा था कि मैं बंगला साहित्यका एक रत्न हूँ। इसका कारण यह है कि मैं जिस मापामें लिखता हूँ वही ठीक है। लेकिन 'सुबुज पत्र'में उन्होंने मापाकी मिट्टी पकड़ कर दी है। उनकी मापा मापा ही नहीं है।

मैं स्वयं इस बातका आधिष्ठात नहीं कर सका कि मेरी मापा और 'सुबुज पत्र' की मापामें प्रथम कहाँ है। इसीका आपसे बग़ी तरह समझ लेंगा। मेरी कोई रचना आपसे पढ़ी है या नहीं पढ़ा नहीं। यदि पढ़ी है तो कोई अनुबिधा नहीं होगी।

पंडित महाशयने उस दिन कहा था कि बंगला मापा संस्कृतनिष्ठ होनी चाहिये, और इसीको लेकर सग़ाह है। संस्कृतके प्रति निष्ठा कर्तव्य होनी चाहिये, इसे वे रक्षक नहीं जानते और आप लोग भी नहीं जानते। देखें, इसका फैसला आपके पास आकर होता है या नहीं।

—श्री अण्णन्द बहोराय

६, नीलकण्ठ कुँह रोड,
बामे-विजपुर, २१-६-५२

संक्षिप्त विवेचन

कल आपने मुझे एक पुस्तक दी थी। पुस्तकका पढ़ना मेरी लिए एक आदत बन गई है और इससे अब वह एक ठोस आदत बन चुकी है। उस पुस्तकको

धारत-पञ्चावली,
 किए अम्यत्र जाना पड़ रहा है। यह पत्र जब आपके हाथों में पहुँचेगा तब मैं इस
 पत्रपर नहीं रहूँगा। अगर छपा कर कमी इस पत्रका उत्तर दें तो कित तरह
 मौजूदा पत्रसे अवगत हुए ये उसी तरह जान सकेंगे। यद्यपि सम्मत रहा हूँ कि
 इसकी आवश्यकता शायद अब आपको नहीं होगी।
 लेकिन इस बातको रहने दें। मेरी रचना आपको कबकी कमी है, यही
 मेरे परिश्रमका पुरस्कार है। आपने इस बातको ध्वस्त कर मुझे मुन्दी किया
 है इसकिए शार्दिक कन्वकार देता हूँ। आखीर्वाद देता हूँ आप भी इसी तरह
 मुन्दी हों।
 मगवान्से आपको कुछक्याके किए मार्चना करता हूँ।
 आखीर्वादक—श्री धारतपत्र बहोसाप्ताह

९

[प्रथम चौधरीको लिखित]

६ नीलकमल कुँह लेन बाजे—पिपपुर
 १९-९-१९

खबिनय निवेदन। कितनी भी कारणसे आपकी बिट्टी मिक लकड़ी है, इसकी
 आधा मैंने कमी नहीं की थी। आज मंडकी भी एक बिट्टी मिली।
 करीब पाँच महीने हो चले हैं इस वेषमें आया हूँ। आनेके ही बादसे आपसे
 मित्रनेकी सेवा की है, लेकिन मित्रना अवलोक सम्मत नहीं हुआ। कित रास्ते
 जानेसे आपके पर पहुँचा था लकड़ा है वह नहीं जानता। इसकी अजवाब लकड़ा
 भी था—कहीं बेमौके पहुँचकर आपका सम्मत न नष्ट करें। अब जब आपने
 खुद ही बुझाया है तो अवश्य ही आर्कंगा। देखूँ कल बुझवारको अगर आपकी
 दफ्तरमें शक्ति हो सकें। मही तो धानिचारको आपके बाकीगजवासे मन्त्रनपर
 आर्कंगा। मेरी मुझकातका एक विशेष कारण यह है कि आपकी रचनाओंका
 मैं भी एक भक्त हूँ। कमसे कम अधिक पक्षपाती हूँ। इसीकिए जब बाहरके
 लोग आपकी निम्न करते हैं तो मुझे भी लकड़ा है। दोनों पक्षोंकी रचनाओंको

मैं प्यारसे पढ़ता हूँ। मेरे मित्र चठिनार्ह यह है कि उनके खेबके कारण नहीं समझ पाता, और आप भी क्या समझाते हैं। यह भी मेरी समझमें नहीं आता। पर सब तरह कायस्थ ही उच्च कोटिकी होती है, इसमें मुझे संदेह नहीं। पर जिस कर्ममें वह प्रकाशित होती है उसे नहीं समझ पाता। मेरी बसल मोरी है, इसीलिए किसी भी बातको मैं ठोस रूपमें ही समझना चाहता हूँ। आपसे मिलनेका कारण बही है। सोचा है साक्षात्कार करनेपर सारी चीजोंको पिछे छोड़ते समझ देंगा। श्रीगुरु बादशेखर पण्डित महाशयसे एक दिन यही प्रश्न किया था। उन्होंने समझा भी दिया था। अपने माँबिबाऊसे भी पूछा था। उन्होंने भी समझा दिया था। अब आपकी बारी है।

श्रीगुरु श्रीरोद बाबू (नादयकार) ने एक दिन मुझसे कहा था कि मैं बंगाली साहित्यका एक रत्न हूँ। इसका कारण यह है कि मैं जिस मापामें लिखता हूँ वही ठीक है। लेकिन बहुत पत्रमें उन्होंने मापाकी मिट्टी पछीद कर दी है। उनकी मापा मापा ही नहीं है।

मैं स्वयं इस बातका आश्चर्य नहीं कर रहा कि मेरी मापा और 'लुज पत्र' की मापामें फरक क्यों है। इसीका आपसे बग़्गी तरह समझ देंगा। मेरी कोई रचना आपने पढ़ी है या नहीं पता नहीं। यदि नहीं है तो कोई अनुविद्या नहीं होगी।

पण्डित महाशयने उक्त दिन कहा था कि बंगाली भाषा संस्कृतनिष्ठ होनी चाहिये, और इसीको लेकर लड़ाई है। संस्कृतके प्रति विश्वास बर्हातक होनी चाहिये, इसे वे स्वयं नहीं जानते और आप लोग भी नहीं जानते। देखो, इसका वैयर्थ्य आपके पास आकर होता है या नहीं।

—श्री शरङ्गचन्द्र चट्टोपाध्याय

१, नीलकण्ठ कुँहू सेन,
बाने—धिरपुर, ११-५-५२

तविनय निवेदन

कल आपने मुझे एक पुस्तक दी थी। पुस्तकका पढ़ना मैं बिना एक आदत बन गई है और इससे अब वह एक नयी आदत बन आ पहुँची है। उक्त पुस्तकको

पूँ बा न पूँ, पर प्राप्ति-स्वीकार करना एक मद्रत है, यह भी मानो याद नहीं रहता। इस बातमें दम्पकी अग्नि निकलनेपर भी यह सत्य है। इच्छिष्ट आपकी पुस्तकने कम बहुत दिनोंके बाद प्राप्ति-स्वीकारकी बाद दिना ही तो आपको सम्मबाह दिये-बिना नहीं रहा था तका। एक बार इसके लिए भी सम्मबाह और दूसरी बार सम्मबाह पत्रके अन्तमें हुआ।

कह ही रातको पुस्तक समाप्त की। कहना नहीं होगा कि कलानिबों पढ़नेमें बहुत दिनोंसे ऐसा आनन्द नहीं मिला था। इसकी विशेष प्रशंसा करने का अर्थ है इसकी समालोचना करना। इसे करनेके लिए बहुतसे आपको दिन रात सम्मकिबों दिना करते हैं, इसका संकेत भी कम आपके घरमें सुन आना। अतएव यह काम मैं नहीं करूँगा। और वे लोग भी क्या करेंगे,—शिव बनावेंगे या कन्दर—वही जानते हैं। उन्हें अच्छी लगती है—यह एक बात है। लेकिन इस रचनामें कितनी प्रौढ़ता है कितनी सूक्ष्म कारीगरी है, इसका निम्नी सौन्दर्य क्यों है समुद्र काम-रत क्यों है, सबसे अधिक इसे सिद्ध करना कितना कठिन है, यह वे ही लोग समझेंगे किन्हें अपने हाथोंसे लिखनेका राग है। और कहना नहीं होगा कि इस प्रकारकी कुछ रचनाको पढ़नेका रोग देखके कुछ लोगोंमें है। पर इसे ओढ़िये। वास्तविक बात यह है कि यदि बाबूकी रचना पढ़नेपर मुक्त प्रेक्षक आता था कि चेष्टा करनेपर भी मैं ऐसा नहीं थिल सकता। और कम आपकी कहानियोंकी पुस्तक पढ़नेपर भी मुझे लगा कि चेष्टा करनेपर भी मैं हल सरहसे नहीं थिल सकता। इसी बातको सूचित करनेके लिए यह पत्र लिख रहा हूँ।

कह शामको अच्छा आपके पहाते निकल कर 'म्यारुतवर्ष' कार्यालयमें आया और वहाँ 'सोमनाथकी कहानी' समाप्त करनेपर लखनवाबाबू आदि कई शक्तिरोंसे उठको लेकर बहुत बह पड़ी। मैंने अपना मत दिया कि यह रचना उन्हें अवश्य पढ़नी चाहिये, जो आभिकाशमें स्वयं पुस्तक लिखते हैं। इसकी निम्न रचनाहीही सहज-सरल कथोपकथन, रसका ऐसा परिष्कृत, मनोमग्नियोंकी अभिव्यक्तिका ऐसा अनानुसृत मुक्त-पथ वे लोग कितना समस्त और सील सकेंगे, जो लेखक हैं उतना साधारण लोग नहीं। साधारण लोगोंको तो केवल अच्छी ही लगेगी पर प्रयच्छरोंको तो अच्छी भी लगेगी और उपलोगी भी होगी।

वहाँ आपसे एक अनुरोध करेंगा कि कृपया आप यह न सोच कि इस उद्धृ-
 स्थित प्रयोगमें रचनात्मक मी अस्पष्ट है—बूझे क्या जिन सुधामा करते हैं।
 क्योंकि मैं जानता हूँ कि इसी बीच जितनी प्रयोग आपका 'पारवारी' के
 उद्देश्यमें किया है उसमें उद्देश्य सुधामा मी है यह आपने स्वयं अनुभव
 किया होगा। हमसे कम मैं हाथ ली नहीं अनुभव करता। क्योंकि मैं इस
 बातको निश्चित रूपसे समझता हूँ कि यह पुस्तक साधारण पाठकोंके लिए नहीं
 है। साधारण लोग इसे समझने ही नहीं।^१

अन्तर्हीमें एक बात है 'मार्ट डू हाइड आउट' अर्थात् कला छिपानेके लिए
 कथ्य। इसे न समझ पानेके कारण वे मान बैठते हैं कि इस मीले हुए सौन्दर्यमें
 सौन्दर्य ही नहीं है। मारवाही लोग मकान बनवाते हैं और पैदा करने करके
 उसमें काश्तकार्य करता खेते हैं।

सबकीकी बुद्धि और संस्कृति (Intelligence and Culture) अत्यन्त
 एक सीमातक नहीं पहुँच जाती है, तबतक वे इस पुस्तकका समझ ही नहीं
 पाते। इन बातको मैं बनाकर नहीं कर रहा हूँ। अगर फिर कभी मुझका
 हुर्र हो इससे बाँटे होगी। आपको इसमें सम्प्राप्त लेकर आज बिना होता
 हूँ। ऐसा भी हो सकता है कि मुझे अच्छी लगनेकी आपकी निकट कुछ भी
 कौशल नहीं हो।

—श्री शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय

१. इस विषय इस पुस्तकके प्रसंगमें एक पत्रिका के कदा का कि बार में बहस की सभी
 कविताओंका अर्थ समझा दे सकते हैं। मैंने कहा कि नहीं। नहीं समझा सकता। इनका
 कारण यह है कि आज वेदांगके वही परिणाम होनेपर भी काव्य समझनेमें परिणम नहीं है।
 हमने अपना सभी कविताओंके अर्थ सभीको समझाना ही चाँहिये। इन तरहकी कोरे
 कारण नहीं दितारें करें। यदि बहस में 'मैंने कहा' की बजाय 'शुद्धता' बहसने कहा का कि
 पैसा अस्वीकृत कविता कभीके पहले सभी नहीं देखी। अगर यह बात पर शुद्धताके
 मुँहमें निकली है, इसीलिए आज केना होना और न जाननेमें सीधे कारण होना,
 ऐसा नहीं है।

—शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय २१/१२२

१-१०-१६

धियपुर

आज अमी-अमी आपका पत्र मिला । उस दिन आपको वो पत्र मिला था—परमू मेजा नहीं था—पीछे अचानक आप कुछ समझ बैठे—इसीलिए आज ठठे मेजा दिया है । किसी दिन कोठीपर आऊँगा ।

६ नीलकण्ठ कुंड़ू सेन

बाजे-धियपुर, ब्रह्मा

११-१-१९१६

छविनय निवेदन । कई दिन हुए आपका पत्र पाकर अभाव देनेमें किञ्चनके कारण अशक्त हूँ । जाना भी नहीं हो सका । इसके लिए अपने ही मनमें स्वेष्टका अनुमत्त कर रहा हूँ । परन्तु अवश्य बुद्धरयित्थारको अगर आप परम रहें तो शामको आऊँगा । लेकिन मैं जाने क्यों मेरा ऐसा स्वप्नव है कि बड़े आदमीके घर अपनेकी बात याद आते ही बिना हिचासे संकोचसे लिख हाँ बरता है । इसीलिए आते आते भी जाना नहीं होता है ।

इस संकोचने ऊपर ठठ सका तो परन्तु निरवध ही आपकी वहाँ हाजिर हाँऊँगा । और अगर नहीं हाँ सका, तो कारण आपको बतलाना मही पड़ेगा । लेकिन जाने कीजिये इस बातको ।

आपकी इन पुस्तककी जिन्होंने आलोचना लिखी थी वे अति उच्छ्रासके दोपके कारण ही पत्रिकावालोंको प्रसन्न मही कर सकें शायद बात ऐसी नहीं । आपको तो मात्तम है कि हमारी पत्रिकाओंमें 'नामका धार' न रहे तो कोई संग्राहक चारको (बुद्धिकी टीहनटाकी) जाय नहीं करेगा । मेरी आलोचना, अवश्य ही अच्छी मही होगी क्योंकि इन विषयमें मेरी शक्ति बहुत कम है । पर मीचे नाम लिख देनेसे किमी भी पत्रिकामें उन स्थान मिल जायगा । हमलिये आगले महीनेमें आलोचना करूँ, या न करूँ, तोन रहा हूँ । या तो 'मारतवरी' में मही ता 'प्रयासी मे' । पर आत्मको तुमिकासे पीनका ओहरा करी आनककडे भारतीय आर्कके उत्कृष्ट नमूने शेष न रहगे, इसीका मुझे डर है । और आपने

बिच तो बात ही नहीं—आहादको रखनेका ठौर ही नहीं रहेगा। पर अमर
दें तो करें।

आपकी 'बड़ो बाबू बड़ो दिन' (बड़े बाबूका बड़ा दिन) में शीघ्र
पौषधीही बाबू जिसे 'मुमिधयाना' करते हैं उसकी यद्यपि कोई कमी नहीं
है (न रहनेकी ही बात है!) पर वह मुझे अच्छा नहीं लगा। मैं जानता हूँ
कि इस विषयमें आपकी बुद्धि कदबाधों और मेरे मतभेदको आप स्पष्ट ही
अनुभव कर रहे हैं। हो सकता है कि उन्होंने आपसे कहा हो कि किसी पात्रको
बन्दर बना देनेकी आपकी समझ अत्यन्त खराब है। मैं भी यह नहीं कहता देखी
बात नहीं कि रूप रंगके बापोंसे मनुष्यकी किसी विशेष बन्दर जैसी प्रशंसकी
पाठकोंके सामने निश्चयी ठगानेमें आप पारगढ़ हैं। लेकिन मैं हस्तता हूँ कि
मनुष्योंको मनुष्यके कर्मों हिलानेको समझ आपमें इससे कहीं अधिक है। कोई
कई अत्यन्त गम्भीर स्वभावके लोग जैसे अपने दुल्लको भी करनेके समय एक ऐसे
तात्कालिकता पुट दे देते हैं कि अमानक लगता है कि वह किसी औरके दुल्लकी
करानी कर रहे हैं। मानों इससे उनका कोई सम्बन्ध ही नहीं है। आप भी
टीक उनी तरह करते हैं। गुमा-पिपाकर काटरोकि कहा भी नहीं है—पर
बीकनकी न जाने कितनी बड़ी ट्रेजेही पाठकोंके विरुद्ध वाद करती है। आपकी
रचनाकी यह तरह शायद मैंने कुछ लिखनेकी मरिमा ही मुझ सबसे अधिक
मुग्न करती है। इसीलिए उस दिन निम्ना या कि 'चारपायी' कहानियोंका ठोक
समझनेके लिए पाठकोंका शिष्टा और सत्कृतिके एक विशेष स्तरपर पहुँचना
आवश्यक है। नहीं तो इसका साग सौम्य उनके सामने निरपेक्ष हो जाएगा।
लेकिन 'बन्दर' बनाते समय वह दबा हुआ तात्कालिकता स्वर रचनामें
किसी भी रूपमें रहना सम्भव नहीं है और रहता भी नहीं है। चापद इधी
थिए बड़ा दिन मुझे अच्छा नहीं लगा। उसकी शिष्टाके समावेशको नहीं
पकड़ पाया।
देता भी हो सकता है कि मैं विचित्र ही समझ नहीं सका। चापद यही
बात हो। अतएव मेरे लिए अच्छा लगने न लगनेकी कोई कौमल नहीं भी हो
सकती है। हो सकता है कि इससे आन्तरिक अनभिचार-वर्षा की है। अगर
देता हुआ हो तो माफ करें। अनाधिकार-कबाकी बात में अति विनयत नहीं

कर रहा हूँ। क्योंकि मैंने पढ़ना मिलना नहीं सीखा है। अंगरेजीका अच्छा ज्ञान नहीं रहनेसे रचनाके मझे-बुरेके विचारकी समता नहीं आती है। यह धमता भी पिछासायेस है। बड़-बड़े लोगोको बड़ी-बड़ी आलोचनायें मिलीं नहा पदो हैं वे स्वाभाविक अभिव्यक्ताये यों ही एक प्रकारसे नहीं समझ पाते हैं। ऐसा बात नहीं लेकिन अब चोख उनके प्रत्यक्ष अनुभवके बाहर है, उनके मोठर एक छत्र भी वे प्रवेश नहीं कर पाते हैं। बाहर लडा हुआ कम्ब किवाडकी आर टकटकी लगा देल रहा है। पर वह यह भी समझ नहीं पाता है कि किवाड कम्ब हैं। हली किय ता सभी श्रीमोंके सभी आलोचक हैं। समझते हैं कि छत्रोंके अर्थ अब समझमें आ रहे हैं तो सब-कुछ समझ रहे हैं। श्रीमोंकी बात इत्यर्थ उठाई कि बैंगल्य म्तायामें आलोचनाकी पुस्तक भी नहीं हैं और सीकनेकी कम्ब भी नहीं है। इसे भी बाकाबदा छत्रिर्द बमकर सीखना पड़ता है, यह जारणा भी नहीं है। मुझमें जारणा है, हलीकिय इज्नी पाते किसी। इन बातोंको मैंने विद्वानोंके मुहसे सुना है अतएव मैं अच्छम समने न समनेका मूख हवी अच्छमसे समायें। मैं जानता हूँ कि मैं ऐसी ऐसी आलोचना जिसकर आपनके किय मेव, तो वह छत्र आदगी और इसके किय आपकी अनुमति देनेकी भी आवश्यकता नहीं, पर आपकी रचनाओपर मुझे अब अधिक बड़ा होनेके कारण ही अपनी असमता छुपित कर आपको राज मानना चाह रहा हूँ। अगर आपसि न हो तो कुछ करनेकी अब भिय लै। मेरो दयारेकी बड़ा स्वीकार करें।

—श्री शरत्-पत्रापापनी

१०

[भीमती लीजारांनी गगोपाध्यायको लिखित]

वाजे-छत्रपुर (हवडा)

२४-१९१९

परम कस्याजीपादु। आपका पत्र और 'मिलन' शुरूसे आतिरतक पढ़ गया। मेरो पुस्तक अच्छी लगी है। प्रत्यकारके किय इसके बड़कर दूध पुरस्कार और क्या हो सकता है।

आपने मछली मोंग की है। मछि जहाँ केवळ विनय नहीं है, लम्बी बस्तु है वहाँ इसका बाधा अवश्य ही है। पर मछि किसकी करते हैं, इसपर भी क्या विचार करना आवश्यक है।

आपने मेरा परिवार नहीं इच्छित अधिक प्रश्न करना योग्य नहीं देता। फिर भी पूछनेकी इच्छा होती है। आप जब मछ-समाजकी नहीं हैं, तो विधवा विवाह क्यों कर देना चाहती हैं।

यह क्या सचमरकी तरंग है या हेम और गुणीकी हावत देलकर कच्चा ठरन्ना दुई है। इसमें क्या आपको वास्तविक आपत्ति नहीं है। अगर यह है, और अगर 'मिस्त्र' हो जानेसे जिस प्रत्यक्ष होता है, तो मिस्त्रका कोई विशेष मूल्य है ऐसा मैं नहीं समझता।

हर रचनाके लोचरर अर्थात् रचनाके अन्ते-दुरेके विचारसे हर रचनाका मूल्य निश्चित करना एक छोटी जिद्दिका काम नहीं।

आपने मेरी छागी पुस्तक पढ़ी है कि नहीं नहीं जानना। अगर पढ़ी है तो कमसे कम यह बात निश्चय ही होती होगी कि कितने ही बड़े और सुन्दर जीवन समाजमें केवल विधवा-विवाह नहीं होनेके कारण ही लड़ाई लिए व्यव और निष्कल हो गये हैं। इससे अधिक अपने बारेमें कुछ नहीं करना है।

—श्री शरदचन्द्र चट्टोपाध्याय

बाजे-छिन्नपुर, हवड़ा

२६-७-२९

परम कल्याणीपास। आपका पत्र मिला। मुझे पत्र लिखकर उत्तरकी आशा करना अव्यक्त दुष्टता है। मेरे इस सुन्दर आचलकी लहर आपका कैसे लग गई यही सोच रहा हूँ। क्योंकि बात इतनी लम्बी है कि इसका प्रतिवाद करना मेरे लिए विमकुल असम्भव है। सचमुच ही जोगोंको मुझसे क्याच नहीं मिलता— मैं शठना बड़ा आकम्पी हूँ।

फिर आपको दा-बो चिट्ठियाँ कैसे मिलीं यह सोचनेपर देखता हूँ कि आपने जो मछिका बाधा किया है उसीने इस अलम्भवको सम्भव किया है। कस्तुर यह

→

वस्तु समुच्चये न जाने कितने विविध काम करवा लेती है। मुझे जो मारकी तरह मर्कट करती है उसीको पत्र लिख रहा हूँ। उसीकी वार्ताका ब्याव दे रहा हूँ, इसके अन्दर कितना विद्याक गर्व प्रच्छन्न है।

आपको कुछ सिखाया नहीं। बोलोते कमी देला नहीं। कितनी कन्या, कितनी बहू का परिवार है, कुछ भी नहीं जानता। पर अपनेको जब मेरी छोटी बहन कह रही हैं,—यह सौम्यग्य कदाचित् ही किसीको मिलता है—तब वह जिसके मागमें होता है उसपर एक प्रकारका नया झ बाला है।

मुझे नहीं जानते हुए और एक दिव् परकी बहू होकर भी आपने मुझे निरासकोच पत्र लिखा है। यह तब है कि ऐसा करने नहीं हो सकता लेकिन मैं भी आपको निरासकोच पत्र लिख सकता हूँ प्रश्न कर सकता हूँ। यह जायज आपके मनमें नहीं थी, इसीसे लिख सकी हैं। होती तो नहीं लिख सकती। मेरे प्रति इतना विश्वास आपके अन्दर था ही। अन्वय मेरा इतनी पुस्तकोंका लिखना स्वर्ग होता।

अच्छी बात है। छोटी बहनकी तरह तुम्हें जब हल्का हो मुझे चिट्ठी लिखना। मेरी लम्बी चिप्पा और सहोदराते अधिक एक व्यक्ति है। उसका नाम है निरुसम्भ। जो आर्य साहित्य-अगाधमें शायद आपसे अपरिचित न हो। 'दीदी', 'अमनपूर्वाका मन्दिर और 'विधि-विधि' आदि उसकी रचनाएँ हैं। पर वही कड़की एक दिन जब अपनी लोक सासकी उम्रमें अकस्मात् विधवा होकर छन्न रह गई तब मैंने उसे बार-बार यही बात समझाई कि "विधवा होना ही नारी जीवनकी चरम हानि और लज्जा होना ही चरम लायकता है। इन दोनोंमें कोई भी लज्जा नहीं। तबसे उसे समझ चित्ते साहित्यमें निराश्रित कर दिया। उसकी सभी रचनाओंका संशोधन करता और हाथ पकड़कर लिखना सिखाया था—इसलिए आज वह आर्यमी बनी है। केवल नारी होकर नहीं।

पह मेरे लिए बड़े गर्वकी वस्तु है।

तुम्हें लिखा है—जिने पठिका जाना नहीं। पहचाना नहीं ऐसी वाक-विषयाके ब्याहमें क्या योग है। तुम्हारे मुन्से इतनी बातकी बहुत कीमत है। और मेरी रचनाएँ अगर एक भी वाक-विषयाके प्रति तुम्हारे अन्दर करवा उत्पन्न कर सकी हों, तो मुझे बहुत बड़ा पुरस्कार मिला है।

अब तुम्हारी रचनाओंके सम्बन्धमें कुछ कहूँगा। आसन्नक अनगिनत बंधन ठप्प्यास निकल रहे हैं। उनमें दो चीजोंको मैंने ध्यान किया है। पहली बात यह है कि पुरुषोंकी रचनाएँ प्रायः अन्तःछायाहीन और अपठ्य हैं। यही नहीं, उनमें फट्टर अपना दूसरोंकी सुराह हुई हैं और इसमें वे ब्रह्मसत्त्वका अनुभव नहीं करते हैं। किताबोंके विक्रान्तोंकी ही वे काफी समझते हैं।

दूसरी बात यह देखो है कि स्त्रियोंकी रचनाओंमें और जादे जो हो कमसे कम वे दूसरोंकी सुराह हुई नहीं हैं। उन्होंने अपने छाटेले परिवारमें जो कुछ देखा है अपने जीवनमें पचापंच जो अनुभव किया है, उसीको कल्पना द्वारा प्रकट करनेकी चेष्टा की है। अतएव उनमें वृत्तिमत्ता भी अधिक नहीं है।

तुम्हारी रचनामें जो उत्साह और ऊर्ध्वता है उसमें मुझे मुग्ध किया है। रचना बहुत अच्छी नहीं होनपर भी अस्सी अहर्निशतासे ही सुन्दर बन पड़ी है। मुझमें परिधि विज्ञानमें समय नष्ट करवाओ स्वतन्त्र रूपसे पुस्तक लिखो। मैं आशीर्वाद देता हूँ तुम किन्हींसे हीन न रह सकोगी।

यहाँ तुम्हें एक उपदेश देना चाहता हूँ। नारीके लिए पति परम पूजनीय व्यक्ति है सबसे बड़ा शुभजन है। लेकिन इसके मान यह नहीं कि स्त्री पुरुषकी दासी है। वह संस्कार नारीको मिठना छाया बिठना तुच्छ कर देता है, उसका और कुछ नहीं।

अब कभी पुस्तक लिखना इसी बातको सबसे अधिक बाह रत्नकी चेष्टा करना। पतिव्रत विद्वत् कभी विद्रोहका स्वर मनमें नहीं जाना चाहिये। लेकिन पति भी मनुष्य है मनुष्यका भगवान्के रूपमें पूजा करना वैयक्त निष्ठ ही नहीं, इससे वह भवनका भी और पतिका भी छोया बना देती है।

मुझे एक प्रश्न और करूँगा। "विद्वत् विद्वाने पतिको जाना नहीं, पहचाना नहीं।"

लेकिन विद्वाने एक बार जाना है पहचाना है अर्थात् जो १६ १७ वर्षकी उम्रमें विधवा हुई है उसे बरा भरणे अपने जीवनमें और किसीसे प्यार करने या प्यार करनेका अधिकार नहीं? क्यों नहीं? क्या सोच हैतनेपर पता चल जायगा कि इसमें बरी संस्कार किम हुआ है कि स्त्री पतिकी वस्तु है। स्त्रीके रूपमें नारीकी कोई स्वतन्त्र रक्षा नहीं है।

“हम संशयके अन्दर दिन बिता रही थी। जिसमें इच्छा नहीं है, उसके लिए क्या बन्धन ही अच्छा नहीं ?”

बन्धन कब तक सभी अच्छा होगा जब इस बन्धनका अन्तिम निर्णय हो जायगा कि विवाह ही नारीके लिए सर्वश्रेष्ठ व्यवस्था है।

लेकिन मैंने कहीं भी विधवा-विवाह नहीं करवाया है, वह बात तुम्हें विचित्र लग सकती है।

इसका उत्तर यह है कि संसारमें बहुतेरी विधवा वीधे हैं और वेष्टा करनेपर भी उनके कारण नहीं मिलते।

तुम मेरा आशीर्वाद लेना।—

—श्री धर्मचन्द्र चट्टोपाध्याय

मंगलवार, ५ अगस्त, १९१९

बाबे पिनपुर-दरवाजा

17

परम कल्याणीमातु। आपको काफी और अन्दरकी बूझी पहचानें बचावमय मिल गई हैं और इतनी जल्दी उत्तर देने के लिए, वह देखकर अपने आपको ही झुंझी हो रही है। ऐसा लग रहा है कि इस बार आपको बहुत-सी बातें कहनेकी आवश्यकता है। लेकिन आपको तरह-विध-विधानों पर लिखनेकी छक्ति मुझमें इतनी कम है कि हिलेगी मिथयन लफ-साफ सुना देते हैं कि मेरे निताम किटुलक और बच्चों के लिए कितने हुए पढ़ाई के पढ़ पढ़नेमें उनके लिए वेद कायम रहना कठिन हो जाता है और अगर वह किसी तरह समाप्त होते हैं तो अर्थ समझनेके लिए पढ़ी-पढ़ीका पढ़ना एक करना पड़ता है। अभियोग विद्वत्ता निराधार नहीं है असम्भव विनयकी बोझाई देकर भी इसका प्रतिपाद नहीं किया जा सकता। और इसके नमूनत आपको बचित नहीं किया है। इस लक्ष्यको गुप्त रूपसे अगर आप अपने हृद-मित्रोंमें प्रकट कर देंगी, तो मैं नाराज नहीं हो जाऊंगा।”

बहुतेरी आश्चर्य-महिमयें मेरी मित्र हैं। उन्हें पत्र लिखने और मित्रकी प्रेरित ही निःसंकोच होकर लिखनेमें मुझे सक्षम नहीं होती। लेकिन हमारा

सम्मान और उल्टे नियम-कामून ऐसे हैं कि छोटी बहनसककी जिष्टी सिम्नेमें देवक संकोष ही नहीं होका मी होती है कि कहीं आपके जमिमावक या पति कुछ समझ बैठें और उसकें किए आपको बुझल ठठाना पड़े। फिर मी जो आपको इतनी बातें सिम्नेमें बैठा हूँ उससे आपके पत्रोंको पढ़कर मुझे बारम्बार मही बगा कि मित्त तममें नारीमें आत्म-भर्षावा उत्पन्न होती है यह उली टमकी कितली हुई है। यह गाम्भीर्य, यह साहस और संयम नारियोंमें पचीलकें इधर पैदा होते देख्य है ऐसा मुझे मही बगला। हों, आपके बारेमें मैं सज्जती कर सकला हूँ। लेकिन सज्जती न होनेसे ही मैं निश्चित होऊँगा। क्योंकि निरान्त तरंग बलसकी अग्रणीय रमणीसे पक्ष-अपवहार करनेमें क्यों हिंसा और संकोष होता है अगर उस टमको पार कर मर्य हैं तो अनायास ही समझ जावगी। लेकिन सबसे बड़ी बात यह है कि तुमने मुझे बडा मर्य (बादा) कहा है। बड़े मर्यके सामने छोटी बहनके किए समझनेकी कोई विरोध बात नहीं। बड़े मर्यके सम्मान और मयावाकी अक्षुण्ण रहते हुए तुम्हें बर हष्म हो और जो हष्म हो किलना और जितना चाहे बड़े मर्यपर अत्याचार उपद्रव करना, मुस जानम्य ही होगा।

तुम्हारी बिष्टीका और डेल सिम्नेका डंग तथा धंगिमा देखकर मुझे बारम्बार बुद्धि (निरुपमा) की याद आती है। तुम व्योमकी किलाबटवक मानों एक है।

पानीमें धौंगनेके कारण इन बार-पोंच दिनोंसे बर-सा हो गया है। पछी नहीं जा पानेके कारण तुम्हारी कापीका बड़े प्पानसे पढ़नेका अवकाश मिला। पढ़ते पढ़ते कैसा बगा जानती हो? एक कीमती पीलोंकी दूकानमें बेमिश्किलते दिन्नी पड़ी पीलों देखकर उन पीलोंकी कीमत का जानता है उसे जैना कह होता है ठीक ऐसा ही। ठीक इसी हाकतमें एक दिन बुद्धि (निरुपमा)की रचनाएँ भी मिली थीं।

दीपी तुम्हारे पास बहुत कीमती भात-मलाका मौजूर है। पर बहुत ही विशुद्ध है। मेरा पेशा यही है इनसे बारम्बार मही बगला है कि उसकी तरह तुम्हें भी हाथ पकड़कर साहमर भी सिन्ना सकला ता इसके परसे मैने तुम्हें जो आशीर्वाद दिया था, उसकी शक्तियोंके पल-पूर्यसे भर उठनेमें अधिक देर

नहीं बगाली और 'दीदी' की कोटि की एक और पुस्तक लोगोंकी नक़्क़ोंके सामने आनेमें बहुत निरुपम न होगा। लेकिन जब यह होनेका नहीं तो दुःख करनेसे क्या होगा। मनमें सोचता हूँ, इस तरहके पैकड़ों केवल केवल मोटा-सा तिला देनेके अभावके कारण नष्ट हो रहे हैं। कौन कवर देता है। जो केवल कृता करकट है जिनमें मोटी कपड़ोंके सिवा और कोई शक्ति नहीं बही टोकड़ियों गंदगीसे बंदका साहित्यको वृष्टि और भयान्तान्त कर रहे हैं। पर जिनोंने संसारमें स्वयंकी उपस्थिति की है, अपने जीवनसे जिनोंने जोर और प्रेमके स्वरूपका अनुभव किया है वे अन्तरात्मा ही पड़े पड़ते हैं। दुस्तकी भागमें कलकर जिनकी अनुवृत्ति छद्म और स्मृ नहीं हो पाई, उन्हींपर आकस्मिक साहित्य-सर्जनका मार भा पड़ा है, इतिवृत्त्य साहित्य आकस्मिक इस तरह नीचेकी ओर आ रहा है।

जीका, केवल दुष्टपक्षमें अनुभव करनेसे ही किसी चीजको मायामें व्यक्त नहीं किया जा सकता। सभी चीजोंको कुछ-न-कुछ सीमना पड़ता है और यह सीमना सदा अपने आप नहीं होता। लेकिन क्या करें दीदी, तुम्हें तिलाकर निरुपमाकी तरह बना लूँ, रचना अवकाश नहीं। और जो नहीं है उसके लिए कल्पनेसे क्या होगा।

जो कुछ भी हो तुम्हें मोटे रूपमें एक उपदेश देना है। रचनाको अण्वाणोंमें विभक्त करना चाहिये और रचनाका बीजक जाना भाग लेलकके मुँहसे न कलहाकर पाव-पात्रियोंके मुँहसे कहलाना चाहिये। जहाँ ऐसा नहीं किया जा सकता केवल वहीं लेलकके मुँहकी बातोंसे पाठकोंका धीरज नहीं धूँलता है। और एक बात यह है कि अधिक छात्री-ओदी बातोंको लेकर अपनेको और पाठकोंको धुलन देना चाहिये। बहुतेरी बातें उनकी कल्पनाके लिए रात छोड़नी चाहिये। लेकिन कुछ लेलक करें और कुछका पाठक पूरा कर के यह बात दिखा-छापेस भी है और मुक्ति-छापेस भी।

अबसे तुम्हारी धिखा शुरू है। अण्वाणोंमें बँटकर मेरी पुस्तकोंके हंगपर लिखना आरम्भ करो और दो अण्वाण मिलकर मेरी पात मेको, मैं बाद-कूटकर (अपनी सामान्य धार्मिक अनुभवा) तुम्हें आपस कर दूँगा और उसीके साथ

काटनेका करण भी मिले होगा। यह परिश्रम मैं क्यों करूँगा जानती हो बीबी ? तुम्हारे द्वारा तनमुख ही छात्रिस्वर्गके भविष्यमें पूजाकी सामग्री बनानेके लिए और वह आशा करता हूँ कि वह बीबी बहुत कुछ मूल्यकी भ होगी। यदि तुम्हारे अन्दर इस बस्तुका मूल्य स्पष्ट नहीं देखता तो तुम्हें ठीक राखी रखनेवाली मद्रदाकी या दूसरी बुद्धिमत्की बातें मिलकर अपना और तुम्हारा दोनोंका समय भ्रष्ट नहीं करता।

मेरी इस बातकी याद रखना, मेरी आशीर्वादे तुम किसीसे कम भी न होगी।

तुम्हारी कापी दो चार दिनोंके बाद वापस कर दूँगा। 'काको' कहानीकी मेरी परिणीतकी तरह और एक बार अभ्यासमें बाँटकर नहीं भेज सकती हो। बीबी पहले बहुत कुछ बहुत कुछ उठाना पड़ता है अवधिगु होनेसे काम नहीं चलता। यह बस्तु इतने दुर्लभ और इतने परिश्रमकी होनेके कारण ही इसका इतना मूल्य है। पहले ऐसा लगता है कि बहुत-सा परिश्रम व्यर्थ जा रहा है। लेकिन कोई परिश्रम कभी व्यर्थमें नष्ट नहीं होता — किसी-न-किसी रूपमें उसका एक मिलता ही है। यह बहुत हो गई है ऊपर आनेके लिए वह बहुत थिल-पों मचा रही है इसलिये आज यही समाप्त करता हूँ। आज ही पेटमें भय नहीं पड़नेके कारण जिद्दीमें गड़बड़ी रह गई। अब कुछ ठठा कर पढ़ना और कहीं अगर कोई बात सन्निहितेकार नहीं है तो 'बड़ बापा' होनेके कारण मुझे माफ करना। मेरा आशीर्वाद लेना। रातके छंदे बायें बने।

तुम्हारा बाबा।

अब ठीक लगेगा तब स्वयं ही मासिक पत्रमें अपनेके लिए भेज दूँगा। मेरे भेजनेसे कभी कोई सम्पादक 'ना' नहीं करता। वह जानते हैं कि उपयुक्त न होनेपर मैं नहीं भेजता। पत्रपत्रिके कामोंके कारण तुम्हें बहुत कम समय मिलता है यह ठीक है। फिर भी यह तब है कि अनवकाशके अन्दर तो हमेशा कभी समय मिल जाता है, लेकिन अवकाशके अन्दर कभी काम करनेका अवकाश नहीं मिलता।

परम कस्याजीबासु । कम और आज गुफारी बही और छोटी दोनों चिट्ठियाँ
मिलीं । पहले अपना समाचार दे दूँ । मैं हमेशा सारे दरवाजे और लिफ्टियाँ
खोलकर छोटा हूँ । उस दिन बार बने नीचे घुटनेपर देखा तो बिस्तर तकिया
की बात यह कि उस दिन शामको भी रास्तेमें कम नहीं मीगा था । बाँधोको
मिलाकर कुछ खर-सा हो गया । लेकिन एक दिनमें ठीक नहीं हुआ, बढ़ता ही
गया । अब यह ठहर गया है । दूसरी बात और भी मजेदार है । कई दिनसे
बाहिले पैरके घुटनेके कुछ नीचे इतनी जकन और बुझी हुई कि बैचन हो
गया । बार दिन पहले खैरे ठठकर देखा कि एक जगह बाक होकर पम्पना
छ हो गया है । कुछ कुछ सूजन मा है । कुछ दिनोंसे तुन रहा था कि इस तरह
बैठी-बैठी रोग लूट जाता है, पर यह क्या है अचानक भी देखनेका मौका नहीं
मिल्य । खेबा खबर डलीने पकड़ा है । उसके सारे कुरा हाक रहा । टिपर
आबोहीन जगाना शुरू कर दिया । लेकिन कई बार जगावार जगानेसे ठठने
देख कम चारन किया कि सचमुचके बैरो-बैरीका होना कहीं अच्छा होता ।
डाक्टरने आकर घुरी तरह पटकाना शुरू किया—आपमें क्या किसी विषयमें
तनिक भी छम नहीं है । अब कास्टिक या पलिट्रेटिक जगाकर जो कुछ बाँटें,
करें मैं बना । जो कुछ हो बाह्ये ठण्डे होकर हवा और मास्किणकी व्यवस्था
करनेका हुकम देकर कह गये—दोनों पैरोंको तक्रियेपर रखकर पुरबाप पड़े
रहिये । क्या करूँ बीबी, इसलिये पड़ा हुआ हूँ । तीसरी बात है मैं कभी
भमसका रोगी नहीं रहा इतना कम खाता हूँ कि वह भी पात नहीं पटकता
कि कहीं ठठे भी भूखी नहीं मरना प" । उस दिन बारपर बनाये गये कुछ लम्बे
बरसली लिख दिये । पर आज भी उनकी डकार था रही है । मैं इस देशका
मशहूर आकामी हूँ । बहानेके दरसे किमी बीजका आलानीसे मुहमें नहीं बाँटता
मुससे यह अत्याचार कैसे तहा जाय ! क्या कहतो हा बीबी, ठीक है ! लेकिन
परके लोग नहीं समझते । वह तापते हैं कि मैं खानेके कारण ही मैं बुझा
गया हूँ । अतएव खानेसे ही उनकी तरह मोटा होकर दायी हो जाऊँगा ।

स्वर्गीय गिरिध बाबूने अपने भाबू इसन'में जयल बातकी एक बात कही है— मज्दूरी बड़ी बकली होती है, वह मज्दूर मो लाती है ।" औरतकी बासिको उन्होंने पढ़ान दिया था ।

आज बीच बर्य पहलेसे हम केवल लानेको ही लेकर जाती बकते आ रहे हैं । उन्होंने नहीं लया और न लाकर बुझे हैं । पर-गहस्वी और रतोर किन्हीं किन्हीं हैं । जहाँ दोनों बीसों के बर्गगी बहाँ बाहर बैरगिनी हैं बाईगी इत्यादि किन्हीं ही बरें । मैं कहता हूँ—मैं मार, बैरगिनी होना है ठा जल्दी हो जाओ । तुम तो मुझे हर दिना कर कौटकी तरह सुला रही हो । यथार्थमें मैं सुलाको किसीने नहीं देला । मैं अन्तर सोचता हूँ कि अगर सचमुच ही कहीं स्वर्ग है, तो बहाँ एक बाबूनी तुम्हें लानेके लिए इसनी बर्बरली नहीं करता होगा और अगर है तो मैं नरकमें जाऊ ही पत्थर करूँगा ।

हाँ, एक बात और है । कोई बीच दिन पहले कुत्तेका लगड़ा मिटाने गया, तो कहींसे एक लोखे कुत्तेने आकर मेरी हथेलीमें बाँव जमा दिया । अम्भगा कुत्ता कितना अट्टहा है । उसे अपने 'मे' के बगुल्ले बसाने गया था । बरके मारे किसीसे कहा नहीं । सुल गया था लेकिन कलसे फिर बर् हो रहा है ।

लेकिन अब नहीं । किन्हीं मही अपनी धारीक कुल्लुआकी ताकिनाको एक प्रकारसे समझ करता हूँ । लेकिन सुलकी बात है कि मैं बूढ़ हो गया हूँ । अबसे एक-न-एक बहाना करके बकना होगा । न जाने कितने प्रकारके बुल्लेन्य और आफत-बिपत्तों बीचसे ४ बर्य काटे हैं । मुना है मेरे बचने बाकतक ४ तक कोई नहीं पहुँचा । कमसे कम इस बातमें तो मैंने अपने बापरायोंको इयाया है । और बाहिये ही बका !

जाने हो बूढ़ोंके मरने-जीनेको लेकर तुम लोगोको खिन्न नहीं करना चाहता । लेकिन बीसों तुम भी तो अच्छी नहीं हो । धारीक बकलरन्ना । परिभ्रम करनेकी आवश्यकता नहीं, बगी होकर पर बीट आओ तब तब-कुछ होगा । तुम्हारी कापीकी लारी रचनाओंको ध्यानसे पढ़ गया । इसमें तब-कुछ है लेकिन पिछा नहीं है । लासि सुन्न करनेके बीरकका भी बापस करना चाहिए मार, नहीं तो केवल अपनी अनुमूर्तिसे सम्बन्धने काम नहीं बनता । पर मैं इसी पेटोमें हूँ और धानता हूँ कि इसना तिसा सेनेमें मुझे अधिक देर नहीं बयोगी ।

कितना मित्रता चाहिए, कितनी बुराई छोड़ देना चाहिए, कितने चीजें चाहिए—

“कहे जा ता सब सब नच

कवि सब मन मूमि उमेर अनमरधान

अबोभार बेवे डेर सब बेनो ।”

इतनी बड़ी सब बात वृत्तही नहीं है। खीरी कितनी घटनाएँ घटी हैं उनमेंसे सारी नहीं कितनी चाहिये। कुछको साफ-साफ कहना चाहिए, कुछ इशारेसे कुछको पाठकोंके मुँहसे कहकरा लेना चाहिये। हाँ, तुम्हारी कितनी सहायता कर सकता था, केवल पत्र लिखकर, काट-कूट कर, दूर रहकर इतनी नहीं होगी फिर भी चेष्टा करनी ही होगी। और इस बार भी आइये निश्चय लडा हो तुम्हारे हिन्दुस्तानियोंके देशमें १०-१५ दिनके लिए वहीं नजरोंक ही मकान लेकर थोड़ी सी सहायता करनेकी चेष्टा करूँगा। और अगर मेरे तनाउन आकरने उस बख़्श के लिया हो वह यहीतक।

“मदिराई ! वे निराफ़र रहें उनमेंसे बहुतोंके सामने तुम्हें जानेकी आवश्यकता मुझे प्रार्थना ही नहीं होती है। एक बात साफ़ कर दूँ। वे दूरसे तुमनेमें ही” यह कार्य है उच्छिष्ट शिक्षा है। हो-बारको छोड़कर वे मन-ही-मन मुझसे बहुत डरती हैं। उन्हें निरन्तर अगता है कि मैं उनके अम्बरको मभीमूर्ति देखे के रहा हूँ। इनीलिए मेरे सामने उन्हें चेन नहीं मिलती है। उनका अन्तर इतना दुर्बल है वहीबलते ऐसा मर है। बन्धुता इन लोगों के लक्ष्य ममकी क्षिपों बंगालमें और नहीं है। खीरी मैंने कभी भी लाने देनेका भेद नहीं किया है। लेकिन “मदिराई”के हाथोंका कुछ भी नहीं लाया। लाया है केवल जाहीके हाथोंका जिनके लीं बाप दोनों ब्राह्मण हैं और व्यास भी ब्राह्मण ही हुआ है। समाजकी हो इसमें कुछ बनता दिगड़ता नहीं लेकिन उस तरहकी किसी-कुछी अतथा पुत्रा में नहीं लाया। कहते हैं कि दारु-बाबू बड़ी-बड़ी बातें लिखते मर हैं पर पचार्यमें बहुत कहते हैं। मैं कहते नहीं हूँ बीसा लेकिन केवल गुस्सेके कारण ही इनके हाथोंका नहीं लाया। और शायद यह भी देखा है कइकिबोमि लाने पत्रह जाने कुरूपता होती है। फिर लाहुन पाठकर और कपड़ कपड़ोंसे और बानुनाजिक गलतों के अर्थतक सब जान। केवल बार-बार कइकिपों

को देता है, जो स्वयं ही अन्धकी पात्री हैं। बी ए पाठ होनेपर भी हमारी बहनोई और उनमें अन्तर नहीं किया जा सकता। इतनी अन्धकी है कि अन्धता है वे आज भी हिन्दू कहकरियाँ ही हैं।

कहकरियोंकी निम्न कर रहा है। इतिहास छायाद तुम्हें बहुत खोब हो रहा होगा। लेकिन जानती हो हा बीबी अम्बर अम्बर तुम लोगोंके प्रति मुझमें कितनी अन्ध कितना स्नेह है। केवल उनका बनना ब्रह्माका प्रदर्शन और कुलदेवताकी रीतिरिवाज का सम्म, और जो सब मही है उसका मन्त्र हमी बातीको देकर मुझे इतनी अन्ध है।

उनके सामने तुम मन्त्रकी पात्र बनोगी। क्या कहूँ इनमेंसे एकाच दर्शन को पात्रीमें भरकर अम्बर तुम्हारे कानपुरकी आश्रय कर सकता। और कुछ न हो, माईके काम आ सकती।

‘बादाकी मर्यादा ! कैसे जानोमी, तुम्हारे ही कोई बादा नहीं है।

तुम्हारे पतिके उदार विचारोंकी बात सुनकर बड़ी खुशी हुई। मैं हृदयसे उन्हें आशीर्वाद देता हूँ। लेकिन बीबी उन्हें एक बात कहनेकी इच्छा होती है। मैंने स्वयं कहफनमें एक बार छह-सात ही कुलस्थागिनो बमाकिनोंका इतिहास संभर किया था। बहुत समय बहुत रुपये इसमें नष्ट हुए थे। लेकिन उससे मुझे एक निश्चित शिक्षा भी मिली थी। बहनामी देश-भरमें फैल गई पर इस बातको अन्तरिन्ध करते अन्त तक कि जो कुछ त्याग करके जाती हैं उनमें अस्त्री प्रतिष्ठित प्रायः लक्ष्मण हैं। निश्चयार्थ बहुत ही कम है। पतिके अधिक रहनेसे ही क्या और कड़े पहरेमें रहनेसे ही क्या। और बिचका होनेसे भी क्या। बीबी, अनेक दुःखोंसे ही नारी करना बर्तन नष्ट करनेके लिए तैयार होती है और जिस लिए होती है वह पर-पुरुषका रूप नहीं और किमी भीमस्य प्रवृत्तिका बोध भी नहीं। जब वे अन्धी इतनी बड़ी बस्तुको नष्ट करती हैं तो बाहर जाकर किसी आश्चर्य बस्तुको पानेके कोमते महीं, किन्तु किसी बातसे अपनेको मुक्त करनेके लिए ही इस दुःखको भिरपर ठठा लेती हैं। इन सब बातोंका तुम छायाद नहीं समझोगी और मेरा कहना भी छायाद जामा नहीं देता। लेकिन सबसे बड़ी बात यह है कि तुम तो केवल नारी ही नहीं हो, मेरी छोटी बहन भी हो न। और संसारमें यह बस्तु निरान्य दुष्ट नहीं है।

‘कहानी के भीतर कितना सच और कितनी कसमना है नहीं जानता। सेफिम अगर कसमना है तो अकसर ही। बहादुरीकी बात है। देखता हूँ साइकल तो ठिकाना नहीं। वह कौन है? अब पत्रिका के बारेमें कुछ कहना चाहिये। उसे अधिक दिनोंसे नहीं जानता हूँ सही। पर वह जानता हूँ कि वह निर्मल्यपरिच और सचमुच ही बहुत अच्छा कहका है। तुम्हें खयद ‘दीदी’ कह भी सके क्योंकि उसमें छायद दो-चार महाने जोड़ा ही होगा। उससे कभी किसी नारीकी सम्मर्बा नहीं होगी। मेरा तो बहो विश्वास है। उसे तुम जिम्मे किन्ना लकड़ी हो, कोई नुकसान नहीं। और इसके अन्तर्गत तुम भी तो किछु स्वर्ग हो न। कितना कैसा सम्मान है कैसी सम्बाध है, मेरी हद पारणा है कि वह तुम्हारे निष्कट सुरक्षित रहेगी। सुनता हूँ कि इसी बीच वह प्रचार कर रहा है कि बोड़े ही दिनोंमें बगला-साहित्यमें एक ऐसी सेलिका दिखाई पड़नेवाली है। जो किसीके नीचे नहीं लाड़ी होंगी। जब एक आदमी उस ‘मिशन’को अपनेके लिए मेरी सुझाव करने आया था। मैंने नहीं दिया। कहा कि पत्रिकाके उपपुष्ट नहीं है। अन्तर्वाचीकी अकसरत नहीं। बहुतसे बहुत अच्छा कहेंगे, जानता हूँ। निम्ना करनेवालोंकी भी कमी नहीं होगी, वह भी जानता हूँ। मैं बीरब रसकर एक साज्जा इन्तखार कर अब यादिक पत्रिकामें अपनेके लिए दूंगा वह वह सम्येह आता चेया।

मैंने तो तुम्हें छिप्पा बनाना स्वीकार कर लिया है। पर देखना बहन, अन्तमें बूरीकी तरह तुम्हको मारनेकी विषा नहीं हासिक कर देना। वह तो मुझसे बड़ी हो ही गई है; हो सकता है अन्ततः तुम भी बड़ी हो जाओ। छठारमें विचित्र कुछ भी नहीं कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

जेफिम इसे स्वीकार करेगा तब वह तुम कितना सुखित करोगी कि तुम खंगी हो गई हो अब कोई रोग नहीं है। नहीं तो दिक्की बीमारीबाजे आदमी को छगिर्द नहीं बनाईगा। उसे पहले डाक्टरका प्रमाणपत्र पेश करना होगा, इस बातको बताये देता हूँ। मैं परिभ्रम करके तिलाईगा और तुम मजानक पक बसोगी मेरे परिभ्रमका बेकार करोगी वह नहीं होनेका।

तुमने एक बार निम्ना या ‘आपका परिचित भीरामपुर’। और ‘अबरामपुर’ क्या अवस्थित है? उसके मछेरिका और बरोंकी तरह मच्छड़ोंका छुट्ट आछानीसे

मूक जाव ऐसे भावमी तो साबद ही भिन्न । पिछले पैमाने महीनेमें इमी बगसे बहुत मूक (लिबबो) का आम-बग नहीं स्वीकार कर सका । बबरामपुरको एक ओर लहरी मुझे बाधा कहती है और मैं कहता हूँ उसे छोटी सीरी ।

देहरी का रही हो ! जब तुम्हारा जन्म भी नहीं हुआ था तब मैं उस देहरीकी नहरके किनारे पकी खिचियाँ बटोरता था और पन्दा बाँधकर गिरगिट पकड़ता था । ओह, कितने दिनोंकी बात है ! जब रोक नहीं बनी थी तब छंटे स्त्रीमरपर बढ़कर आगसे खाना पकता था । तुम्हारे बैंगलेको भी मैं धावद औल्लोंसे दित रहा हूँ । जल्दा तुम्हारे परसे निकलते ही बाहिने हाथ सूरज नहीं निकलता है ! उन दिनों छती-बाग था इली लखके किसी नामका घाट था । तुम्हारे बाँहसे धावद को मीक होगा । कुछ काम बर्हो जाकर बैठा करता था । मही जानता उस घाटका अस्तित्व आज भी है या नहीं !

'मुमकड़'को जाने-जानमें कोई बाधा नहीं दिलाई पड़ती । जल्दा, बर्मा की इतनी बातें कैसे जान लीं ? बर्माका मजिस्ट्रेट (डिप्टी) मूक था, यह किसने कतलिया ! माँहसे जाने जानका रास्ता है यह किससे सुना ! अगर लबमुच ही बर्मामें रही हो, तो कहाँ थी ! उस देहरीको कोई भी स्नान नहीं, जिसे किसी दिन इन दोनों पैरोंने नहीं नापा हो, फिर भी मेरे जैसे व्यक्तियोंके बादशाह सगरमें कम ही हैं ।

'राजदरमी' कहाँ मिलेगी ! वह छोटी मनगदन्त कहानी है । श्रीकान्त ठक्कासके विद्या और कुछ नहीं है । उन विद्यावार अज्माहोपर प्यान मही देना आदिन । कहानी क्या लज है ! किसकी कहानी ! तुम जोतो रडो दीर्घजीवी बनी बारम्बार नहीं आधाबाँध देता हूँ । मेरे कहनेपर भी कभी स्वाभ्युदय प्रति भूलकर भी आपरबाहो नहीं करना । तुम्हें बला नहीं है, फिर भी न जाने क्यों तुम्हारे प्रति बड़ा स्नेह उत्पन्न हो गया है । यह धावद तुम्हारे नतीवकी बात है । मुझ पेता कम रहा है कि अगर पैता आलमो नहीं हाता तो बाइमे केवल तुम्हाको दैलनेके लिए आनपुर आता । लेकिन कभी यह दानेका नहीं यह भी जानता हूँ ।

तुम्हारे दोनों बर्षोंको बहुत-बहुत आशीर्वाद देता हूँ । उन्हें माँ-बापका गुण भिन्न गया तो संसारमें लार्पक होग । लेकिन तुम्हें जोरित रहकर उन्हें आदमी

बनाना होगा। मर जानेसे काम नहीं चलेगा। ऐसा होनेपर मुझे भी घायर सन्मुख ही बहा फड़ होगा।—बाबा

मन कहता है कि तुम्हारी सिकलितेसे किसी चिट्ठीके सामने मुझे इस बेतरतीब चिट्ठी भेजनेमें क्या आती है।

बाबे शिवपुर ७ म्यत्र, १३२९

परमकल्याणीवानु। तुम्हारी चिट्ठी मिली। कुछ कामकी बातें हैं। बूझते मुझे बड़ी आशा थी। लेकिन यह 'दीदी'के जन्मका और कुछ नहीं मिल सकी।

क्यों जानती हो! बार-बार बर-तप हस्तादिके पत्रकेकी आममें उसके अन्तर को मधुर या वह उम्रके साथ ही सुख गया। हों अतिरेक न हो तो हमारे पत्रोंकी कौन रही है जो इन बातोंको कुछ कुछ नहीं करती! जाने दो। तुमसे मुझे द्वितीय आशा है। तुम्हारी जो उम्र है वही मनुष्यके रचना होनेकी उम्र है। इसीलिए मैं तुम्हें सिखा सेना चाहता हूँ। और इसीलिए ही तुम्हारी किसी रचनाको जन्मे देनेके लिए तैयार नहीं हुआ। मैं अपनी तरह जानता हूँ कि अपनी रचना अपने नामसे ज्येष्ठोंमें देखनेकी साथ बहनोंको होती है। लेकिन यह भी जानता हूँ कि तुम एक साल सत्र करोगी।

लेकिन सिन्धानेकी यह सुविधा नहीं है। जाना भी सम्भव नहीं है। फिर भी एक बार घायर उपर आऊंगा। जहाँ कहीं भी रहूँ तुमसे एक बार मुखाकाव होना ही सम्भव है। तुम्हें क्या लगता है कि इन्हींकी किताने तो पढ़ती हूँ उन्हें पढ़कर भी अगर लौल नहीं सकती तो ये दो दिनमें किन्ना कर देना क्या उम्मा बना देंगे। यह बात किमकुल साथ है। यथार्थमें यह सिन्धानेकी चीज भी नहीं है। फिर भी "यही जैन गुणगीने मृत्युके समर उलका" "हस्तादि हस्तादि।" मैं उपस्थित होता तो किन्नेके पहले तुम्हें यह कह देता कि जो तुम्हकी मर गया है जो पूरी कहानीमें अब फिर नहीं आयेगा उसके सम्बन्धमें पहले ही दो पृष्ठोंका इतिहास पाठकीको ह्रास कर देता है। मैं हाता तो कहते घुम करता यह कहनेके पहले बही कहना चाहता कि आरम्भ करना ही सबसे कठिन होता है। इसीपर प्रायः सारे पुस्तक निभर करती है।

मान को अगर इस तरहसे शुरू होता—एक दिन तुम्हारी मृत देह समझानमें, राममें परिणत हो रही थी। उसकी तेज काजकी लड़की मजरी निकट ही स्थित लड़ा थी। उनके मूर्तपर निर्वाणोन्मुख चित्तकी दीप्त शक्ति न जाने कितनी देरसे विशिष्ट रेखाओंके स्नेह स्नेह रही थी किन्तीने ध्यान नहीं दिया। अनानक एक समय उनकी तरा ठंडुपानीकी हथि पड़ते ही मानों वह चकित हो गई। लपका आया कि बिन्दे नखर बेहकी अमी अमी समाप्ति हुई है। वही मानों अकस्मात् अपने बचनकी मूर्ति धारण किये लड़ी है। उसी तरहका अनुमनीय रूप उसी तरहका अन्त माधुर्य मुँहमें मानों गहरे विराहकी छाया पड़ी हुई है। और इस सद्यः मादुहनाके मुँहकी ओर देख-देखकर उनकी चित्तका सूत्र अतीतके कितने ही पुष्प-सुगंधोंकी कहानियोंके अन्दरसे छाया-विषकी मूर्ति संवरण करने लया। उने बाद आई उस दिनकी रात, जब तुम्हारी पत्तिको लोकर किन्तु निराप होकर पहुँचे-पहुँच उसके घरमें पैर रखा था। उसके बाद कित प्रकारसे उसने अपने पूव विकसित रूपके आवरणको अंगोंकी मजरीसे विकसित गुप्त ही, उसकी छाया से एहमीमें सांझों आने एक कर दिया हवादि

इस अतीतके इतिहासको कितने सञ्चारमें समाप्त किया जा सके करना आवश्यक है। क्योंकि इस बातको ध्यानमें रखना ही होगा कि पुस्तकमें वह फिर नहीं आवेगा अतएव उसके चरित्रको निम्नारनेकी अधिक आवश्यकता नहीं होती।

इसके बाद कहानी छिन्नमें पहले जिसे प्यार करते हैं उसके प्रति ही अति-रिक्त प्रान देनेकी आवश्यकता नहीं। जो-जो लोग तुम्हारी पुस्तकमें खेमे पहले उनके चरित्रको अपने अन्दर दृष्ट कर लेना चाहिये। किन्तु मान को बिन्दे तुम मन्दी मूर्ति अन्तही हो तुम्हारे पिता या तुम्हारे पति। इनके बाद ये दोनों चरित्र अपने गुण-शायोंको जिये हुए कित माम्मेमें निम्न रखते हैं। उतीको निश्चित कर लेना चाहिये। मान को तुम्हारे पिता अपने कामोंके अन्दर, अपने माम्मे-मुकदमोंमें, तुम्हारे पति अपने मित्रकी नौकरीमें, उधारखानों, या रंगमंचों, अथवा तरह वर्णता प्राप्त कर सकते हैं। केवल सभी कहानी लड़ी करनेकी बजा करनी चाहिये। नहीं तो पहिलेहीसे कहानीका प्यार छोड़ भाषा-व्यक्त करनेकी आवश्यकता नहीं होती। जिसे हावी है उसकी कहानी भव्य हो जाती है।

और भी बहुतों को खी-खी भी हैं, किन्तु छिन्नके साथ-साथ कहानी को

बिना चिट्ठी लिखकर पठाना कठिन है। इन्हींको तुम्हें किसी दिन बता आऊँगा। लेकिन वह दिन कब आयेगा, इसे मेरे विधाता ही जानते हैं।" — मेरा मन विनत आशीर्वाद लेना।
—तुम्हारा दादा भी शरत्भक्त बहुपाध्याय

बाबे शिवपुर,

२४-११-२९

परम कल्याणीबाबु। कल रातके लार्दे इस बजे दीदीके घरते स्मैरनपर आज लखेरे तुम्हारी और सरोजकी चिट्ठी मिली। उसकी चिट्ठी अग्रेजीमें है। मैनी अग्रेजी नहीं जानता इसलिये अच्छी तरह समझ नहीं पाया। किसी मित्रान् इस मित्रके अपनेपर पढ़ाकर बाह्यमें बजाव दूँगा।

दीदीकी लालका बिना-कर्म बड़े धूमधाममें किया गया। मैं दूसरे काममें व्यस्त था। उनके इलाकेमें इनफ्लुएन्जा बुलार बहुत व्याप्त है गरीब दुखी कुछ काम नहीं कर रहे हैं। इलाकोंकी तरूँ के गया था, कुछ कैकल बोको ही मार लका और कुछ टहर लकता तो और नहीं तो बो-सीन शिकार मिल जाते। बदकिस्मतीसे पस्त हो गया। (इला और सात करके पचकी कमीमें ही तुम्हारे मयवान्के बरबोमें उन्हें तेजीसे आभव मिल रहा है।) फिर मैं वापस आ गया था कुछ दवा आदि इकट्ठा करनेके लिए। मगर ऐसा लग रहा है कि कल सवेरेतक अपना ॥ तुम्हारे काफी स्पष्ट हो जायगा। आज किसी तरह दवा जुमा है और इसी तरह दवा रहा तो परलौ फिर आऊँगा।

—तुम्हारा दादा।

बाबे शिवपुर (इबदा)

१०-१-१९२२

परम कल्याणीबाबु "बारिष्ठाक कार्मेलमें जानेकी मेरी बड़ी इच्छा थी। पर अगनी नई पाठशालाके काममें इतना व्यस्त था कि अपनेका समय नहीं मिला। अपनेको अब परलौके परिचित सभी कामोंके बाहर रीज से अपनेकी सेवा

कर रहा हूँ। इसमें अनेक सांसारिक मुद्दियों अनेक प्रकारके दुःख-कष्टोंकी बातें पड़ित होगी—उन्हें छाननेके लिए अब दुःखवा आया है। इसके अन्त्यवा इस कम्मे जीवन्तके अन्त्यमें कितनी ही गाँठें पड़ चुकी हैं। पर इतमीनानमें बैठकर उन्हें खानेकी उम्र अब मरी है। इसलिए कुछ अन्त्यवाजी ही बच रही है।

भावद तुम्हारे पिताजी तबीयत आबकक अच्छी है। करोबकी चिट्ठीसे ऐसा हो जगा।

मेरी खबर पहुँचा देनेके लिए तुम्हें लोग भिन्न ही आवेंगे। अतएव इस लिएमें मैं निश्चित हूँ। दादाका स्नेह और आशीर्वाद लेना। दूध बाग बैबल इस बातके लिए प्रायना करो कि फिर निश्चिन्त न हो जाऊँ।

—तुम्हारा दादा

बाबे शिवपुर (दरवा)

२७ अक्टू १९११

परमकल्याणीबालु,—जीका आज तुम्हारी चिट्ठी मिली। तुम्हें ख्याब नहीं है सदा, वह बैबल समयकी कमीक कारण ही। बीबी यथायम ही इस समय मुझे बरा भी कुर्मत नहीं है। कामेसका काम लार्क हुआ तो फिर शायद समय मिले। आजकल मुझे निरन्तर दो बर्र परहेमासे महात्म्य गान्धीके खनामरके दिन याद आते हैं।

मैं एक बार शिवपुर या। मेरे बगलका आदमी और सामनेके छर-मरत बन सब 'जान गई' कहकर गोली खा गिरकर मर गये। उस वक्त मैं मारा नहीं, मुझे जगो नहीं थी। कितनी ही बार आश्चर्य होता है कि उस दिन सर्तानिगनकी पोली करी नहीं जगी। आज जगाता है उसकी भी आपसपच्छा हो। "दादा

बाबे शिवपुर दरवा

१ जनवरी, १९११

परम कल्याणीबालु। यथासे और आबा। कामेसके समाप्त होनेके परहे ही

बचा भावा था, तबीयत निम्नकुल सराव हो जानेके कारण। सोचा था जानेके पहले ही तुम्हें चिट्ठी लिखूँगा, पर कित्त नहीं सका। गया पहुँचकर वहाँ किसनेकी सोची पर वह भी नहीं हुआ। अब झीटकर जबाब दे रहा हूँ। यह जो अब लिखूँ तब लिखूँ सोचता हूँ पर कित्तता नहीं इसकी भी एक कीमत है, नितान्त दुष्प्र बात मही है। लेकिन इस बातको कितने लोग समझते हैं। वे कहते हैं अपनी कीमत अपने ही पाठ रली, हमारी समूह चिट्ठीका जबाब देना उसीसे हमारा काम बरक आवगा।

किसी समय मेरे बारेमें समी कहते थे कि उसका शरीर बही दया-मायाका है। और आज समी बहनें माई माँझिों बन्धु-बान्धव कह रहे हैं कि उसकी देखको दया-माया छूटक नहीं गई है। मैं कहता हूँ इसकी मी कीमत है। वे कहते हैं कि उस कीमतसे हमें वास्ता नहीं तुम्हारी पहलेकी गैरकीमती वस्तु ही चाहिये। परकी एदिजीतकने उस स्वयं स्वर भिन्नया है। धावर उनका स्वर और समी स्वयंसे ऊँचा है।—बाबा

बाबे शिवपुर, इषका,

१ मई, १९११

परमकल्याणीपासु । "कई दिन हुए मेरे ऊपर एक दुर्घटना पड़ी है। एडवर्ट बैकमें बचातर्जस्व था अमानक बैकके बेल हो जानेसे लगाता है सब-कुछ हुआ। मकाम लतम हुआ। वाक्ताव लतम मही हुआ। सोचा था इस साल कुछ भी नहीं रख छोड़ूँगा, सब कुछ समाप्त करूँगा। पर पूँबीके समाप्त होनेसे सब-कुछ स्थगित रहा। लेकिन यह भी तो कुछ कम विपत्ति नहीं है कि कितनी हीने मेरे मार्फत अगना मयासर्जस्व मेरे ही बैकमें हुए विश्वासमें बसा रला या कि मैं कमी उन्हें भोला नहीं दूँगा। अब इन्हें पार्इ-गई चुकता कर देना होमा। बहुतोंे परिचारोंका भार मेरे ही कंधोंपर था। समझमें नहीं आता उनत क्या करूँगा। लेकिन यह बात निश्चित है कि मेरे बन्ध कर देनेसे उनका चून्दा मही जमेगा। मगवान् अगर देते हैं तो वह बुरी बात है। सोच रहा हूँ दो-तीन ही आकर दिम-रात परिश्रम कर देरूँ कि कमसे कम पाँच-छ हजार रुपये

कमा गईं। हो सकता है किमोक्ष जा सके, सम्भवितोंके परिवारोंको छेकर बड़ी बिन्ता है।

तुम्हारा दादा

बाबे छिबपुर (इकदा)

१७ मई १९२३

परमकल्याणीबानु। कुछ समय यहाँ नहीं था। सीनेक पटे हुए बारिखाकसे पर झैटने पर तुम्हारा पोस्ट-कार्ड मिला, इसीलिए ठीक समयपर बिट्टीका भ्रम न हो सका।

दुपखी डेकमें हमारे कवि काबी नबस्म इल्हाम अनसन करके मरणासन्न हैं। एक बजेकी यादोंसे जा रहा हूँ, देखूँ अगर मुष्कवास करने दें और देने-पर मेरे अनुरोधसे अगर वह फिर खानेके लिए राखी हों। न होनेसे उनकी ब्रिय आधा नहीं देखता हूँ। वे एक सप्ते कवि हैं। यदि बाबूको छोड़कर घायब इस बख्त इतना बड़ा कवि बूझ नहीं।

—दादा

शामठावेड़, पानिवास पोस्ट

मिना इकदा, ११ कार्तिक १३३३

परमकल्याणीबानु। लीका तुम्हारी बिट्टी मिली। इसी तरह बीच-बीचमें अपना कुछक समाचार देना।

मेरे मेंहमे भाई प्रमथल कन्याली से, घायब तुमने सुना होगा। वह कुछ दिन पहले दमर्ति लौटकर मंगलवारकी रातको बीमार पड़े। निरन्तर कहने लगे—बारम्बार बीमारोंसे यह शरीर धिक्कि हो गया है, इस छोड़ देनेकी ही आवश्यकता है। अगले दिन एक बजे पर और बिकार छाड़कर खुर बाहर भाए और मेरी छातीपर गिर रखकर शरीर त्याग कर दिया, लीनी, मैं बहू और प्रकाश भर थे

—दादा

[श्री हरिदास शास्त्रीको लिखित]

बाबे-शिवपुर हम्दा

१८-१-२५

तुम्हारी जिन्दी पढ़ी । इस बार काशीकी इतने लोगोंकी मीढ़में बैबल तुम्हीं आत्मोत्पत्ति से मग । पर तुम्हारे बारेमें कुछ भी नहीं जानता । इस पत्रकी पढ़नेमें कुछ समय नष्ट अवश्य हुआ । पर समय क्या बैबल गहर, दण्ड पत्र, विष्णु ही है इसके बिना और कुछ नहीं । उस दृष्टिसे तुम्हें इस सभी पत्रके लिखने और मेरे पढ़ने तथा सोचनेमें कुछ भी नष्ट नष्ट हुआ, बल्कि संजय ही हुआ । नारिवोंके लिए २२ से २५ के बीचकी उम्र सबसेअच्छी होती है । क्योंकि २२ २३ के बाद अब सबकुछका प्रेम आसक्त होता है उस बैबल आध्यात्मिक प्यारसे इसकी सारी भुजा नहीं मिलती । लेकिन यह ही हुआ एक पत्र—छारी रिक पत्र। किन्तु एक दूसरा पत्र भी है—और यही चिरकालकी सीमानाविहीन समस्या है । सगारमें साधारणतः पैदा नहीं होता पर भिन दो-बार व्यक्तिबोध योग्यमें होता है उनके समान माणवान् भी नहीं और आसक्तों भी नहीं । इनके हृदयमें ही काम्य-अज्ञानका सारा मापुर्ब संक्षिप्त हो जाता है 'पर इतना बड़ा क्षय भी क्षय नहीं है—

‘मुझ दुःख कुरी मार—

मुझे अगिषा से करे पीरिति दुःख जाय तार ठौर ।’

समाजमें भिन्न गौरव प्रधान नहीं किया था करता उस बैबल प्रेमके द्वारा ही मुन्नी मही किया था करता । सर्वाधीन प्रेमका मार छिपित होते ही बुनियाद हो जाता है 'इसके अन्तरा बैबल आनी ही बात नहीं मानी अन्तःकरणकी बात लभन गयी है । उनके कर्णोंपर दूसरेका वाक्य शब्द देनेकी छप्पा बहुत बड़े प्रेममें भी नहीं है ।' एक पाठ ।—यथाप्य प्यार करनेसे छिपोंकी शक्ति और साहज पुष्पसे कहीं अधिक है । वे कुछ भी नहीं मानती । पुष्प नहीं मरते बिड़क हा आते हैं, भिन्ना नहीं राठ बाँध तन्त्र स्वरसे घोषणा करनेमें

बुनिया नहीं करती।" समाजके अविचार अस्थाधारका जो पहले प्रतिपाद करता है उसीको बुल मोगना पड़ता है।

ई १९२५

कहा जाता है कि सच्चे प्यारके लिए संसारमें बुल मोगना पड़ता है। कोई न करे तो समाजके बेनुके अन्वावकाश प्रतिकार कैसे होगा ? समाजके विच्छादना और कर्मके विच्छादना एक वस्तु नहीं है। इस बातको ही लोग भूल जाते हैं।
—(साक्षाना, वैद्य १९४६)

१२

[श्री अक्षयचन्द्र सरकारको लिखित]

प्रियवर, हमारे उद्योगालोंको नाटक बनाकर अभिनय करनेके सम्बन्धमें साधारण निबन्ध इतना ही है कि वह नाटक लपका नहीं जा सकेगा और कोई व्यापारी थियेटरवाला उसके आयोजन नहीं कर सकेगा। यदि यह न हो तो छोड़ते अभिनय करने और उसके लिए दिग्दर्शक बननेमें मेरी कोई मनाई नहीं है। मुझे 'दत्ता' उद्योगालका एक नाटक सूझते भिजा है। स्वयं ही कुछ-कुछ रहस्यदम करके 'विश्राम' नामसे उसे 'स्थायी थियेटर' को देना खोचा है। मेरे उद्योगालोंमें बाप यह है कि नाटक बनानेके लिए उन्हें अनेक स्थानोंपर नये सिरेसे भिन्नना पड़ता है।

बाहरके लोगोंके लिए कठिनाई यह है कि वे नये सिरेसे तो कुछ दे नहीं सकते। केवल पुस्तकों या बातों हैं जिनको उलट-पेर कर कुछ लड़ा करनेके लिए बाध्य होते हैं। इसीलिए प्राया देलता हूँ अच्छे नहीं होते।

आपका—हारत बाबू (मासिक वसुमती माघ १९४४)

[श्री दिलीपकुमार रायको लिखित]

साम्प्रदायिक, पो पानिनास,

किन्ना हवड़ा

२९ मार्च, १९१९

मधुसूत, तुम्हारी पुस्तक और छोटी किट्टी मिली। एक रात दिनमें पुस्तकको पढ़कर लप्यात किया। बहुत अच्छी लगी। लेकिन दो एक मुद्दों में भी है। भारतके बड़े-बड़े शाने-बजानेवालोंमें अपना नाम न लेकर कुछ लिखना हुआ। लेकिन निश्चित समते आगच्छा हैं। यह गलती तुम्हारी हफ्ता हुआ नहीं है। अन्तःपुराणी-के कारण ही हो गई है और अविषयमें इसे तुम सुधार दो। इसके बारेमें मुझे कुछ मात्र संदेह नहीं है। सुधार देना भूलना मत। रायबहादुर मन्मथर महाशयके 'एसा बसा मूठे मूठे मूठे' का उल्लेख नहीं है। यह भी ध्यान रहे। क्योंकि मेरा विश्वास है कि वह किन्तु हुए हैं। वह तो हुई पुस्तककी मुद्रिका बातें। एक मत मेरा कि राय भी है। तुमने पूजनीय रविशङ्कर एक कथन उद्धृत किया है कि 'स्वतन्त्रतावादीको हम सम्मान करते हैं, इसीलिए रक्षक निम्नजन्म-समाजों बाहरके लोगोंमें उनके लिए भूला-बूझकी व्यवस्था करते हैं, और 'उन्मेषों'को बचा रहत हैं उनके लिए कि-हैं कि बड़े आदमी करते हैं।' बात सुननेमें अच्छी है और किन्हींने लिखा है उनकी मानसिक उदारता और निरपेक्षा भी बचपनमें प्रगट होती है। किन्तु वास्तवमें इतना बड़ा गलत कथन बुरा नहीं। विद्या, सम्पत्ता और कसूरके लिए 'उन्मेष' ही धारिये अगर भूल-भर्र स्थित हो, तो पेटकी पीड़ाते वह परेशान होगा। और सर्वसाधारणके मान हैं छोटे लोग और वे बड़ा कार्यरत ही बढ़ते हैं। एक उदाहरण भी। पाँडे-से स्वतन्त्रतावादी पेशेवालोंमें तुम जैसे दो-चार व्यक्तिोंका ध्यान पाकर अज्ञानक रेखागोलीके सीतरे हजेको छोड़ अन्तर्गत बुरे हजेमें बढ़ना शुरू किया है। अच्छा किसी हजेमें इनमेंके दो-तीन जनोंको तीन-चार पथे बिछा रहनेपर ऐसा है क्या समाज

होता है। हर किसीकी हिम्मत और प्रवृत्ति होती है कि उस कमरेका व्यवहार करे। एक टोकरी मिट्टीसे लेकर पनेकी चुपनी, पकोड़े लतार लीमें-ललित 'उस दरवाजे को मिलने देता है, वह क्या करी मूल सकता है। बात यह है कि अन्दर सोनेके पगमे बैठकर सन्देश लानेकी भी एक योग्यता है उसे अर्जन करना होता है। इस बातको सत्कारके समी देखोंके बड़े बड़े चिन्ताशील व्यक्तियोंने कहा है। तुम भी स्वीकार किया करते हो। नहीं तो अन्दरका दरवाजा खुला पाकर 'बाहरी व्यंजन' कोय इत्या मचाकर कहीं घुस पड़े तो हम क्या बिन्दा रह सकेंगे, अतएव इस तरहकी कठोरनाक आठ उधार बात फिर कभी नहीं कहना।

तुम्हारे कन्सर्टमें नहीं आ सका क्योंकि छात्र बरा अस्वस्थ था। दूसरा कारण यह है कि मेदिनीपुरमें प्रतिवर्ष कही न-कही बाढ़ आपगी ही। आना अनिवार्य है। सरकारने कोई प्रतिकार नहीं किया और न करेगी। पर बाढ़ देखकर एक स्वामी टेक्स बन गयी है। इस प्रकारसे हर साल बाढ़ पीड़ितोंकी सहायता करनेमें कौन-सी कार्यक्षमता है। सरकारको एक बात धारसे नहीं कहेंगे, एक चक्का मिट्टी खींचकर, रेककी लड़क फाटकर पानी नहीं निकाल देंगे,—कहीं लाहव पकड़कर केक म मेल दे। वे जानते हैं कि कककसेके मल आगेका यह महात्त कर्तव्य है कि उन्हें लपना-कपड़ा दें। क्योंकि उनके घर-बारमें पानी आ गुला है। इसके अलावा पचाके दिवारोंमें भी 'बोग हकबद होकर बर्षे बन्दे हैं जानते हो। केवल हनीकिए कि बगामें उनके घर-बार वह अनेक पश्चिम बंगके मल बोग उ हैं बपवा देंगे। केवल प्रेधान करनेके लिए वह ऐसी मजदूर आहमें आ बने हैं। इनके अलावा और कोई उद्देश्य नहीं है। मैं निश्चित रूपसे जानता हूँ कि इस विषयमें तुम्हारे अन्दर किसी प्रकारके मतभेदकी आशंका नहीं। क्योंकि तुम बुद्धिमान हो। जो लची बात है उसे समझेंगे ही।

अन्वहारमें देखा है कि तुम विद्यापथ का रहे हो। आशीर्वाद देता हूँ कि तुम्हारी यात्रा निर्दिष्ट और उद्देश्य लक्ष्य हा। मेरी उम्मीद हो गई है। अतएव अमर मुद्राकाठ न हो तो इस बातको बाद रचना कि मैं तुम्हारी विपदिन तुम-कामना करता रहा। आशा है तुम कुशल हो।

[श्री दिलीपकुमार रायको लिखित]

साम्प्रदायिक पो० पत्रिका, ७

मिमा इवय

२२ मार्च, १९१३

मध्यम, तुम्हारी पुस्तक और छोटी चिट्ठी मिली। एक रात दिनमें पुस्तकको पढ़कर समाप्त किया। बहुत अच्छी लगी। लेकिन दो एक मुद्दियों भी हैं। मारुतके बड़े-बड़े माने-बजानेवालोंमें अपना नाम न देखकर कुछ लिखना हुआ। लेकिन निश्चित रूपसे जानता हूँ वह गलती तुम्हारी हल्काहूय नहीं है। अक्षयचानी-के कारण ही हाँ याँ है और अक्षयमें इसे तुम मुफ़्त होने इसके बारेमें कुछ बड़ा मज़ा खींच नहीं है। तुम्हारा देना भूलना मत। रायचंद्रपुर मजूमदार महाशयके 'राधा क्या यूँ यूँ यूँ' का उल्लेख क्यों है? वह भी चाहिये। क्योंकि मेरा विश्वास है कि वह भिन्न हुए हैं। वह तो तुम्हें पुस्तककी मुद्रिका बार्ते। एक मज़ा मेरका विषय भी है। तुम्हने पूरबीक रचनाएँ एक कवन उद्धृत किया है कि "सर्वताचारकके दम अमरता करते हैं, इसीलिए एतकी निम्नवर्ग-समय बाहरके अंगनमें उनके लिए चूड़ा-बहीकी व्यवस्था करते हैं और 'तन्देहों को बचा रखते हैं' उनके लिए किई कि बड़े आदमी करते हैं।" बात तुमनेमें अच्छी है और अन्होन लिखा है उनकी आनलिक उधारता और निरपेक्षा भी यक्षमें प्रगट होती है। किन्तु वास्तवमें इतना बड़ा गलत कवन बूझ नहीं। छिन्न, सम्पत्ता और बक्षरके लिए 'तन्देह' ही चाहिये अगर चूड़ा-बार्ते लिखते हो, तो वेदकी सीढ़ते वह परेष्ठान हागा। और सर्वताचारकके माने हैं छोटे बीम और वे चूड़ा बार्ते ही बढते हैं। एक उधारण भी। मोदे-ले सम्पत्ताचारक देवेबाईने तुम जैसे दो-चार व्यक्तियोंका प्रभव पाकर आश्चर्य रोगाहीके तीसरे हर्षको छोड़ अमानक दूसरे हर्षमें बदना शुरू किया है। अन्ध चिट्ठी दन्धमें इनमेंके दो-तीन अर्थोंको तीन बार धन्दे पिटा रखनेपर ऐसा है क्या समाप्त

होता है। तब किमकी हिम्मत और प्रवृत्ति होती है कि उस कामका सम्बन्ध करे। एक टोकरी मिट्टीसे लेकर, थनेकी चुन्नी पकोड़े लम्बा 'तीर्थ-सहित' उस दृष्टिको जिसने देखा है, वह क्या करी मूक सकता है। बात यह है कि अन्दर सोनेके बरतें बैठकर सन्देश लानेकी भी एक योग्यता है। उने अर्जन करना होता है। इस बातको सत्कारके सभी देशोंके बड़े-बड़े निम्ताणीक व्यक्तियोंने कहा है। तुम भी स्वीकार किया करते हो। नहीं तो अन्दरका दरवाजा खुला पाकर 'बाहरी अंगनके जोग दस्का मचाकर कहीं घुस पड़े। तो हम क्या बिन्दा रह सकेंगे अतएव इस तरहकी कसरतका अति उदार बात फिर करी नहीं कहना।

तुम्हारे कन्वर्टमें नहीं जा सका क्योंकि शरीर बरा असुख था। दूसरा कारण यह है कि मेडिनीपुरमें 'प्रतिष्ठा' करी-न-कहीं बाढ़ आबगी ही। आना अनिवार्य है। सरकारने कोई प्रतिकार नहीं किया और न करेगी। पर बाढ़ देखकर एक स्थायी रेकस बन गयी है। इस प्रकारसे हर साक बाढ़ पीड़ितोंकी सहायता करनेमें कौन-सी सार्वजनिक है। सरकारको एक बात धरते नहीं कहेंगे, एक पत्रका मिट्टी लोडकर, रेककी लकड़ काटकर पानी नहीं निकाल देंगे,—करी साहब पकड़कर लेक न मेक दे। वे जानते हैं कि कलकत्तेके मद्र जोगोंका यह महान् कर्तव्य है कि उन्हें स्थाना-रुपदा दें। क्योंकि उनके घर-द्वारमें पानी आ चुका है। इसके अन्वया पत्राके दिवारेमें भी 'जोग दस्का' होकर क्यों रहते हैं जानते हो। केवल इसीलिए कि बरामें उनके घर-द्वार यह जानेपर पश्चिम बगके मद्र जोग उन्हें रुकवा देंगे। केवल प्रेषान करनेके लिए वह ऐसी भयंकर बरामें आ बने हैं। इनके अन्वया और कोई उद्देश्य नहीं है। मैं निश्चित रूपसे जानता हूँ कि इस क्षिपमें तुम्हारे अन्दर किसी प्रकारके मरमेरकी आशंका नहीं। क्योंकि तुम बुद्धिमान् हो। जो सभी बात है उसे समझते हो।

अन्वयारमें रेक है कि तुम विनापत आ रहे हो। आशीर्वाद देता हूँ कि तुम्हारी यात्रा निर्विघ्न और उद्देश्य सफल हो। मेरी उम्र हो गई है। अष्टेनपर अगर मुमकात न हो तो इस बातको याद रखना कि मैं तुम्हारी चिरदिन शुभ-कामना करता रहा। आशा है तुम कुशल हो।

पुनश्च—अगले १२ माहको ५ का हो चार्किंग। पहिले चार्किङका दुप
बेगौले भित्रनेके थिए कककचे चार्किंग।

साम्ताबेङ, पानिनास पोस्ट (इबरा)

९ अगस्त १९११

परमस्वामीजीके। मंद् तुम्हारी चिट्ठी और दिवङ्त होनी मिल गये।
कमरमें जानेके लिए समय नहीं था। क्योंकि अब तुम्हारी चिट्ठी मिली,
तब जाना नहीं जा सकता था। बुद्धलिवारको तुम्हारे बिदाईके उत्सवमें सम्मि-
लित होनेकी बड़ी इच्छा थी लेकिन इधर बंगाल-नागपुर रेलवेमें हड़ताल चल
रही है। यादोंका एक लड़ने लगा ही नहीं है। जो भी है। सात माठ घंटेके
काममें इबरा नहीं पहुँचती। और न भी गया तो क्या हुआ। कौन्से देवने
और कौनोंसे सुननेकी ऐसी कोन सी कसरत है। बहोसे हृदयसे आशीर्वाद देता
हूँ। तुम्हारा पत्र निर्विघ्न हो और तुम्हारी यात्रा सार्थक हो।

मैं बहुत अच्छा नहीं हूँ। शरीर निरन्तर खींच और विविध होता जा रहा
है। तुम्हारी दोनों पुस्तकें बड़े प्यारसे पढ़ीं। मनर परचाका अन्तिम हिस्सा
बहुत ही मधुर है। हरबकी लहानुमृष्टिसे जिस संसारको देखना सीखा है उसके
बारेमें जितनके अन्दर कितनी मर्याद कितना आनन्द उचित हो जाता है, उसे
इस पुस्तकके पढ़नेसे जाना जा सकता है।

तुम लगा ही जाल रहते हो। तुम्हारे पास समयकी कमी रहती है। लेकिन
हम बार बीटकर तुम्हें जितनेकी ओर जरा ध्यान देना होगा। जेलन-कार्यमें
जो हिस्सा-बीटल और कला है ठन करा और यानसे तुम्हें आगच्छ करना होगा।
देवक जितना ही नहीं मर्य न जितनेकी विद्याकी भी सीखना चाहिये। तब
सम्पत्तिस्थित हृदय जिस बातको शतगुणसे कहना चाहता है वही ध्यात संगत
होकर बराने गंभीर हृदयने ही सम्पूर्ण हो जाता है। बीच-बीचमें बड़े पैठना
तुम्हें आई है और बीच-बीचमें तुम आत्म-मिसृत् हो गये हो। अर्थात् पाठकोंका
समूह इतना आच्छा है कि शतशोकनकी लीढ़ी बार करके लग्न भी नहीं जाना

पाहता अगर उसे बरा-सी कटावाभी करके नरक पहुँच जानेका रास्ता भिन्न प्रय । इस बातको याद रखना रखनाके लिए सबसे बड़ा कोशिश है ।

मेरा लम्बेह आधीपाद सेना ।

—तुम्हारा भी शरत्चन्द्र आहोपाप्याय

साम्प्रदायिक पानिनास पोस्ट,

लिम्ब हफ्ता

११ फ़रवरी १९११

परमस्वभावबरोपु । मरू तुम्हारी बिट्टी पाकर फिटनी खुशी हुई वह तुम्हें भी बतलाना कठिन है । तुम मुझे मरवा करतों हो प्यार करते हो इसे भी अपर नहीं समझूंगा तो इस लकारमें और क्या समझूंगा !

तुम्हारे विदाके अभिनयनमें जो लोग सम्मिलित हुए थे उनके मुँहसे क्या कहा हुआ सब सुना है । तुम विदेश का रहे हो मगर क्या कस्ती कैदना । तुम निकट नहीं हो यह बाद आते ही मनको कह पहुँचता है ।

'मनेर परस'का अन्तिम अर्थात् तीनरा हिस्सा मुझे कितना अच्छा लगा था वह नहीं बतलाना सकिता । लम्बी लम्बा और दू लकी अन्तरसे छारे सतारके कांरा एक-दूसरेके फिटने भरने हैं यह मैं जाने कितने सख्त पावसे तुम्हारी पुस्तकके अन्तमें लिख उठा है । इलीस्ट्रिफ़ मुझे निरन्तर लगता था कि तुम शायद कितोके यक्षार्थ जीवनके दुःस्वप्नी कहानी लिखिबद्ध कर गये हो । लेकिन इसे लिखिबद्ध करनेके कोशिशको तुम्हें क्या और करने की इच्छा होगी । तुम्हारे भिताको नहीं जानता था परन्तु उनके अन्तरंग मित्रोंसे सुनता हूँ कि उनमें मनुष्यकी बदना समझनेकी अनुभूति बड़ी ठण्ठ कोटिची थी । शायद यही तुम्हें उत्तराधिकारमें मिली है । तुम्हें इन वस्तुका हृदयमें दिन-रात अकल करके पूर्ण मनुष्य बनाना होगा । सभी का ठीक होगा ।

अच्छे बात है मेरी बिट्टीमेंसे कितना चाहो प्रकाशित कर सकते हो । अनुमति देता हूँ ।

तुम मेरे अतिथर स्नेहके हो । आने नहीं बहुत दिनोंसे हर-मिनोंके साथ मेरे पर आकर शोरगुल मचाकर वह पूरी का आते थे तबसे ।

तुम्हें समझ दूँ वरसे आशीर्वाद देता हूँ कि इस जीवनमें सफल बनो मीरोम बनो, दीर्घजीवी बनो ।
—आशीर्वादक छात्रचन्द्र चहोपाभ्याव

सामन्तवेङ्कट पानिचास पोस्ट

मात्र १९१५

परमकल्याणीयैषु । मधू बहुत दिनोंसे तुम्हारी जिजीका ज्ञान नहीं है सफ़ा । तुम बहुत कूट हुए होंगे । उस दिन तुम्हारे विषेटर रोहवासे परम्परा था । न तो तुम थे और न तुम्हारे मामा तक ही । लाइफ़का घर है, इतबार करना रीतिविस्मय है कि नहीं यह निश्चय नहीं कर सका । मेरे साथ जो सज्जन थे वे कुछक व्यक्ति हैं । ब्रह्मजीके कामडे तिलिछेमें वह लाइफ़ोंके नहीं अपा करते हैं । उन्होंने कहा कि काई रत्न जानेका ही कायदा है—मुँह बाहर बैठे रखनेसे वे कूट होते हैं । लेकिन काई न रखनेके कारण हम पुरचाप लौट आए ।

कल भी बहुत रातक तुम्हारी 'हो बाप'के कितने ही सपनोंको फिर पढ़ गया । बचपनमें पुस्तक बहुत अच्छी है । अश्वेतना करके बैठे-बैठे पढ़ जानेकी वस्तु नहीं है मन लगाकर पढ़नेके योग्य है । लेकिन जानते तो हो, आनन्दक प्रथमा-पत्रक मूल्य नहीं है । क्योंकि जिनके लिए बातकी कीमत है वही इसकी अमर्षा करते हैं । इसीलिए अज्ञानक बात मही करता । लेकिन जो लोग मेरी बातपर विचार करते हैं उन सभीसे कहता हूँ कि मधूजी इस पुस्तकको अन्धके साथ शुरूके अतिरिक्त पढ़ देली । मेरा अन्तना तो पेशा ही यह है, फिर इतमें ऐसी बहुत-सी बातें हैं जिनके बारेमें मैंने भी पूछके पढ़ने सोचकर नहीं देला है ।

'भारतवर्ष' (जि. १९११) में तुम्हारी 'चाकर' कहानी पढ़ देली । कहानीके दिशावने वह उठनी अच्छी नहीं बनी है लेकिन देला है कि तुम्हारे अन्दर एक बीजका सुन्दर निष्पन्न हुआ है और वह है ज्ञानकाग । कहानी लिखनेका कीदक या पद्धति और ज्ञानकागकी चारा दान्यो—तुम्हारे अन्दर जित दिन एक हो आपसी उस दिन तुम सन्तुष्ट ही रहे लाहिलियक हो आभागे । एक बात मत्त भूषना मधू । रचनामें लिख्यत जाना जितना कठिन है उठना ही उठने में किण्वकर रुक जाना भी कठिन है । लेकिन वह बात किसीको ठिगारै

मही का सफ़ती अपने आप सीखनी पड़ती है। मैं निश्चित करते जानता हूँ कि इसे सीखनेमें तुम्हें देर नहीं लगेगी। बाब को आगे तुम्हारी जिम्मेदारी उठाते हैं, वही एक दिन बुद्धिमान न हो, मन ही मन इन सबको स्वीकार करेंगे। मेरे जानेके दिन निकट आ रहे हैं, लेकिन उतने दिनोंके बाद भी अगर मुझे भूक नहीं गए तो मेरी वह बात तुम्हें याद आ जायगी।

आ 'मेरे मित्रोंको पढ़ा। बचपनके कितने दुःख हैं इनके मजे-बुरेके विचार करनेका समय नहीं आता है। उसके साथ आठमरके आशियर्षोंके दूर होनेपर इसका किम्बत्ता शावर अच्छा ही होगा। बड़फुनका एक बड़ा भारी दोष यह है कि बहुत-सी पुस्तकें पढ़ जानेका अभिमान इन लोगोंपर सवार हो जाता है। इसलिए अपनी रचनामें अपना कुछ भी नहीं रखता रखती है केवल रटी हुई वस्तुओंकी बातें। और खतो है कारण-अकारण बर्त-वर्तों मुठेड़ी हुई विषाकी बाबाबत्ता। बड़कीको घुम इतनी बसती जिसनेके लिए मना करना। जिसनेमें शीघ्रता मुछी-की योग्यता है, केवलकी नहीं, वह बात नूतना नहीं चाहिये। कम उम्रमें कहानी लिखना अच्छा कहिता लिखना और भी अच्छा। किन्तु समाजिकता लिखने बैठना अभाव है। चाहे उपन्यास हो चाहे गरीके उमर हो।

'घरबन्ध और गास्तबही' निबन्ध पढ़ा। गास्तबहीका केवल नाम ही सुना है, उनकी कोई पुस्तक नहीं पढ़ी। अतएव उनमें और मुझमें कहीं सम्यक्ता है और कहीं नहीं है कुछ भी नहीं जानता। निबन्धमें मेरी प्रशंसा है और गास्तबहीके ढेरके ढेर उद्धरण हैं। इनसे मैं कुछ भी नहीं समझ सका। केवल यही समझ कि आ 'मेरे उनकी पुस्तक पढ़ी हैं और गास्तबही महाशय कोई भी क्यों न हों बहुत-सी अच्छी-अच्छी बातें कह गए हैं और उन्हें अपने ज्ञान उलझा होता है।

बड़की जीवनमें सुखी नहीं है इस बातको सुनकर क्लेश होता है। लेकिन इस समयमें गरी बग़का पैसा अभिप्राय है कि इसके पुरस्कारका प्रस्ताव ही नहीं। बड़कीकी रचनाएं पढ़कर ज्ञाता है बहुत बुद्धिमती है। किन्तु जीवनमें उसके साथ-नाम को बल मिलती है उसका माम है अनुभव। केवल पुस्तकें पढ़ कर इसे नहीं पाया जा सकता। और न पानेतक इसका मूल्य नहीं मासूम होता। लेकिन इन बातको भी याद रखना चाहिये कि अनुभव, वृत्तस्थिति आदि केवल यदि प्रधान हो नहीं जाते चाकिता हरण भी करते हैं। इसलिए कम उम्र परते

अम्भशुद्ध अन्धा न हुआ ! तुम्हारे 'बाल्य'का मामला भी विद्यामतका है। उठ दिन कई अभ्यास पड़े। उसमें स्पर्धकी मक्ति-विद्वत्ता व्यकारण अतंसत विकसित पटाटोप नहीं है। सगता है वह भी तो विद्यामत गया है अनस्य भी बहुत-कुछ है, लेकिन बलवन्नेके किए बेचैनी नहीं है। इतना-सा खर्चवा ही पाद रखतो मष्ट। मैं आधीराद देता हूँ कि एक दिन तुम बढ़ होओ। के किसीके सम्बन्धमें अगर कोई चुनौती देकर कहता है कि रचनामें बेचैनी कहीं है विद्याभा तो शायद हमें उत्तरमें यही कहना होया कि इन चीजोंको इस तरह नहीं दिखाया जा सकता, एतक पठकोंका मन अपने आप अनुभव करता है। जीमली अ 'देवी'के उप न्यासमें हेनोरो बेह-बेहान्त, उपनिषत् पुराण, काव्यशास्त्र, भवभूति सभी पुस्तकें छिपे रत्नमैत्रे सजा रहे हैं। इन्के पंक्तिमें प्रत्यक्षारका यह मनोमात्र पक्षमें आता है कि तुम सब लोग देखो मैं कितनी विदुषी हूँ कितनी पढ़ी लिखी हूँ, कितना जानती हूँ। इन अतिरेकको किसी भी तरह ध्रुप न मिलना चाहिए। लेकिन बड़े म्ब, बड़े सत्त्व, बड़ा आहविया, बड़ी ध्वजना इन्के देकर चकना होया जीवनमें भी और साहित्यमें भी। पानी बरकता है पत्ता दिक्ता है काक पूछ और काका कल, देवराणी-मैठानीमें जगड़ा बहू-बहुमें मनामास्त्रिन् वा प्रभाव मुक्तकीं बचनकी निपुणता —समें कितनी आश्चर्यकारिणी कितने साफे, दीपमें कितनी बलिकी और अलगनीपर कितनी और किस किनारकी चुनी हुई साक्षिणी इन सबके दिन बीच गए प्रयोजन भी समाप्त हो गया। यह केवल मिलनके बहाने साहित्यका ठगना है। तुम यह सब मही करते हो इसे मैंन कल्प किया है। इतने और दूसरे बहुत से कारणोंसे तुम्हारी रचनामें आशङ्कल मुक्त बहुत आघा होती है और बल मिष्टता है परन्तु मनमें बदना-बाध भी करता हूँ कि इसे तुमने छोड़ दिया। आभममें रहकर इस चीजको कभी नहीं किया जा सकता। जीवनमें जितने प्यार नहीं किया कलंक मोक्ष नहीं मिया बुद्ध्यका बोझ मही ठाया सभी अनुभूतिका अनुभव आहरण नहीं किया उसकी दूसरेके मुँहसे जिय गये स्वाद-मी कल्पना सच्चे साहित्यकी सामग्री कबतक बनेगी ! नाच-दबाये प्राणावामके योगवरुण और कुछ भी क्यों न हो वह बलु नहीं हो सकती। जिसका अपना ही जीवन नीरस है बंगालकी बाक-विषवाकी तरह पवित्र है वह प्रथम जीवनके आवेगसे जितना भी करे, दो दिनमें सब कुछ सब-भूमिकी तरह हाफ भीरीन हो

उठगा। सब होता है धीरे-धीरे चापब मुग्धारी रजनामें भी असंगति दिखाई पड़गी। तबसे भिन्ना रचना बही है जिसे पढ़नेसे लगे कि प्रत्यकार अपने अन्तर से सब कुछको बाहर फूलभी भासि लिप्त रहा है। देला नहीं है मेरी सारी पुस्तकों के नायक-नायिकाओंको लोग समझते हैं कि चापब यही प्रत्यकारका अपना जीवन है अपनी बात है। इसीलिए लज्जन-समाजमें मैं व्यक्तिय हूँ। लोगोकी कबानी न जाने कितनी अनधुतिषों तक पड़ी है। अपनी बात खने हूँ। तुम्हारी बात एक दिन सोची थी कि मष्टू वैरिस्त्र बनके नहीं आया वह अन्ध ही हुआ। उसने ठेरो रूप नहीं कमाया, मोटरकारपर नहीं चढ़ा हाई-जैकिकका स्वप्न नहीं बना तो क्या हुआ। इसकी कमी नहीं। कितना है उसनेने तक जायगा,—केवल सादित्व और संयीतके और मष्टू देखको बहुत-कुछ दे जायगा। वह निरन्तर देखके किए आनन्दका मौज है—यही हमारे लिए बहुत है। मैं और एक बात साज करता था। मष्टू देख-देखमें घूमा करता है। वह अनेक क्रांतियों अनेक समझों अनेक कोपोंके साथ बगावतका एक स्नेह और भद्राका बन्धन प्रस्तुत कर रहा है। उसे सभी पहचानते हैं सभी प्यार करते हैं। मष्टूके साथ जानेसे कहीं भी आयरकी कमी नहीं होगी। लेकिन उस आधा उस आनन्द पर पानी पड़ गया। जिसके शरीरकी मनके आनन्दकी सामाजिकताकी स्वतन्त्रताकी सीमा नहीं थी उसने आज बाधका ऐसा पड़ा किला दिया कि एक पैर बढ़ानेके लिए भी उसे अनुमति चाहिये। यही है उसकी सृष्टिकी साधना। देख गया रह गया उसका कारनिग स्वार्थ और यही उसके लिए बड़ा हो गया। मैंने भी बहुत पढ़ा है, बहुत देखा है बहुत-कुछ किया है—इस बातको मैं भी तो नहीं मूल पाया। इसीलिए जो कार्य कुछ कहता है उसे मान लेनेमें दिवा होती है। लेकिन इस बातको लेकर बहुत निजल है। मेरे बचपनकी एक बात सदा याद रहेगी। मामाके लग सर गुम्हातके घर दण्डरेका मोठा लपने गया था। जाकर देला कि गुम्हातके प्रथम शोधके कारण उनके तिरके बड़-बड़े केयर फूल उठे हैं। सुननेमें गया कि एक पिछाधीने कह दिया था कि यंगा स्नान करनेसे पाप पुण्या है इस बातमें वह विश्वास नहीं करता। गुम्हात शित होकर चित्त चित्तकर कह रहे थे कि स्नान करनेकी भी आवश्यकता नहीं, केवल तीरस लड़ 'यंगा-यंगा' कहकर ध्यान करनेसे न केवल यही बरिद उसकी

सात पुन्हीं पापमुक्त होकर अमृत स्वर्गमें निवास करती हैं, इतमें तम्बेहके सिंग गुन्धार कहों है ? कीन पातकी इस शास्त्र-वाक्यको अस्वीकार कर सकता है ? कहते-कहते गुस्तेमें वह मकानके अन्दर बसे गए । बाब है कि उस बचपनमें ही मैंने मन ही मन कहा था कि वही गुन्धार हैं ! उस युगके एम ए के गणितमें फर्स्ट बड़े बड़ीक बड़े सुरिस्ट, बड़े काम विधविद्यालयके वाइस-प्राय्स्टर । वे धार्मिक और उत्पवासी थे — उन्होंने डोंग नहीं रचा था, बित बीजको तब मानते थे वही कहते थे, — इसीलिए इत्ने कुद हुए थे । देलता हूँ, इस बातको छोड़ कर आत्मिकर काज्ते मी बहस की का सकती और अपने अठामी गौर मरुपहसे मी नहीं । इसीको आन्ध-विश्वास करते हैं । इसीको नाना तकों, बातचीतकी नाना दैतरेवाजिचोंसे उप मान लेना । बिधा पिधा हुई तो राव बीरमें रंग-रोगन जगा सकता है, नहीं तो सीधे भरक बायींमें कहा है । फर्क केक इतना ही है । वही हैं तर गुन्धार । तुम्हारे सामने इन बातोंके कहनेमें दर काता है, क्योंकि सभी जानते हैं कि आधम-वासी वह कोषी होते हैं । वे बात बातमें याधी-गुप्ता करते हैं । लदेहकर मारने आते हैं । किसी मी आत्ममर मैं प्रतप्त नहीं हूँ मगर किसी राजा आत्ममर मेरे दिक्में सिधमात्र विद्वेप वा आध्मेस मी नहीं है । मैं जानता हूँ वे सभी समान हैं । सभी शून्यगर्म हैं ।

आने को आधमको 'अतक कल्प ता गुम हो । तुम्हें अत्यन्त स्नेह करता हूँ यह छुड़ नहीं है । देलनेकी बड़ी इच्छा होती है । गाना सुनने और गप्प करने-की मी । बहुत बड़ा हो गया हूँ अब और कितने दिन सिन्हा रहूंगा । क्या हवर एक बार नहीं आभागे । मेरा कोहायीबाद लेना —

श्री शरत्चन्द्र चरदोपाध्याय

सामठाबैङ्ग पानिप्राथ पोस्ट,

जिला — हावड़ा

१० बैंगाल, १३१८

कम्पापीयेतु । मन्दू, देशाधार करनेके लिए सुमागजन्मक दन्ते मुझे अर्द्ध स्त्री मुनिस्त्रा वाकाम कर दिया था । रास्तेमें एक दन्ते 'रोम रोम' का माय

माया दिखेकी सिद्धकीसे कोबसेका पूरा छिर-बदनपर बिलेरकर प्रीति शायन की और दूमे दखने बारह पोड़ोंकी गाड़ीपर बठाकर और डेढ़ भीक कम्पा कुस्स निकालकर दिला दिया कि कोबसेका पूरा कुछ भी नहीं है — माया है । ओ भी हो फिर कम्पाशायन (हबड़ा-मेदिनीपुर भिखोंकी सीमाकी एक नदी) के छीरपर था गया हूँ । मुक्त मनुष्यके छिए कोई व्यक्तिगत व्याधा नहीं होती— इस सबकी ठप्पकम्बि करनेमें मेरे छिए कुछ भी बाकी नहीं है जब हो कोपसेके चूरेकी ! जब हो बाध पोड़ोंकी गाड़ीकी !

‘शेप प्रज्ञ’ पढ़कर कुछ हुए हो वह ध्यानकर बड़ा ध्यानन्द हुआ । क्योंकि, कुछ होना तो तुम ओम्मेंका नियम नहीं है । प्रसक्त सब (चन्दनगरकी एक संस्कृतिक सरदा) ने इस सब अक्षप तृतीयापर मुझे छिर नहीं बुझाया । उन्होंने अनुरोध किया था कि इस पुस्तकमें अक्षकी और आधपका क्यगान करूँ । लेकिन सब देखा गया कि मुसत बर नहीं हो सका । ‘शेप प्रज्ञ’में अति-आधुनिक-साहित्य कैठा होना चाहिए, इसीका कुछ मामला देनेकी चेष्टा की है । “सूद करेगा, गर्वन करके मन्दी बात ॥ किर्ग्य” यही मनोमन्त्र अति-आधुनिक साहित्यका केन्द्रीय आधार नहीं है—इसीका पोड़ा-सा नमूनामर दिया है लेकिन बूढ़ा हो गया हूँ, धाँक-लामर्ष्य पक्षिमकी ओर झुकक गए हैं—अब तुम्हीं ओगोंपर इसका साधित्य रहा । तुम्हारी छोटे रचनाओंको मैं बड़े ही ध्यानसे पढ़ता हूँ । रबीन्द्रनाथने तुम्हारे बारेमें पत्रमें जो कुछ लिखा है वह सब है । हुत अमति स्पष्ट ही बिस्तार पड़ती है । लेकिन बर बाहरत किसीकी कृपासे नहीं,—तुम्हारी अपनी ही लक्ष्य साधनासे और लूनमें उच्चराधिकारसे जो पाया है उसके पञ्चस्वरूप । पाण्डवेरीमें न रहकर कङ्कलेमें बैठकर भी ठीक ऐसा ही हो सकता था ।

तुमने किया था कि भी अस्थिर कहते हैं कि हम बौद्धिक युगकी उत्थान है । बात बहुत ही सच है । तुम्हारी रचनामें इस सत्यका बहुत-कुछ प्रकाश कम्पा उज्ज्वलतर होता था रहा है । लेकिन अब हो तुम्हारे छिए साधपान होनेका समय आया है । हाथबाग खया होना चाहिए, भीष्ट होना चाहिए ; किसी भी दाकतमें वह नहीं लगना चाहिए कि प्रवाकनके अतिरिक्त एक भी अक्षर अधिक कहा है । यही आर्बिस्टिक पार्मका भीतरी रहस्य है । पढ़ते धाम्प

होगे कि अपनी सारी बातें यहाँ कह सकूँ, अगर यहाँ लेखक सबसे बड़ी भूल करता है। यह भी बहुरि अन्ध कि पाठक न समझें पर अधिक समझानेकी गरज लेखककी ओरसे प्रकट नहीं होनी चाहिए। समझे न ! इसीलिए शायद कुछ लोग कहते हैं कि मधुकी रचनाओंमें एक किर्क बीच-बीचमें प्रबल आक्षेप धारण कर लेते हैं। जो पक्ष है अगर उसे तोचकर समझनेका मौका नहीं मिलता है, तो वह अपनी बुद्धि का प्रमाण नहीं पाता। ऐसी रचनामें श्रेष्ठ आवा है। मैं आबसी हूँ बिट्टी किन्नरोंसे करता हूँ। लेकिन अगर तुम नब्बदीक होते तो तुम्हारी रचनाके ऐसे स्थलोंको दिखा देता। किन्ती ही बार तुम्हारी रचनाओंको पढ़ते-पढ़ते लगता कि अगर मधुने वहाँ इस तरह समाप्त किया होता—

मेरी उम्र हो गई है और रबीन्द्रनाथकी भी। अब कभी-कभी आश्चर्य होती है कि इसके बाद वैराग्य उपन्यास-साहित्य का नाम शायद कुछ नीचे चला जायगा।

तुम्हें तुम्हें बहुत बड़ी आशा है मधु। क्योंकि गंदगीको ही का स्वयं साहस का परिचय समझकर हमारा प्रकाश करते हैं तुम उनमेंसे नहीं हो। तुम्हारी विचार और संस्कृति उनसे विष है।

तुम्हारी नई कविताओंको पानसे पढ़ा। बड़ी सुन्दर बनी हैं। अन्ध यह तो बताओ कि क्या भी आश्चर्य बंगला बढ़ लेते हैं ? 'शेष प्रश्न' पढ़नेके लिए हेनर कदा मुद्र होये ? जानता हूँ इन चीजोंको पढ़नेके लिए उनके पास समक नहीं है। अगर पढ़नेके लिए कहा जाय तो क्या अरमान समझेंगे ? प्रकट रूप मुख हो गया है इसीको देखकर डर लगता है नहीं तो उनके जैसे यमीर पदिककी रूप जाननेसे मेरी रचनाकी बाय शायद कार्य दूसरा रास्ता ईदती। उपन्यासके अन्दरने मनुष्यको बहुतोरी पाते मुननके लिए बाध्य किया जा सकता है इस बातका क्या भी आश्चर्य स्वीकार नहीं करते हैं ? जिसे हकका साहित्य करते हैं उसके प्रति क्या वे अप्रमत्त उपालीन हैं ?

पोइसी रमा, हरिन्दमी तुम्हें येक दूया। मेरा स्नेहाधीनद सेना।

—श्री शरधन्द्र पद्मोगाध्याप

शाम्भवावेद पानिपास पोस्ट

मिमा हबदा

६ मार्च १९१८

परमहम्साजीयेषु । मन्द उत्तर म देनेके कारण यह न समझना कि तुम को कुछ मेकते हो उसे ध्यानसे नहीं पढ़ता । श्री अरविंद जी छोटे-छाटे संदेश तथा तुम लोगोंके प्रश्नोंका उत्तर देते हैं किन्तु तुम बलसे मेरे पास मेकते हो उन्हें पढ़ता हूँ सोचता हूँ और फिर पढ़ता हूँ । हाँ यह मानता हूँ कि अचिकाश-को नहीं समझ पाता । कभी-कभी वे मन चेतना वा कानसंज्ञेतर्क इतने निम्न-निम्न और सूक्ष्मातिवृत्त पर्याय वा स्तर बतलाते हैं कि वे मेरी बुद्धिसे परे हैं । कविताके सम्बन्धमें भी उनके विचारोंको समझ नहीं मान पाता हूँ । दृष्टान्तस्वरूप कहा जा सकता है कि तुम्हारी किम तरहकी कविताको उन्होंने सबसे अच्छा बताया है, वह तुम्हारी दूसरी कविताओंसे निम्न कोटिकी है । लेकिन यह भी कह देना चाहता हूँ कि वे ही कविछाई वास्तवमें अच्छी हैं—मात्रमें भाषामें और छन्दमें । उनमेंसे चुनकर नम्बर दिये जायें या किसीकी राय कभी नहीं मिलेगी । मते हो न मिले । देखता हूँ कुछ दिनोंसे बहू मन लगाकर साहित्य साधना कर रहे हो । इसमें कहीं भी तिरस्कारकी चेष्टा नहीं है, जैसे-जैसे यण्डके लिए देन्य नहीं है । अब तुम्हारी सफलता सुनिश्चित है ।

मेरे कम्म-दिनके उत्पन्नस्वमें तुमने जो गीत भेजा है वह कविता और हृदयकी दृष्टिसे सुन्दर बना है । लेकिन अविशयोक्त दोषसे कुछ है । संकोच होता है । उस दिन इसीको लेकर मन्मिनी सरकारने (बंगालके राजनीतिज्ञ और धनपत्यामी) कहा था कि,—मन्द कहता है कि अगर तुम गाया या अच्छा हो । वह स्वर-स्मरणके लिए तुम्हें स्थिनेय । बैतारके अधिकारी करते हैं कि कम्म-दिनतर्क मोहपर वे इन गीतको तुम्हारे नामसे प्रकाशित करेंगे । मार्गमें मन्मिनी । अच्छा यह तो बताया, मेरी पोइन्टी आदि पुस्तकें हरिमार्ग (हरिवंश बहोराध्याय) ने मेरी हैं । मैंने बिट्टी लिख दी है ।

मैं तुम्हें कुछ और बातें बताना चाहता था मगर अब समय नहीं है बाकलाना बन्द हो जायगा ।

तुम्हारे उन पुण्ये कागज-पत्रोंको कक वा फलों वास्तव

हैं, तुनो—एक 'परिषद' नामकी अभिजातवर्गकी त्रैमासिक पत्रिका निकली है उसमें तुम्हारे मित्र जी (नीरन्ध्रनाथ राव—बंगालके आलोचक और बंगवासी काकिलके बीरोबीके अध्यापक)ने शेष प्रश्नकी आलोचना की है। छापकर पढ़ी होगी। उनके कथनाका साक्ष्य यह है कि गोरा (नीरन्ध्रनाथके इसी नामके उपन्यासका नायक) साहबका कहना है। इसीलिए 'कमल'का परित्र गोराकी नकलके सिवा और कुछ नहीं है। अर्थात् जी 'की ऑर्लैंड' भूरी होनेके कारण उसकी बुद्धि निष्कृन्त बिकली होती है। दुःखकी बात तो यह है कि ये भी कमल पढ़ते हैं और इनका सिद्धा उत्तरा भी है, क्योंकि अपनी पत्रिका है। धमक है कि माछेसी खानते हैं, बर्मन खानते हैं। और अन्तकी ओर अनुप्रासकी स्तंकारमें प्रार्थना भी है—हे भगवान्। कमकार न होकर उपकार करना—इसी तरहकी कोई बात।

लेकिन अब एक मिनट भी समय नहीं है। आधीरात केन।

—बी शरकर बहुपञ्चाय

छाम्ताबैङ्ग, पानिपत हवड़ा
बिजबादशमी ४ कार्तिक १३१८

मन्दू —मेरा बिजबादशमीका शुभाधीर्वाद केन। बहुत दिनोंसे चिट्ठी न मिल सका इसके लिए अनुग्रह है।

पहले कामकी बातें खत्म कर लें। 'दोस्त' (दिदीपकुमारका एक उपन्यास) के शुरूके कुछ पृष्ठ इसीके साथ भेज रहा हूँ। इस खम्बनेका यह आहम्बर देखकर शायद पत्रोत्तरमें लिखागे कि 'महाशय आपकी मीलने बाब आया अपने कुत्ते को बुझा लीबिए। मेरी बाकी पाण्डुलिपि वापस कर दीजिये।' मुझे इसकी बयेश आशंका है। लेकिन मेरी तरफसे भी कुछ कैलियत नहीं है ऐसी बात नहीं। ऐसे—

कुछ कुछ तुम्हारी ही तरह मैं भी उन मारोंको नहीं मानता। ऐसे कटा कटाके लिए, धर्म धर्मके लिए, लय लयके लिए आदि। कम्बकी उपन्यास उसकी एक प्रकारकी नहीं होती। यह अन्तरकी बस्तु है। उसकी संज्ञाका निर्देश करने खाना और उसके बाप ही एक ओरका होना देना अवैध है। धर्म, लय,

प्रति केवल बातें ही नहीं हैं। उनमें भी कुछ अधिक है, इस बातको तदा याद करना चाहिये। कहानीका उद्देश्य अगर बिचर-रंजन करना ही है तो भी यह तर्क उठाया जा सकता है कि वह दो चरित्रोंका समावेश है—चित और रंजन। आकर कितने मज्जुसवार, दम ही और मज्जुसवार दोनोंका चित एक बसू नहीं। एक चित जिस बातने सुनीये फूट नहीं समाता हो सकता है कि दूसरेको उसमें कोई भी आनन्द न मिले। एक बहुविधित व्यक्तिको देखा है, जो 'दो चरित्र'के पन्द्रह हीन पड़ते अधिक नहीं पड़ सका। अगर मैं किस तरहसे पुस्तक समाप्त कर गया यह समझ ही न सका। कहानी कितनेके नियमका उसमें कहींतक उल्लंघन किया गया है, यह मैं नहीं जानता और जाननेकी इच्छा भी नहीं हुई। प्रत्यक्ष हुआ था तुमि पार्स भी, यह एक तर्क है। फिर भी अगर तर्क किया जाय कि कदा क्या है तो उसे मैं नहीं जानता नहीं समझता, अवश्य ही पुनरुक्त आर्तिका। लेकिन इस कल्पन काकही उल्लंघन करनेकी किसी तरह राखी नहीं कर सकूँगा। अतएव इस कल्पनेके लिए ये मेरे तक नहीं हैं। जिन बातोंको तुमने बहुत खेचकर लिखा है उनकी उपन्यास लिखनेमें आवश्यकता नहीं है, वह नहीं करता। लेकिन मेरे मनमें उपन्यास लिखनेकी जो चारपा है उससे क्या है कि 'स्वप्न'के चरित्रर विचार करनेसे उसके अन्तिम हिस्सेके साथ प्रारम्भके हिस्सेका उल्लंघन अवश्य नहीं है। इसके अन्तर्गत पुस्तकको छोड़ करनेकी आवश्यकता प्रारम्भकी ओर है। वह एक कौशल है, शुरूके हिस्सेको पढ़नेमें कथि जिनमें कथ्य न हो जाय। एक बात और है मज्जु। लिखने बैठकर लिखने से न-लिखना बहुत कठिन काम है। 'कथोपाश्रय' सबमुच ही वह लेखक है। अगर वे न लिखनेके इच्छाको नहीं समझ पाते हैं। क्या इस बातको तुमने उनकी पुस्तकोंमें नहीं देखा है। उनकी पुस्तकें पढ़ते समय बहुत मुश्किल होती बातका अन्तर्गत हुआ है कि 'बाबू अगर इस कौशलकी जानते। इसीको करते हैं लिखनेका संभव। करनेकी विषय-वस्तु जितनी आवेयकी प्रसरताके कारण प्रयोजनसे एक पग भी अधिक न ठेक से जा सके, बसिक एक पग पीछे रहे तो अच्छा। मुझ अगर इतना छोड़ना पसन्द न करो तो अपने यहाँके किसी साहित्यिक मित्रको दिग्गजर उनकी राय से लेना। हाँ, ऐसा भी हो सकता है कि जिन चीजोंको इस समय काट दिया है उन्हें पुस्तकके अन्ततक पहुँचते-पहुँचते

मैं ही फिर जोड़ दूँ। जो भी हो तुम्हारी राय जान लेना अच्छा होगा। तब बहुत जल्द ही एक-कुछ काट-छँटकर सुस्त कर देनेमें अधिक देर नहीं लगेगी।

तुम्हारे नीचे श्री विद्विषोंको बहुत ध्यानसे पढ़ा था। तुम मुझसे भ्रष्ट रहते हो प्यार करते हो इसीलिए तुम्हें बहुत लज्जा है। लेकिन इससे कुछ काम तो होगा नहीं। उन लोगोंका पर्यटनमाण्डलम् इससे इंचमात्र भी कम होगा, मुझे इनमें विश्वास नहीं। और उस श्री श्री वास यह व्यवस्था कितना अव्यय है, इनकी कस्यना भी नहीं की जा सकती। सर्व-स्थितिकमें भी मेरे मामके संग उसका नाम सुक होगा यह वाद करते ही समग्र मन लज्जासे कंडकित हो उठता है। उस आदमीके बारेमें इससे अधिक कुछ नहीं कहना चाहता। सायब एक दिन तुम आग भी देखागे कि विदेशी शासकके हाथों किन लन्देही मुद्गरोंमें देशके कस्यापपर सबसे बड़ा आघात किया है, वह जाकरा उनकी आक्रिया है। जाने दो।

तब ये ही एक दिन मुझपरत करूँगा। वह नहीं बतलाऊँगा कि तुमने उसके बारेमें मुझे कुछ लिखा है। लेकिन तुमने मुझे जो कुछ सूचित किया है उसीके आधारपर मित्र करके सत्यका आविष्कार करनेकी चेष्टा करूँगा। देखूँ, तब क्या कहता है। श्री अरविन्दके सम्बन्धमें कहीं भी तो मैंने यह बात नहीं कही है। देखके सारे लोग उनपर गहरी धक्का रहते हैं। क्या कैबल में ही नहीं रखता। लेकिन आत्मवाक्पिण्डोंके प्रति मेरा मन बहुत प्रसन्न नहीं है। कारण है कुछ तब श्री वास और कुछ दूसरे आत्म-वाक्पिण्डोंके सम्बन्धमें मेरी अपनी अन्यायी। इसके अन्वया तुम्हारा जन्म क्या मुझे बहुत ही लज्जा है। जब आई थी एत या कमल नहीं पड़ा तब तुम्हें हुआ था मगर जब गाने बजाने और उसके साथ ही साहित्यका तुमने अपनाबा तब वह सोम दूर हो गया था। साथ-साथ सभी नोकरी करेंगे और अपने देशके लोगोंको दाकिय या बेरिन्द बनकर जेल भेजेंगे—ऐसा क्यों हो? मष्टुको लाने-रहनेकी चिन्ता नहीं है, वह अगर भारतके कक्षा-क्षिप्तको विदेशियोंकी नक़्क़ोंमें बड़ा बना लके मुझने इसके रिटे-गिडवे पथसे एक नया मार्ग निकाल लके, तो क्या इसके देशको कम व्यय होगा कम गौल होगा? तुम्हीं एक बार मुझ या कि विदेशियोंके पास 'विश्वप्रेमी' मामक एक बस्तु है जो तबमुप ही बड़ी है और

मुझे तुम देखके संगीतको देना चाहते हो। इसके बाद एक दिन मुना कि तुम घर-कुछ छोड़कर बैरागी बनने चले गये हो। तब अचानक लगा कि मेरी अपनी ही कोई बहुत बड़ा छवि हो गई है। इस जीवनमें मुझे घायब फिर नहीं देल पाऊंगा। क्या तुम समझते हो कि यह मेरे लिए कोई छोटा दुःख है? और कोई मझे ही विश्वास न करे मगर तुम तो जानते हो। वह बात मुझे चिर दिन घेर हुआ देगी इसमें मुझ समझ नहीं।

एक मजेकी बात तुमो मन्द। उस दिन एक बकरी कामसे बैक गया था। कैशियर बगाकी है। मुना कि एक नामी बराठिरी है। बड़े कतनस में काम-काम कर बुझनेपर उन्होंने मेरी कम-कुछनी देखनी चाही। बोला, कुच्छकी तो नहीं है मगर राशि-वृद्ध नाट्यकुमें किया है। उसे उठी समस उन्होंने मिल लिया, मेरी हाथ-रेखाकी छाप ले ली। इसके बाद आगे उनका काम था। वे मैकेसे पंचांग निकालकर गणनामें सुट गये। क्या कहा जानते हो? कहा एक साजके अन्दर आप इनका रास्ता पकड़ेंगे। पूछा वृत्ते रास्तेका क्या मतलब? बोले, भाष्यात्मिक। मैंने कहा कि कुच्छमीमे बैरी बात है वह मुझे काशीके भगु-संहितावालेने भी बतलाई थी। मगर मैं खुद इनका पार्श्व भर भी विश्वास नहीं करता। क्योंकि भाष्यात्मिकका भा तब मेरे अन्दर नहीं है। बाले, एक साजके बाद अगर फिर मुझकात दुर्ग, तो इनका कहाव ईगा। मैंने कहा एक साजके बाद भी मेरे मुँहसे यही सुनैगे। उन्होंने केवल गर्दन हिलवाई। उनका विश्वास है कि कुच्छमीका पञ्चाङ्ग यिनना जाने तो वह भिष्या नहीं होता।

मन्द एक बात घायब तुमने पहले भी मुझसे सुनी होगी। मेरे बंधका एक इतिहास है। इस बंधमें मेरे मझले भाई (प्रमाल) स्वर्गीय स्थामी वेदान्तको सेकर आठ पीढ़ियोंसे अग्रेष्ठ चारामें नग्वारी होते रहे हैं—केवल मैं ही घोर नास्तिक हुआ। बंधागुनत बात मेरे लूनमें ठकरी रहने लगी। अतएव जीवनके पचम्व वर्ष पार कर देनेपर किसीको नवा शिष्य बना पानेको आशा नहीं करनी चाहिए। लेकिन स्वामी महाशय विबुध निःसंशय हैं कि मैं बैरागी होऊंगा ही।

मुना है कि तुम्हारा अनिलवरण धूलको भीनी बना सकता है। कहा क्या है कि अधमको चारी भीनी बही सज्जवाई करता है,—क्या वह सब है। मैं

हैं तथा साहित्यिक संघर्षके अन्तरण कितना रस सुकन किया था लक्ष्मी ने इसकी परीक्षा करेगा। उपाख्यान या उपकरणके प्राचुर्यसे नहीं। घटनाकी अन्वयार्थतासे नहीं बल्कि अति साधारण ग्रामीण अन्धकारकी रोगमर्यादा घटनाओंको ही लेकर यह पुस्तक समान होगी। बिस्तार न होगा रोगी गम्भीरता पुस्तकगुण बिचरन नहीं रहेगा कैसा हल्ला रहेगा। कैसा बिक्रीके जानन्दके लिए। बर्दाश्त क्या हुआ है नहीं जानता। पर उपन्यास-साहित्यके बारेमें कितना समझता है, उससे यह आशा करता है कि और कुछ भी अच्छा न बना हो तो कमसे कम अंतर्गत होकर उपन्यासका स्वयं प्रकट नहीं कर देता है। लेकिन तुम्हारी राय चाहिए ही।

दूसरी बात है उस आश्रममें जानेके बादसे तुम्हारे बारेमें इस बातको मैं बड़े आनन्दसे स्वप्न करता आ रहा हूँ कि बर्तानुसार तुम्हारी पदार्थ-बिस्तार कितनी व्यापक, सुरक्षित होगी है उतनी ही गहरी और अन्तर्मुखी भी। और लब्ध न हो ही है। क्योंकि तुम्हारा ज्ञान और पाठ्य जैसा बिनयी है, वैसा ही शास्त्र भी। खुद बहुत आकाश पानेके बावजूद अपने पाठ्यकी ओरसे तुमने किनीपर प्रतिपाद नहीं किया। इस दिशासे तुम्हारी कितनी परीक्षा लेता हूँ, उतना ही सुख हाता है कि मधू मेरे दण्डा है। वह सामर्थ्यके रहते हुए भी पुनर्वाप बर्दाश्त करता है बनेषा करता है। लेकिन मूढ़ बनाकर अनुपेक्षा अनुमान करने, उत्तम आश्रम करनेके लिए बौद्ध नहीं पहता। उनकी लिए कोई डर नहीं और उनके मित्रोंके लिए किन्ताका कोई कारण नहीं। अन्ते फिर दिन उसकी वधार्थ प्रकृता उसे नीचे जानेसे बचाती आयेगी। मधू मैं उनसे बहुत डरता हूँ जो स्वयं साक्षिपतेही हाकर भी अपने बनोही खुने आस जोड़ना करते करते हैं। इस बातको वह किनी भी तरह नहीं समझ पाते कि दूसरोंके तुष्ट सिद्ध करनेसे ही अपना बङ्गम सिद्ध नहीं हो जाता। इसके लिए कुछ और भी चाहिए। वह इतना सीधा रास्ता नहीं है।

उस दिन 'पुण्य पात्र' मासिक पत्रिकामें तुम्हारी रचना पढ़ी। उसमें दूसरी कितनी ही बातोंके अन्तर तुमने 'सुख दण्डन' के नारी-विरोधका प्रतिपाद किया है कागजका अनुमान किया है। तुम उसी प्यार करते हो तुम्हारे प्यारमें कहीं आपाठ पहुँचे, इसके लिए मेरे मनमें काफी दुःखिता और संकोच है। फिर

भी बगता है कि तुम्हें भीतरकी कुछ बातें जान लेनी चाहिए। किसीन किता है कि साहित्य-सूक्तके अन्तरालमें जो सदा रहता है यदि वह छोटा हुआ तो उसकी सृष्टि भी बड़े होनेमें बड़ी बाधा पाती है। इस बातपर मैं भी विश्वास करता हूँ। मैं ने किता है कि सावित्री मैसी मेठकी नौकरानी मिलती तो मैं मेठहीमें पड़ा रहता। लेकिन मेठमें पड़ रहनेसे ही नहीं होया—सहीश भी बनना चाहिए। नहीं तो सावित्रीके हृदयको नहीं जीता जा सकता। समाम किम्बकी मेठमें बितानेपर भी नहीं। इसके अन्वया यह कहका बरा भी नहीं समझता कि सावित्री लव मुच ही नौकरानी कोटिकी बड़की नहीं है। पुराणोंमें किता है कि कस्मी देवीको भी मुलीस्तमें पड़कर एक बार ब्राह्मणके घर वालीका काम करना पड़ा था। पाँच पाण्डवोंमें अर्जुन उसको जब नाचना-गाना सिखाते थे, तब उनकी बात सुनकर यह नहीं करा जा सकता कि इस तरहका उस्तादकी मिलनेपर सभी कहकिर्वा नाचना-गाना सीखनेके लिए पायक हो जातीं। सारे सग्रदश्योंकी तरह वेस्वाओंमें भी ऊँची-नीची होती हैं। वेस्वाके निकट जो वेस्वा वाली होकर रहे उसका और उसकी माकिकिनका साक-बचन एक नहीं भी हो सकता। इनके बारेमें अनुमत्त हुयनेके लिए कपवा-अपेत्री भी लव करनेसे काम बरक जाता लेकिन उनको जाननेके लिए बहुत-कुछ लव करना होया। आशानीसे नहीं मिलती। रंग पाठकर वे बयाम्नेमें मोहपर नहीं आ देती। गुमन जिस मित्र-भारिणी मुणीय बाइजी (राजकुमारी) का तस्तेल किया है, उसे क्या सभी देल पाते हैं ? उनके लिए अनेक उरकरग अनेक आवाहन न हो तो नहीं लव सकता। या ता जम्ने बहुत रुपये वा किसी राजकुमार मित्रके बहुत रुपये लव हुए बिना ऊररी स्तरमें प्रवशाधिकार नहीं मिलता। जो रास्तेरस आदमी पड़कर लवणके घरमें जा फुलती है उनका परिधम मिलता है। गरीबोंका अनुमत्त नीचेके स्तरमें ही सीमित रहता है। इसीलिए यह श्रीकान्तकी टगर और बाइजी बाप्पीको ही परिचानता है। वह गारे उदाहरण अनाबरक और मिलनेमें भी मजाकनक है। लेकिन जो लोग अन्धपुण्य नारी-जातिके प्रति प्लानिके प्रकारको हो पयार्पवाद समझते हैं उनमें आबरावाद तो है ही नहीं पयार्पवाद भी नहीं है। है केवल र्मभनप और शूरी रखा—न जाननेका आईकार। मिलोंके निकट बन्द करनेकी स्पीरिटेस साहित्यका सूक्त कभी नहीं होता।

मेरा आन्तरिक स्नेह और प्रेमका सेना । वाहानासे मुझकाठ हो तो वह देवा कि मैं उसे आशीर्वाद देता हूँ ।

—शरत् बाबू

सामन्तरेण पानिनात हाथका,

१ मङ्गल, ११४

कल्याणीनेयु । मण्डू तुम्हारी बिछी मिछी-। भीषणतके अनुर्य पर्वपर तुम्हारा मेका हुआ निष्पन्न पड़े ही निक गया था । पहले लगा था कि निष्पन्न बहुत बड़ा है । शायद काटने-छेदनेकी जरूरत है । लेकिन दो बार बड़े ध्यानसे पढ़नेके बाद मुझे समझ नहीं आ कि इस रचनामें कुछ काट-छेद नहीं आ सकता । मेरी पुस्तकके बारेमें लिखा है इसीलिए मुझे इतना अच्छा लगा है कि नहीं यह बात मेरे मनमें बार-बार आई है । अगर बहुत सोचनेपर भी कहनेमें संकोच नहीं है कि यह समालोचना तुमने किसी भी पुस्तकके बारेमें की होती, मुझे इतनी ही अच्छी लगती । इसका कारण मुख्यतः भीषणतकी ही बातें हैं वह सच है । पर साहित्यके विचारकी जिस बातकी तुमने इतने प्रापुय और सहृदयतासे आलोचना की है वह केवल मुझ ही नहीं बन रही है उसमें निरालेख न्याय भी हुआ है । इसलिये कोई भी सहृदय पाठक इसे स्वीकार करेगा । इसके अन्तर्गत आलोचना कपोपकचनकी शैलीमें की गई है । मण्डू, तुमने यह बड़ी अच्छी पद्धति का आधिकार किया है । इस तरहसे नहीं किस्तेसे इतने वन निष्पन्नको चाहे वह किठना भी अच्छा करो न हो पढ़नेके लिए शायद लोगोंमें दोरख नहीं रहता । पढ़नेमें एक मुझ कहानी जैसा लगता है । इसे किसी अच्छी मासिक पत्रिकामें छपनेके लिए भेजूंगा और अनुरोध करूंगा कि इस रचनाकी कोई भी चीज काटी न जाय । लेकिन तुम्हें पूरा भेजना सम्भव होगा कि नहीं, यह ठीक ठीक नहीं बता सकता । पर अगर समय हुआ तो यही होगा ।

भीषणत अनुर्य पर्व तुम्हें इतना अच्छा लगा है जानकर किठनी प्रसन्नता हुई यह नहीं बतला सकता । इसका कारण यह है कि इन पुस्तकको मैंने लघुमुद्र ही वह मजसे मन लगाकर हृदयबान् पाठकोंको अच्छा लगनेके लिए ही लिखा

है। तुम्हारे जैसा एक पाठक भी श्रीकाम्यको भाग्यवश मिला है, यही मेरे लिए परम आनन्दकी बात है। अब दूसरा पाठक नहीं चाहिए। कमसे कम न मिले तो भी दुःख नहीं और मन ही मन सोचा था कि न जाने कितनी मापाओंकी कितनी ही पुस्तकें तुमने इन कई वर्षोंमें पढ़ी हैं फिर भी उनके बीच मेरे जैसे मूर्ख आत्मी को रखना पढ़नेके लिए तुम्हें समय मिला है, यह क्या कम आश्चर्यकी बात है ! जानता हूँ कि ये कितना तुच्छ कितना सामान्य लेखक हूँ। न विद्या है और न पांडित्य। देशाती आत्मी जो मनमें जाता है लिख जाता हूँ। इसीलिए आजके जमानेमें पण्डित प्रोफेसर आग अब गांधी-गान्धेज करते हैं तो उनके बारे में कुछ कह जाता हूँ। सोचता हूँ कि इनके सामन में कितना नगण्य कितना साधारण हूँ। लेकिन इसके अन्दर जब तुम्हारे जैसे मित्रकी प्रशंसा मिलती है तो इस बातको गर्वके साथ बाद करता हूँ कि पाण्डित्यमें मष्ट इनसे छोटा नहीं है। फिर भी ठेके भी तो अच्छा लगा है। यह मेरे लिए बहुत बड़ा भरोसा है, बहुत बड़ी सान्त्वना है।

बहुत दिनोंसे तुम्हें नहीं देखा है। देखनकी बहुत इच्छा होती है। वरिधमें अगर पाण्डित्येरी आँकें तो क्या दो-एक दिनके लिए रहनेकी व्यवस्था कर सकत हो ! आश्रममें रहनेका नियम नहीं है, यह मैं जानता हूँ। पर वहाँ क्या कोह होकर नहीं है ! अगर हो तो मिलना। इति।

—तुम्हारा नित्य प्रियतुष्पायी श्री शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय

साम्ताबेड़, पानिनाथ, हवड़ा

११ माघ, १३४

परमकल्याणीबन्धु ! मष्ट, बहुत दिनोंसे तुम्हें कुछ नहीं लिखा। आज तकसे अचानक तुम्हें मिलनेकी इच्छा इतनी प्रबल करी हो उठी यही सोचता हूँ। शायद पटीदपुरके बीनेश बाबूकी आन्तरिक बातें होगी। तीन दिन हुए पटीदपुरसे लौटा हूँ। साहित्य-सम्मेलन था और म्युनिसिपैलिटी-पट्टिस। मंत्रपर जब डम्बा और शरदार्ग निरुप पढ़ा जा रहा था तब नेपथ्यमें 'अनामी'की आलोचना चल रही थी। हाँ, अस्सी पीढ़ी विरोधी मत था। इसके बीच अचानक एक

सबन स्वीकार कर बैठे कि अनामी पुस्तकका उन्होंने शुरूसे आखिरतक बार बार पढ़ा है और बार बार जोर पढ़नेकी इच्छा है। तब 'कहते क्या हैं दीनेश बाबू आप फरीदपुर बारके निधि रख हैं। प्रत्यक्ष तार्किक बर्फीक हैं—आपमें यह दुर्बलता कैसी।'।

'दीनेश बाबू आपका विभाग क्या सराब हो गया है ?'

'दीनेश बाबू देखता हूँ आप संसारके अरुण आभर्य हैं।' आदि आदि।

अन्त्य ही मैं चुप था—मौन गवाहकी तरह। एक बार मुझे अकस्म पाकर इन्हीं दीनेश बाबूने कहा 'धारत बाबू तारी पुस्तकें संसारमें समीके लिए नहीं हैं। मैं धाम्तराठ काकाजीका शिष्य—वैष्णव हूँ। मगवान्में विश्वास करता हूँ। दिखीर बाबूने जिस भाषकी प्रेरणासे कवितायें लिखीं संसारमें उसकी तुलना कम ही है। अब भी समय मिश्रता है मुग्ध होकर कविताओंको पढ़ता हूँ। कितनी अच्छी लगती हैं, वह बूरेको नहीं समझा सकता।

मुनकर मन ही मन सोचा इससे बढ़कर निष्कपट सच्ची आलोचना और क्या हो सकती है। जिस तारको तुमने सह्य किया है उनके हृदयका बही तार गुनगुनाकर बज उठा है। लेकिन जिसका तार नहीं बजा वह किसीके बार-बार बार पढ़नेकी बात मुनकर आभर्य प्रकट न करोगे, तो क्या करोगे ? और जो लोग केवल बिस्मय प्रकट करनेको ही कापी यही समझते हैं व गाजी-गजोजपर उठर आते हैं। माया जितनी ही बढ़ती जाती है, अपनेको उतना ही निरर और बहादुर आलोचक समझते हैं। ऐसा ही तो देखता आ रहा हूँ।

उस दिन हरिन नामके एक कहकने मुझे एक चिट्ठी लिखी है कि वह 'अनामी के लिए एक आलोचना-समा करना चाहता है और मुझे उपापति बनाना चाहता है। मैं उस चिट्ठीको पानेके डढ़ मिनटके भीतर ही जबाब दे दिया—राखी हूँ। मन स्थिर करना और डेढ़ मिनटके अन्दर जबाब देना। मैं करता हूँ कि दीनेश बाबूके बार-बार बार अनामी पढ़नेसे भी यह बात विरमपवनक है। आगामी समामें इस बातका उल्लेख करूँगा।

कुछ दिनोंसे तुमसे एक अनुरोध करनेकी बात सोच रहा हूँ। वह है आ की रचनाके सम्बन्धमें। वह तुम्हें भड़ा करता है, तुम्हारे कहनेसे तुन भी मकता है। उससे कहना कि लिखनेमें वह सरा सपत हो। हाँ, संयम बलु एक प्रकारकी

रहन मुद्रि (इन्स्टिट्यूट) है। आनेमें अगर न हो तो दूसरेको समझना नहीं
 जा सकता। फिर भी कहना कि जहाँ-वहाँ अकारण ही दूसरोंकी रचनाओंके
 उद्धरण देना इससे बहुतकर असुम्भर बस्तु दूसरी नहीं। अनुक्त धन्यकारकी —
 इन बातोंसे मैं एकजगह हूँ और उक्त आदमीकी “ ~ ~ ~ ” में वक्तियों गहरे
 हैं अनुक्त सेवकी “ ~ ~ ~ ” इन वक्तियोंमें बड़े ही सुन्दर बगते प्रकट किया
 है, आदि आदि। ये बातें अत्यन्त क्लेश दायक पाठकसे कहना चाहती हैं
 कि तुम लोग देखो कि इस छोटी-सी उद्यममें मैं कितना समझा है, कितनी
 पुस्तकें पढ़ी हैं। मध्य तुम अपनी रचनाओंके उद्धरणोंको उल्लेख एक
 बार पढ़नेके लिए करना। कहना कि तुम्हारे बहुविकृत और गहरे अध्ययनमें यह
 नितान्त आवश्यकताके कारण आ पड़ी हैं। अकारण ही नहीं आई हैं और
 पाणिन्य दिलानेकी शक्तिप्रताप भी नहीं। आ” कहा है अभीसे उसे इस
 विषयमें सावधान कर देनेसे आया है एक अप्रत्यक्ष ही होगा। वह ध्यापन नहीं
 जानता कि उद्धरणक भाषामें तुम्हारा अनुकरण कर पाना सहज काम नहीं।
 बहुत ही कठिन है। दूसरे हजारों प्रकारके अर्थवर्णोंकी बात नहीं उठाईया।
 क्योंकि अगर वृ “उसका साहित्यिक आदर (हीरो) है” वां उसे हँसना नहीं
 जा सकेगा। गहरी पीड़ाके साथ ही ये बातें तुमसे कहें। मध्य तुममें न जान
 कितनी बार कहा है कि जिसने समझ-साधना जैसे दूसरी कठिन साधना और
 नहीं। जिस अन्तर्गत ही जिस लक्ष्य या उसे न मिलना। उक्त पाठकका
 मन मुझसे परिपूर्ण हो जाता है, जब वह समयके इस विद्वत्को दलता है। जाने
 को। मेरी वह विद्वां को “स्वदेश आ प्रचारक”में प्रकाशित हुए थे। उसके बारेमें
 कविने मुझे एक चिट्ठी मिली थी। उसके अन्तमें लिखा था “तुमने बार-बार मुझ
 सीधे कठोर माध्यमें व्याकरण किया है। लेकिन मैंने कभी तुम्हें आम या गुप्त
 रूपसे निन्दा करके बदला नहीं किया। इस रचनान उक्त पेरिस्टरमें एक अंक
 और बाइ भर दिया है।”

उस दिन उमाप्रसाद (जा. रामाप्रसाद मुन्शीके बच्चा भाई) ने मुझे कहा था कि इस बिग्रीफो जिलाकर मैंने अन्याय किया है। क्योंकि इसकी प्रत्येक पंक्तिमें बहर टैज गया है। लेकिन क्या करें ज़ायाह हूँ। जो टिप्पणियाँ बदल कर बाधित नहीं किया जा सकता। अब कवित्त मेरा बिग्रीफो दायद ठम्मा

हो गया। किन्तु इस विषयमें हमने 'स्वदेश'में जो चिट्ठी लिखी है वह बहुत अच्छी बनी है। कुछ प्रकट हुआ है, पर श्रेष्ठ नहीं। मुझसे यही गुटि हो गई है। लेकिन न जाने क्या हो गया 'परिषय'की उस रचनाको पढ़ते ही सारे बदनमें जाग बग गई। उस कागज-कलम डंकर चिट्ठी लिख डाली।

श्रीकामदेव पशुपति पर्वकी आलोचना 'विचित्रा'में एक बार फिर पढ़ी। अगर वह श्रीकाम न होकर और कुछ होता तो मुझ कण्ठसे प्रशंसा करके पैर की छँस डेता। रचना लघुमुक्त ही सुन्दर है। जिसने लघुमुक्त ही पढ़ा है और समझा है उसके ज्ञानकी अभिव्यक्ति है।

मन्दू, बीच-बीचमें चिट्ठी लिखना, क्वाथ मिले चाहे न मिले। तुम्हारी चिट्ठी पाना मेरे लिए परम सुखी बात है। एक बात और। बन्धु सुरेन मैत्र (जिनका सारा सिर गंजा है जो शिवपुर इन्वीनिरिंग कालेज, जिनके पहाँ हम करते थे) भी व्यक्तित्वके बड़े मछ हैं। उन्होंने मुझसे अनुरोध किया है कि आज तक हमने मेरे बारेमें उन्हें कितनी रचनायें भेजी हैं (और लिखनेके बावजूद कि मैंने कभी वापिस नहीं किया है) उन्हें एक बार पढ़नेके लिए मँगाया है। मैंने कहा है कि दूँगा। लेकिन कहीं गुम्मा न हो जाना। सुरेन जास होनेपर मैं आदमी अच्छा है। इति।

तुम्हारा नित्य शुभाकांक्षी—श्री छारत्चन्द्र चट्टोपाध्याय

साम्प्रदायिक, पानिचास, दण्डा

२ मार्च १३४

मन्दू, अभी अभी तुम्हारी रजिस्ट्री चिट्ठी मिली। कामकी बाते परसे कहें। (१) 'द्वेतर पद्य' मेरुता। दो-एक पृष्ठोंमें जो कुछ बन पड़ेगा लिखूँगा। लेकिन कहूँ कि कहानी-उपम्यासके सिवा मैं और कुछ भी नहीं लिख पाता। निश्चय तो भाषाकी दृष्टिसे कारण निकटुक्त अपठनीय हो जाता है। मेरी चिट्ठी लिखनेकी भागा तो देन ही रहे हो। जबकि सम्बन्धमें 'स्वदेश'की चिट्ठी कैसी भरी हो गई है। फिर भी अपनी सीसी-सादी देहाती भाषामें आसन्द प्रकट करनेका हमें संशय करना कठिन है। अतएव लिखूँगा ही। कोई मुझे रोक नहीं सकेगा।

(२) हीरेनकी बात उस धिष्टीमें लिखी है। 'अनामी'की आलोचना-सम्मेलन सम्पन्न होऊँगा।

(३) श्रीकान्तके मृत्युपर्वकी विविधा'में प्रकाशित आलोचनाको किसी भी तरह क्यों न छपाओ लोग पहुँचें ही। लेकिन 'रंग परा'के धाम देना धारद अच्छा ही होगा। बकि और किसीकी राय भी ले लेना।

एक बात और। 'पत्रके शायेदार'की आलोचना या उल्लेख न करना ही अच्छा है। क्योंकि आजकल भारत-कानून इतना कठोर हो गया है कि केवल उल्लेख के लिए ही सरकार धारद सारी पुस्तकको जप्त कर ले।

जित उपमासको तुम लिख रहे हो (जो तीन-चार महीनेमें समाप्त होगा) आशा है वह और भी अच्छा होगा। कपोपकचन जहाँ भी आये, सहज मध्या काममें खना। बहस छोटी होनी चाहिए। अर्थात् एक राग धर-सी नहीं। एक अन्वयमें कुछ, दूसरे अन्वयमें बाकी दिखाना—इसी तरह। उपमा, उदाहरण कोई भी चीज रवीन्द्रनाथकी तरह निरर्थक और असम्भव न हो उठे। मनुष्यको अलङ्कारसं सजानेकी बकि और धुनारकी दुकानमें अलङ्कारोंके 'शो रूम' के सजानेकी बकि एक नहीं है। इस बातको तथा धार रखना होगा। अलङ्कार वाक्यका वाक्यसहित किताना पीड़ादायक होता है, इस बातको केवल पाठक ही जानते हैं। लेकिन अब बत, बहुत डेर-सा उपदेश बिना मूस्य दे जाय। संयमका पाठ पढ़ाते हुए बेलता हूँ और ही सबसे अधिक अवगत हो गया हूँ। आशीर्वाद और प्रार सेना।

—धरानन्द बड़ोपायान

पी ५४९, मनोहर पुस्तक, काशीघाट, कलकत्ता

७ जेठ, १३४१

परमहन्साजीये। पहले अपनी लखर दे हूँ। परसी परसे ध्येयके बादसे किमें दर्द है। मुझदेव महाबाव, का कानार्थ गांगुली बैठे हुए हैं। एक शक्ति लानेमें डेलोपेन किया जा रहा है और मर झाहरसे कहा जा रहा है कि वह

मोटर निकाले। जबर्जस्त् कूनका दबाव दिखाने जाऊँगा। अगर दबाव अधिक न हुआ तो सक्ता ही है, अगर हुआ तो विस्तरपर पहुँकर परम आनन्दसे छमप मिठाऊँगा। मेर मिय इससे बहुतकर आनन्द और आरामकी दूखी बस्तु नहीं है। श्री महाबान् मही करें। जाने दो।

गुरुदेवसे तुम्हारी चिट्ठी आनी पड़ा थी है। किसी मन्त्रीसी जाननेवाले मित्रसे बाकी माधेकी पढ़ा लूँगा।

मध्दु इस अति सुष्ठु निष्कृति'को लेकर समर्पणमें कुर पड़ना और दीनका लड़ग लेकर मैलेका काटने जाना एक ही बात है। सचमुच ही अपने अन्दर बिछेरे बस नहीं पाता। केवल यही एक बात बाब आती है कि तुम्हारे गुरुदेवका आशीर्वाद है और तुम्हारा अकृत्रिम स्नेह और प्रेम। लेकिन मध्दु, ऐसा समझता है कि मेरी ओरसे कुछ भी नहीं है।

तुम भीकान्तका अनुवाद करनेमें क्यों लज्जित कर रहे हो? अगर अनुवाद होना है तो तुम्हीं ही होगा। मवानीकी शुल्मकर भीकान्त बहुतप वर्ष देकर किसी व्यापारका अनुवाद कर हाउनेके मिय कहा था। आठ-दस दिनके बाद वह कुर तो आया नहीं चिट्ठी लिखकर सूचित कर दिया कि हिम्मत नहीं होती और बेटी मैनेजीमें उनसे चिट्ठी लिखी है उससे समझता है कि उनकी बात गलत नहीं है। उसने लज्ज ही लिखा है उससे नहीं होगा। यदि होगा तो वह अलखारी मध्य होगी। सोमनाथ मित्र दूखे वर्षका अनुवाद करनेके मिय उचित हो गया है, इस बातको मैं कुर भी नहीं जानता। 'विचित्र'के उपेक्षने अगर कुर वह व्यवस्था की हो, तो बात दूखी है। पता लगाऊँगा। मैं तो कुर लोभ भी नहीं पा रहा हूँ कि तुम्हारे विषय इस कामको और कौन हाथोंमें ले लच्छा है। 'निष्कृति'का का अनुवाद तुमने किया है उससे अप्रमत्त कौन करता? लेकिन तुमसे भीकान्तका अनुवाद करनेके मिय करनेकी इच्छा नहीं होती। क्योंकि इतने ब' परिश्रमके काममें हाथ लगातेसे तुम्हारे कामोंका प्रति पहुँचेली।

'निष्कृति' के पाठोंमें तुम्हें जिस तरहकी व्यवस्था करनेकी इच्छा हो करना। यहाँ छोटी कहानियोंका अनुवाद करनेकी प्रेरण कर लच्छा है। मगर आइमी नहीं दिखते। 'पणिन्त महाशय'का अनुवाद मेरे ही पास है मगर उसे देखनेसे

छायद तुम्हें दुःख होगा। मायाके साथ मेरी अभी तक मुझका ठ नहीं हुए।
भाषा करता हूँ कि वो एक-दिनमें हो जायगी। मेरा स्नेहाशीर्वाद सेना। इति।
—शरत् दास

पुनरुक्त — शकी समाचार बुद्धदेव ही तुम्हें देगा।

श श

पी ५६६, मनोहर पुकुर, कलकत्ता
१ माघ १३४१

परमकल्याणीयेतु। मधू, कल रातको गोंबके घरसे वहाँ आ गया हूँ।
तुम्हारी बिड़ियाँ मिलीं। एक-एक करके कामकी बातोंका जवाब हूँ।

(१) तुम्हारी निधिकान्तकी तस्वीर अच्छी बनी है। बहुत दिनोंके बाद
द्वि तुम्हारा हूँ देना बड़ी प्रशंसा हुई। अब छत्रमुख ही देखनेकी बड़ी
इच्छा होती है। लेकिन आया छेड़ ही है। सोचा है, इस जीवनमें अब नहीं
देख सकूँगा।

(२) अक्षयपुरी सही-सक्रामत पहुँच गया है वह संतापकी बात है। दर
या कहीं निकलना होकर तुम्हारे आश्रममें आ पहुँचे। उठ दिन हीरेनने आकर
कहा कि मधू दादाका अपना अक्षयपुरी पुराना हो गया है ठहँ एक नर
मरीन चाहिये। कहा अब थोड़ा-बूढ़कर मेरा हो न हरिन। वह राजी हुआ।
यह सब-कुछ उसीने किया है। मैं अब बस्तु हूँ। मुझे कुछ भी नहीं होता।
मैंने देवक रूपेका चेक मिला दिया था। तुम्हें पसन्द आया है इससे बढ़कर
मेरे द्वि आनन्दकी बात नहीं। द्वि आनन्दने अपना सब-कुछ दे दिया, उसे
देना नहीं है पाना है। मुझे बहुत-कुछ मिला, तुमसे बहुत अधिक।

(३) भी अरविन्दके हाथकी लिपी निहो समझाकर रत्न दी है। यह एक
रत्न है।

(४) 'निष्कृति का अच्छा अनुवाद करनेके लिए तुम यथासाध्य करोगे, इसे
मैं जानता था। तुम मुझे सचमुच प्यार करते हो इतकिया नहीं। का यथार्थमें

साधुका यह प्रहस करते हैं वह उनका स्वभाव है। इतको किये बगैर उनसे नहीं रहा जाता। या तो करते नहीं हैं, बर करनेपर देगार नहीं करते।

(५) जब भी अरविन्दने स्वयं देना देनेका संकल्प किया है, तो अनुवाद अच्छा ही होगा। लेकिन मध्य, पुस्तकमें जाना कौन-सा गुण है। भी अरविन्द को क्यों अच्छी लगी नहीं जानता। कमसे कम अच्छी नहीं लगती तो अबरज नहीं होता। खिल भी नहीं होता। तुम जब भीकान्तका प्रचार कर सकोगे, तभी अच्छा लगेगा कि एक बंगाली कहानीकारको पश्चिमवाले कुछ भद्राकी दृष्टिसे देखते हैं। तुम्हारा उद्यम और भी अरविन्दका आशीर्वाद रहा तो वह अत्यन्त भी एक दिन सम्भव होगा। इसकी मुझे उम्मीद है।

(६) अनुवादके मामलेमें तुम्हारी पूरा स्वतन्त्रता मैंने स्वीकार की है। इसका कारण यह है कि तुम तो केवल अनुवादक ही नहीं हो बल्कि भी बने लेखक हो। तुम्हें अधिकधिकार प्राप्त करनेवाले लोगोंकी कमी नहीं, उनमें यह चेष्टा है और आपत्तियाँ भी सीमा नहीं। होने दो। उनकी समस्त चेष्टासे तुम्हारी प्रतिमा और एकाग्रता बना नहीं बनी है। तुम्हारे गुरुकी छमाकांक्षा तो सब-कुछके पीछे है ही। उनकी तारी कुपेयमें सब-कुछ होंगे और तुम्हारे अन्तरकी अत्यन्त शक्ति सार्वक नहीं होगी, पैदा हो ही नहीं सकती मध्य।

(७) एबीन्नाय मुझे इष्टोन्मूत करना चाहेंगे इसका मरोल नहीं करता। मेरे प्रति तो वह प्रत्यक्ष नहीं हैं। इसके अन्तर्गत उनके पास समय ही कहें हैं। साहित्य-लेखके कामके बारेमें वह मेरे गुरुकल्प हैं, उनका ज्ञान मैं कभी चुका नहीं लूँगा। मन ही मन उनपर इतनी भ्रष्टा प्रतिक्रिया है। लेकिन मायने गवारी नहीं दी। मेरे प्रति उनकी विमुक्तताका अन्त नहीं। अत्यन्त इसकी चेष्टा करना बेकार है।

(८) हरिन शायद आज ही कण्ठके अन्तर भावेगा। उसे तुम्हारे कामका नेत्र देनेके लिए कहूँगा।

(९) बाकी रही तुम्हारी बात। मैं तुम्हारा बहुत ही इच्छा हूँ मध्य, इच्छा अधिक बना हूँ। जिन्ही किलनेकी बात लतासे मेरे लिए अद्विष्ट रही है। मनी साहायकर किन्हीं ही नहीं पाता। इसीलिए मुझे जो बातें कहनी चाहिए भी कर

नहीं सका था। वह मेरी अशक्तता है, अनिच्छा कमी नहीं। इसपर विस्वास करना।

मेरा स्नेहाशीवाद सेना और सौतेनको कहना। कड़वैकी बात बाद नहीं आ रही है। स्वर्गीय दादा महाशयके बहो या लकूँ यहाँ धामर देना होगा।

(१) श्री अरविन्दको नववर्षकी प्रायना सचमुच ही बहुत ही अच्छी लगी। पत्रार्थमें वह बहुत बड़े कवि हैं।

श्यामाकाशी

श्री शरत्चन्द्र बहोराध्याय

पी ५१६ मनोहर पुकुर, काशीबाट, कलकत्ता

७ सित, १९४१

परमकल्याणकेपु। मधू, बहुत दिनोंसे तुम्हें चिट्ठी नहीं लिख सका। ब्यापता हूँ अन्धाय हुआ है। इसकी सभा है इससे भी बेस्वर नहीं। लेकिन यह भी देखता आ रहा हूँ कि अक्षम लोगोंकी अशक्तता अगर अक्षम होतो है तो ठीक पूरा करनेके लिए मगवान् आचमी भी कुछ देत हैं एकदम रगतकमें नहीं मेक होते। बुद्धदेव महाशयके कमरे यह आदमी मुझे दिखा दे। मैं तुम्हें जो कुछ कहना चाहता हूँ उसके मर्दंत करता हूँ। और बही खबर भी दे आता है। तुम्हारी तरह उसका स्नेह भी मेरी प्रति सचमुच ही आन्तरिक है। सचमुच ही चाहता है कि मेरा मध्य हो, मेरे यश, मेरी प्रतिष्ठामें कहीं कोई कमी न रह जाये। ठीक दिन उसने मुझे अकरवस्ती पकड़ ले जाकर हॉस्पिटलके बैम्मेके सामने देगाकर तस्दीर टहरवा की सब छोड़ा। कहा रिलीफकुमारकी मौग है अक्-हमना नहीं कर लफटा। उन्होंने जो परिश्रम किया है हमें उनको कुछ सहायता करनी चाहिये, अथात् मेहनतमें हाथ बटाना चाहिये। सब-कुछ क्या वे अकेले हा करें। बुद्धदेव समझता है कि मैं बहुत बड़ा डेलर हूँ। अतएव वह डेलरकका सम्मान मुझ मित्रना ही चाहिये। मैं बहुततरा करता हूँ कि मैं बहुत छोटा डेलर हूँ। पोरन मुझ कोर सम्मान नहीं प्रदान करेगा। इसलिए अन्न अन्दर कोई भरोसा नहीं पाता। वह कहता है कि तो क्या दिव्यन बाबू धन्य हो इतना परिश्रम कर रहे हैं। पानी मित्र मेहनत नहीं करते। श्री अरविन्दन निम्न ही उन्हें आशा दिखाई है। मैं करता हूँ कि तो अरविन्द जानें।

है, तो तब ही कहा है मन्दू । अपना मन तो जानता है कि यह सत्य है, परम सत्य है ।

इसके अन्तर्गत और एक बात है कि मुझसे कौन बड़ा है, कौन छोटा है, हम केन्द्र पर्यायमें मेरे मनमें कोई आशेष कोई बेधेनी नहीं है । अगर कहते कि मेरी कोई भी पुस्तक उपम्यास कहानेके योग्य नहीं है, तो शायद उससे भी सामयिक बेदनाके सिवा और कुछ नहीं होता । शायद विश्वास करना कठिन होगा और ऐसा समेत कि मैं अत्यधिक चीनता प्रकट कर रहा हूँ लेकिन इसीकी ही लाजना मैंने आजीवन की है । इसीलिए किसी आक्रमणका प्रतिवाद नहीं करता । अन्तर्गतमें एक आशय रसीम्नताके विरुद्ध किया जा रही, लेकिन वह मेरी प्रकृति नहीं विरुद्ध थी । जाना कारणोंसे ही शायद गलती कर बैठा था ।

स्वास्थ्य बर्बाद हो गया है । ऐसा नहीं समझता कि अब अधिक दिनोंतक रहना पड़ेगा । इस थोड़े-से समयमें इसी तरहका मन केन्द्र रहना चाहता हूँ । अन्तर्गतकी कुछ भूलोंके लिए परमात्मा होता है । मेरी एक बात याद रखना मन्दू तुम किसी भी कारणसे किसीको क्षमा न देना । तुम्हारा काम ही तुम्हें सचकता देगा ।

अपने मन्त्रोंको कैसे दे रहे हो ? लेकिन क्या इसकी कोई जरूरत है ? इस देखके छारे समझोंकी तुम किस किसे दे रहे हो, खेपने पर बड़ा संकेत होता है ।

मेरा बिरुद्ध विरुद्ध लड़ा अस्तमय होता है, विशेष करके इस पीड़ित दशामें । अगर कहीं कोई अस्मय बात किछ भी हो तो स्थाय्य न करना । अगर कुछ अच्छा रहा तो तुम्हारी दोनों ही पुस्तकें खानसे पहुँचा । इति ।

शुभाशुभ—भी अस्मय लक्ष्मीपाश्या ।

केड (१) ११४

मन्दू भीकास्य अनुप पर्वके समझमें कुछ अपनी बात बतमाऊँ । मेरी इसका भी लाकारण लक्ष्य पटनाभीका केन्द्र इस पर्वको समाप्त करूँगा और नाना दिशाओंसे थोड़ी-सी बातों तथा संयमके अन्तर्गत किछने रहना सुबन हाता है उसकी परीक्षा करूँगा । उपाखान या उपकरणका प्राप्ति नहीं पटनाकी

असाधारणता नहीं बल्कि अत्यन्त साधारण ग्राम्य जीवनके प्रत्येक दैनन्दिन मामलोंको लेकर यह पुस्तक समाप्त होगी। बिछार नहीं रहेगा गहचार्ह रहेगी। विस्तृत विवरण नहीं केवल इशारा रहेगा, जो रसिक हैं उनके आनन्दके लिए। उपन्यास साहित्यको कितना समझता हूँ उससे इतनी आशा रखता हूँ कि अगर और कुछ अच्छा नहीं बन पड़ा हो तो कमसे कम अवश्यत होकर ठप्पूझूझाका स्वरूप नहीं प्रकट कर बैठे।

सावित्रीके सम्बन्धमें 'पुष्पपत्र' (दिनांक-जून १९४४) के 'मुद्रदेव और ययाय और' शीर्षक निबन्धमें जो कुछ लिखा है उसे पढ़ा। तुम्हने ठीक ही लिखा है। लेकिन बहुतोंरे इस बातको क्यों मूढ़ मानते हैं कि सावित्री ययायमें नौकरानी किस्मकी थी नहीं है। पुराणमें लिखा है कि एक बार लक्ष्मी देवीने भी सुजीवतमें पड़ कर एक ब्राह्मणके घरमें दासीका काम किया था। सभी सम्प्रदायोंकी तरह गणिकाओंमें डैजी-जीजी हैं। गणिकाके निकट जो गणिका दासी बनी हुई है उसका और उसकी माँबिन्दिका साहचर्य एक नहीं भी हो सकता है। इसको देख पाना सहज है लेकिन इनको जाननेके रास्तेमें अनक बाधाएँ हैं।

तुम्हारी यह बात बहुत ठीक है कि जो निर्बिचार होकर स्त्रीव्यतिक्रम के पक्षर करनेको ही ययायवाद समझते हैं उनमें आक्षेपवाद तो है नहीं ययायवाद भी नहीं है। केवल गुस्ताखी—न जानत हुए अहंकार। महिलाओंके विरुद्ध कड़ी-कड़ी बातें लिखना बहादुरी हो सकती है लेकिन उस पक्षर चक्कर लम्बे साहित्यका सुभन नहीं हो सकता। (पाण्ड्यादा, भाद्रपद १९५६)

१४

[श्री भूपेन्द्रकिशोर रश्मि रायको लिखित]

१ अप्रैल, १९५६

भूमेन एक सात्विक पत्रिकाके तुम संवादक हो। Catchwords का मोह करी तुम्हें कबमें न कर ले। क्योंकि इस बातको तुम्हें कदापि नहीं भूयना चाहिये कि विद्रव और विद्राह एक वस्तु नहीं है। क्या नहीं देखा है कि विद्रवस

पराधीन देश स्वाधीन हुआ है ! इतिहासमें कहीं नबीर है ! विद्रोहके अन्दरसे स्वतन्त्र देशमें ही सरकारका रूप अपना सामाजिक नीति परिवर्तित की जा सकती है । लेकिन मैं नहीं समझता कि विद्रोहसे पराधीन देशका स्वाधीन किया जा सकता है । इसका कारण क्या है जानते हो ? विद्रोहमें बगमुझ है, विद्रोहमें यह पुष्ट है :—आत्मकण्ड और गृहविच्छेद है । आत्मकण्ड और गृहविच्छेदसे और कुछ भी क्यों न किया जा सके देशके परम शत्रुको पराजित नहीं किया जा सकता । विद्रोह एकताका विरोधी है । (बेणु, आपाव १११९)

साम्प्रदायिक पापिनास

जिजा हजड़ा

१ दिस, १९१९

श्रेष्ठ — नववर्षकी छुट्टीमें तुम्हारे बेषुको मैं हृदयसे आशीर्वाद देता हूँ । जिस जातिका व्यक्ति नहीं है उसकी शक्ति कितनी बड़ी है इस पुराने छत्र को बतमान काळमें नाना उल्लेखनाओंके कारण प्रायः हम भूल जाते हैं । उसका फल यह हुआ कि हीनताका अन्वकार जातीय जीवनमें निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है । समाजमें कूड़ा बहुत जमा हो गया है । कुल की शोभा नहीं इस बालको हम समी न्यनते हैं । लेकिन तुम जो कई छद्म इस छोटी-सी पत्रिकाको केन्द्र बनाकर प्रकाश हुए हो तुम लोगोंने नर-नारीकी बीच समस्याको ही सारी बेदनाओंके ऊपर नहीं रखा है, बही मेरे लिए सबसे अधिक आनन्दका कारण है । पराधीनताका दुष्प्रभाव ही हमारी सभी बेदनाओंसे बड़ा होकर तुम्हारी इस पत्रिकामें बार-बार आया है । प्रापना करता हूँ इस पत्रिकामें इस नीतिका कोई प्रतिक्रम न हो । (बेणु, प्रेषाव ११२७)

साम्प्रदायिक, पापिनास

जिजा हजड़ा

पामकम्पाणीके। भूमि कुछ दिन पहले तुम्हारी जिद्दी मिली । लेकिन इसके बाद ही बुद्धिमान आया पड़ा । इसलिये अबाध देनेमें रैर हो गई । कुछ सोचना

मत । कब तुम लोग लोडोगे और फिर कब तुम लोगोसे मुलाकात होगी इस निर्बल पक्षी मनमें बैठा अकसर सोचता रहा है । साहित्यको छोड़ तुम लोगोसे परिचय हुआ है और अपने देशको तुम अन्तरसे प्यार करते हो यही आनन्द है । लेकिन कुछ अपराधमें बन्द हो सम्झमें नहीं आता । प्रार्थना करता है धीम रिहा होकर फिर साक्षिपमें लौट सको ।

शेष प्रश्न उपन्यास तुम्हें इतना अच्छा लगा है जानकर बड़ी खुशी हुई । इसमें बहुतों सामाजिक प्रश्नोंकी आलोचना है पर समाजानका भार तुम लोगोंपर है । भविष्यकी इस कठिन जिम्मेदारीकी सम्भावनाने ही शायद तुम लोगोंको बहुत आनन्द दिया है । मगर मेरी चारणा है कि वह किताब बहुतोंको निराश करेगी उन्हें किसी भी तरहका आनन्द नहीं मिलेगा । एक तो गस्सांच बहुत कम है बड़ी तेजीसे समय काटना या नौचकी खुराककी तरह निश्चिन्त हो आराममें अर्धसुदी ओंखोंसे आनन्दानुभव करना नहीं हो सकता है । इसके अन्धे खानेकी बात नहीं । फिर भी वही सोचकर किता या कि कुछ लोग तो समझेंगे और मेरा काम इसीसे बल बावगा । सभी प्रकारके रस सभीके लिए नहीं होते । अधिकारी-मेदको मैं मानता हूँ ।

और एक बात याद दी कि वह अति आधुनिक साहित्य है । सोचा या इस दिशामें एक संकेत लाइ जाऊँगा । बूझा हो गया है किन्तुनेकी शक्ति अत्यन्तग्राव है । फिर भी सोचता हूँ कि आगामी कुछदिन तुम लोगोंको शायद इसका आभास मिल जावगा कि गन्दा किये बगैर ही अति आधुनिक-साहित्य लिखा जा सकता है । केवल कोमल-वेदक रसानुमति ही नहीं बुद्धिके लिए बलकारक मोहन उपलब्ध करना भी अति-आधुनिक-साहित्यका एक बड़ा काम है । इसके बाल तुम लोग कर किन्गोगे तो तुम्हें भी बहुत फुन्ना पड़ेगा बहुत सोचना पड़ेगा । केवल मनोरञ्जनके इच्छे कोसछो देनेसे ही खुदकाश नहीं मिलेगा ।

जैवमें हो तुम्हारे पास बहुत समय है । तुम्हें मेरा वही आदेश है कि इस समयको गुपा नष्ट न करना यह निर्बल-बाल जिनमें तुम्हारे पादके जीवनमें कस्यायका डार लोक है । बहुतों लोगोके बीच मनुष्यको पहचानना सीखना । मनुष्यके स्वभावको पहचानना ही साहित्यकी वर्यार्थ सामग्री है । इस तरकी कभी न भूलना ।

हुपानेमें मेरे शरीरको बीठा रहना चाहिए ऐसा ही है। मजेमें रहो, निर
रहो, पही आशीर्वाद देना हूँ इति। (४ खेठ, ११३८)

शुभानुष्वासी
भी शरत्-पञ्चावली

[श्री कृष्ण-दुनारायण मौमिकको लिखित]

कल्याणीयेतु। पत्रिकाके संपादनके बारेमें मेरी राय खानना चाहते हो
लेकिन मैंने तो कभी पत्रिकाका संपादन किया नहीं, अतएव वास्तविक अनुभव
मुझे नहीं है। पर प्रतिमास बहुतेरी पत्रिकाएँ पढ़ता हूँ। इससे पही लगता है कि
मासिक पत्रिकाको बहुजनोंमें प्रिय करनेके लिए सबसे बड़ी आवश्यकता होती है
रचनाओंकी स्निग्धता और संपर्ककी। उम्मासे अभिप्रेत करनेके संकल्पको लेकर
को कुछ क्लिष्टा जाता है, बरा ध्यानसे देखनेपर पता चल जायगा कि उसकी
पौष्ठाक तथा बाहरका अतिरिक्त स्वस्वकाके लिए पाठके चित्रको बिहल कर
देनेपर भी वह स्थायी तो होता नहीं बल्कि प्रतिक्रियात अवलोकप्रस्त कर देता
है। कहानीमें हो या और किसी बीजमें, अगर देखते हो कि बाते सेनककी
अपनी अनुभूतिके रहते छय और बिछाद होकर रचनामें नहीं आई है तो समझ
लेना कि उसके माय और मायाके जाइवर पारे जितने पद-बीजा देनेवाले
और मनुष्यकी दृष्टिको आकर्षित करनेवाले क्यों न हों, अन्तःशरत्-पञ्चावली है।
टिक नहीं सँझते।

इन्तेसेनकुप्रभ (शुद्धिवादी) कहानी नामक एक बात आबक प्रायः
सुनता हूँ, लेकिन उसका स्वरूप कभी नहीं देला वा देखनेपर भी पहचान नहीं
उठा। उस दिन अचानक एक कहानी पढ़ी थी। समाप्त करनेपर ऐसा लगा था
मानो सेनकके पाणिशयके मोहसे रचना पढ़के बीष ही मुँहके बब पिर पड़ी है।
इस वस्तुका पत्रिकामें कभी प्रकाश मत देना। पर ऐसी बात भी न सोचना कि

कहानीमें बुद्धि व्यक्तिकी छाप रहना ही इष्टनीय है, इदय बुद्धिके अनपेक्षित बाहुल्यसे लेखकका अहमक बनना ही अस्वी है।

(‘स्वदेव’ भाषिन ११४)

१६

[श्री अतुलानन्द रायको लिखित]

कल्याणीयेतु। भाषण (११४) की ‘परिचय’ पत्रिकामें श्रीमान् द्वितीय कुम्हार रायको विमिश्र रबीन्द्रनाथके ‘पत्र-साहित्यकी भाषा विषयमें हुमन मेरी राय व्यक्तनी प्यारी है। यह पत्र व्यक्तिगत होनेपर भी जब, जनसाधारणमें प्रकाशित हुआ है तब ऐसा अनुपेक्ष्य शायद किया जा सकता है। लेकिन कितनी ही बार पृष्ठकी कम्मी चिट्ठियोंकी अन्तिम पंक्तिमें ‘कुछ रुपये मेकने की तरह अन्तिम कई चिट्ठियोंका वास्तविक कथन अगर यही है कि यूरोप अपनी मछीनों—वन-दोहन-तोप-बन्दूक मान-हत्याके साथ शीघ्र ही डूबेगा तो आसन्न परिणामके साथ यही समझेंगा कि उस तो बहुत दूर, उस बलुको क्या व्योमों देख जानेका मौका मिल सकेगा।

पर इनके अन्तर्गत कविने और भी जिन व्योमोंके बारेमें भाष्य छोड़ दी है, उन व्योमोंको समझ होता है कि उनमें एक में भी हूँ। असम्भव नहीं है। इस निश्चयमें कविकी शिक्षायत्तका विषय है कि ये ‘मतवाले हाथी हैं’ ‘बे बकवास करते हैं’ ‘पहलवानों करते हैं’, ‘कसरत करायात दिखाते हैं’, ‘मास्केम लास करते हैं’, अतएव उनकी हत्यादि-वृत्त्यादि।

ये बातें जिस किसीको क्यों न कहें जायें, कुम्हार भी नहीं हैं और कानोंको श्रव भी नहीं। स्वेद विद्रूपका आमेब मनमें एक प्रकारका इरिटेयन् (चिड़ चिड़ापन) का देठा है। उससे कलाका उद्देश्य व्यर्थ हो जाता है भ्रोताका मन भी विषय हो जाता है। यद्यपि छीम प्रकट करना जिस प्रकार बनाबरपक है प्रतिवाद भी उसी प्रकार व्यर्थ है। किन्तु बातोंको तोतेकी तरह घुररा की, कहीं शब्दकामी की, कौन-सा ‘लेख दिलायाया कुछ कविसे इन सारी बातोंको

पुल्लव अघातविरक्त है। मेरे कल्पनकी बात बाद आती है। लेनके सैवानमें किसीने कह मर दिया कि अमुक मैलेमें बूझ गया है। फिर क्या करना कहाँ बूझा किसीने कहा किसीने देखा वह मैला नहीं है गोबर है—छप-कुछ हुआ है। कर जानेपर मातापै गौर नहकाए, सिरपर गौर गंगाजल छिड़के परमें धुलने नहीं देती। क्योंकि वह मैलेमें बूझ गया है। नहीं मी हमारी बही दया है।

क्या साहित्यकी भाषा' क्या कूत्तरे दिग्बन्ध इस बातको अस्वीकार नहीं करता कि कविकी वृत्त प्रकारकी अधिकतर रचनाओंको समझनेकी क्षमि मुझमें नहीं है। उनके उपमा-उपहारोंमें कल-पुष्पें आते हैं, छट-छाया, हापी घोड़े जन्तु-जानवर आते हैं। समझमें नहीं आता मनुष्यकी सामाजिक समस्याओंमें नर-नारीके पारस्परिक सम्बन्धके विचारमें वे क्यों आते हैं और आकर किसे बातको छिद्र करते हैं। सुननेमें अच्छे जगनेपर ही तो वे तर्क नहीं बन आते।

एक इष्टान्त है। कुछ दिन पहले हरिकर्णोंके प्रति सम्भाविते ज्ञापित होकर उन्होंने प्रकर्षक-संपर्क प्रति बामूको एक पत्र लिखा था। उसमें सिद्धांत की सी कि आत्मजीकी पाकी हुई बिजली जब गूठे हुए उसकी गोदमें जा बैठती है तो इससे उसकी पवित्रता नष्ट नहीं होती—बह आपत्ति नहीं करती। बहुत सम्भव है नहीं करता हो लेकिन इन्हे हरिकर्णोंकी कौन-सी सुविधा हुई। कौन-सी बात छिद्र हुई। विस्मयक तर्कसे आत्मजीको यह तो नहीं कहा जा सकता कि बिस्वी किसी अति-निहृद-जीव तुम्हारी गोदमें जा बैठती तो तुमने आपत्ति नहीं की बल्कि एव अति उत्सृष्ट जीव मैं मी तुम्हारी गोदमें बैठूँगा तुम आपत्ति नहीं कर सकती। बिस्वी क्यों गोदमें बैठती है क्यों क्यों पाकीपर बदती है इन तर्कोंको पेश करके मनुष्यके प्रति मनुष्यके ज्ञाप अस्मानका पैगवा नहीं दिया जा सकता। वे ठगमार्य सुननेमें अच्छी लगती हैं। ऐसनेमें बकाबीज लगा देती हैं लेकिन परस्परपर को दाम लगता है वह अतिबिचल होता है। विद्युत्-चैनरीकी अग्निगनित वस्तुओंके उत्पादनकी अपेक्षाविता दिनाकर मोड्य उपमान यी असन्त छविहर है, यह बात छिद्र नहीं की जा सकती।

आधुनिक कालमें कल-कारणानोंकी मान्य कारणोंसे बहुततर योग निम्न करते हैं रवीन्द्रनाथने मी की है—इसमें शोष नहीं। बल्कि यही चेतन हो गया है। बहु-निर्मित वस्तुके संस्पर्शमें जा जाग इच्छासे या अनिच्छासे आ गये हैं,

उनके कारण भी मुल-मुल्कोंके कारण भी बरिष्ठ हो गये हैं—जीवन-माशाकी प्रतापी भी बढ़त गये हैं। मीरके किसानोंसे उनका जीवन हलकू नहीं मिलता है। इस बातको लेकर मुल किया जा सकता है, लेकिन फिर भी अगर कोई इनकी नाना विविध बटनाओंका लेकर कहानी लिखता है तो वह आरिख क्यों नहीं होगा ? फिर भी नहीं कहते हैं कि नहीं होगा। उनकी आरिख है केवल आरिख को माशाके उल्लेखनसे। किन्तु इस माशाका निम्न किस बटते होगा ? हमहम या कहते बातचीतसे ? कविन कहा है—निम्न होगा आरिखको चिन्तन मूल नीति। किन्तु यह 'मूल नीति' लेखककी बुद्धिके अनुभव और लकीय रसोप जीवके आरिखके विषय और कहीं है क्या ? विरचनकी दाहार्द अंतरके बरते या या सकती है और उर नहीं। यह मुगलूना है।

कविन कहा है, "उल्लेख आरिखकी भी बरी दरा है। मुलके आरिखका रूप विषयोंके लुके नीचे गये गया है। लेकिन प्रमुखमें अगर कोई कहता है 'उल्लेख-आरिखकी यह दरा नहीं है। मुलके आरिखका स्वर विचारके लुके नीचे दूर नहीं गया है, विचारके लुकेवल उल्लेख हा उठा है' तो उसे कौन-सी नमीर लेकर चुन किया आपण ? और इसीके लय एक बात आरिखका प्रयः और मुनार बढ़ती है। रवीन्द्रनाथने भी उनका यह कहकर बढ़ाया दिया है कि 'अगर मुल कहनेके अर्थमें आता है तो कहानी हो मुनना पाहेया अगर वह आरिख है।' बातका स्वर करके हुए में अगर पाठक कहें—हैं हम आरिख हैं लेकिन समय बरता है और उर भी बढ़ी है। कतएक राजकुमार लय मेरुके-मेरुकेकी कहानीसे इमार मन नहीं मगता है तो उनका उत्तर बुद्धिनीत होगा देना में नहीं मगता। व अनायास ही कह सकते हैं कि कहानीमें विचार आरिखी छाप रहनेसे हा वह पणियावन नहीं होती या विगुद कहानी लिखनेके लिए लेखकको विचार आरिखके निर्मित करनेकी भी आवश्यकता नहीं।

कविने महाभारत तथा रामायणका उल्लेख करके प्रीय और उनके परिजनों को आलोचना करके दिखाया है कि 'वक्ताव की आरिख व वनों परीय मिहमें निर गये हैं। इस बातकी भी आलोचना नती कहेंया क्योंकि वे दोनों प्रय केवल आरिख ही नहीं, बन्दव हो हैं ही आरिख इतिहास की है। वे दोनों

चरित्र साधारण उपम्यासक बनावटी चरित्रगान नहीं भी हो सकते हैं, अतएव, साधारण काम्य-उपम्यासक माप-रखते नापनेमें मुझे शिस्तक होती है।

पत्रमें इण्डियन शब्दकै कितने ही प्रयोग हैं। ऐसा समझा है मानो कविने बिना तथा बुद्धि दोनों अर्थोंमें इस शब्दका प्रयोग किया है। प्राप्तेम शब्द भी बैठा ही है। उपम्यासमें कितने ही प्रकारकै प्राप्तेम रहते हैं, व्यक्तिगत, नीतिगत, सामाजिक, सांसारिक इसके अलावा कहानीका अपना प्राप्तेम, जो प्राप्तेम सम्बन्ध रखता है। इसीकी योंत सबसे जटिल होती है। कुमारसम्मेलका प्राप्तेम उत्तरकाण्डमें रामचन्द्रका प्राप्तेम डाकू डाकूमें नोरका प्राप्तेम अथवा योगायोगमें कुमुदका प्राप्तेम एक ही व्यक्तिके नहीं हैं। 'योगायोग' पुस्तक का 'विचित्रा' में प्रकाशित हो रही थी और अण्वाणके बाद अण्वाणमें कुमुदे को इंगमा काय किया था मैं तो समझ ही नहीं पाता था कि उस पुरुर्य प्रसन्न पराक्रम्य मधुसूदनसे उसकी रक्षाकरी स्यात्त कैसे होगी। लेकिन कीन जानता था कि समस्या इतनी छद्म थी और ऐसी डाकड़ आकर सज्जमानमें उसका फैसला कर देगी। हमारे जगधर बाबा भी प्राप्तेम बरबास्त नहीं कर पाते हैं। वह लज्ज रहते हैं। उनकी एक पुनर्कर्म इसी तरहके एक आदमीने बड़ी समस्या पैदा कर दी थी लेकिन उसका फैसला वृत्तों तरहसे हो गया। पुनर्कार कर एक जहरीला छौप निकला और उसे काट लिया। बाबासे पूछा था कि यह क्या हुआ। उन्होंने उत्तर दिया था कि, क्यों, क्या छौप किसीको नहीं काटता।

अन्तमें और एक बात कहनी है। रवीन्द्रनाथने लिखा है 'इबसेनके नाटकों का इतने दिवौतक कुछ कम आदर नहीं हुआ है लेकिन क्या जब उनका रंग पत्रिका नहीं हो गया है। कुछ दिनोंके बाद क्या वह दिताई पड़ेगा। नहीं वह लफटा है, लेकिन फिर भी यह अनुमान है प्रमाण नहीं। बाबमें किसी समय ऐसा भी हो सकता है कि इबसेनका पुराना आदर फिर भी आये। वर्तमानकाल ही साहित्यका परम हार्दिकोय नहीं है।

१७

[अविनाशचन्द्र घोषालको लिखित]

१५ भाद्रप १९४१

कस्याजीयेतु । बातावनके प्रत्येक अंकको मैने प्यानसे पढ़ा है । अच्छा पाठनेछासे कमी दूर नहीं रक्ता ।

समी विरयोंमें एकमत हो सका हूँ ऐसा नहीं लेकिन अकारण विद्रोह या व्यक्तित्व ईर्ष्याके आक्रमणसे किसी आलोचनाको कभी कर्बकित होते देखा है ऐसा नहीं लगता । वह आनन्दकी बात है । लेकिन अगर ऐसा कभी हो भी गया हो तो मेरी नजरोंमें नहीं आया तो उसके सम्बन्धमें आज यही बात कहूँगा कि जो हा गया सो हो गया लेकिन मूलन बर्षके प्रारम्भसे तुम लोगोंको सर्वशः यह याद रखना चाहिए कि रचनामें अवहिल्लुवा तो बरदाष्ट की मी जा सकती है, पर झूठा नीचता, अस्व निष्ठासे मनुष्यको हीन सिद्ध करनेके प्रयासको पाठक-समाज अधिक शिरोतक रहन मही कर लक्ष्या है उसकी नजरोंमें खेलक स्वयं ही धीरे धीरे छोटा होता जाता है, उसकी कर्बई कुछ जाती है । ठर पत्रिका की मर्बादा मह होती है उद्देश्य विधिक हो जाता है, आलोचना निष्पक्ष-परिभ्रम हो जाती है — समी प्रकारसे उसके कस्यावका सामर्थ्य हीन हो जाता है । इससे बढ़कर पत्रिकाकी कोई दूसरी अवनाति नहीं । केवल अच्छा वा अस्वापके लिए ही नहीं, इस बातको निश्चित ध्यानना कि कुरूपता कभी दीव भीनी नहीं होती । ('बातावन' १५ भाद्रप १९४१)

कस्याजीयेतु । कस्य कर रहा हूँ कि देशकी साप्ताहिक पत्रिकाओंको क्रमशः लोगोंकी उत्तुङ्ग और उत्कृष्ट हृदि प्राप्त हो रही है । अथात् मनुष्य दैनिक प्रयोजनमें इनकी आवश्यकता भी अब अनुभव कर रहा है । आनन्दकी बात है । लेकिन इस प्रतिज्ञाके आचरणको केवल दमक करनेसे ही नहीं बसेगा, कामके अन्दरसे अपनी मर्बादा प्रतिदिन सिद्ध करनी होगी निरन्तर वाद रक्खना होगा कि तुम्हारी कर्मशीलता आचारण लोगोंके समीप और कस्यावको समृद्ध बना

रही है। और किसी दूसरे उपायसे अपने अस्तित्वको कायम रखना पत्रके लिए कैसा व्यर्थता ही नहीं विद्यमाना भी है।

तुम्हें बचपनसे जानता हूँ। तुमने अपने आदर्श, अपने अनुभवकी मरि सामने न जाने कितनी बार खर्चा की है। छोटे मार्गकी तरह उपदेश मार्ग है। जीवन यात्रामें इन सबका तुम भूक न खाओ वही मेरी इच्छा है।

परिष्कारके बचनेका काम सिद्ध साधिका नहीं है, जाना प्रकारसे विमम है, मिश्र-मिश्र प्रकारकी प्रतिक्रियाओंका सामना करना पड़ता है। निस्सन्देह कमसे अधिक ही सामयिक हैं तथापि समय और सहनशीलताकी आवश्यकता है। ज्ञानता हूँ निरन्तर आलोचना साताहिकका प्राण है कष्टम विमुक्तता अवस्था है। फिर भी कहता हूँ कि इससे भी ज़री अधिक मूल्यवान् तुम्हारा ज्ञान चरित्र और मर्यादा है। असौकर्यसे और बुरी बातोंसे अपने बचपनको कभी कल्पित न करना। किसीको छोटा बनानेके लिए नहीं, बड़ा बनानेके उद्यममें ही तुम्हारी प्रशुद्ध शक्ति निरन्तर अती रहे। यही प्रार्थना करता हूँ। प्रत्येक पक्षर तुम्हारी अप्रतिहत निज होकर ही रहेगी। इति।

७ भावन, १९४२

शुभाकांक्षी—

श्री शरत्चन्द्र चट्टोपाध्याय

१८

[श्री मल्लाल रामका लिखित]

१७ भाविन, १९४१

परम भद्राद्यह । "आचार्योनि कहा है, कलाकी साधनाका मूल सूत्र है सत्य, शिव, और सुन्दर । अर्थात् साधना उत्पत्ति आधारित हो, सुन्दरपर आधारित हो और उत्तम पर कल्याणमय हो । जो विद्वान् साधक हैं (सत्यज्ञान नहीं कह रहा हूँ—साधारण सांसारिक कार्य कह रहा हूँ) अर्थात्, जो वैज्ञानिक हैं उनका प्रथम मन्त्र है सत्य । साधनाका प्रथम सुन्दर मन्त्र, कल्याणकर

भक्त्यापन हो—किसीमें उनकी आसक्ति नहीं। हो तो बाह बाह नहीं हो तो भी बाह बाह।

लेकिन साहित्य-सेवामें बहुत दिनोंसे तृतीयांश निरन्तर अनुभव करता हूँ कि यहाँ सत्य और सुन्दरमें परा-परपर विरोध उभर रहा होता है। समाजमें जो बदनाम सत्य है, साहित्यमें वह सुन्दर नहीं भी हो सकता है, और जो सुन्दर है वह हो सकता है साहित्यमें तो कहीं जाने सिध्दा है। इसी लक्ष्यके रूपमें जानता हूँ उसे साकार मूल रूप देन जाकर देखता हूँ वह भीमल कदाकार हो जाता है वृत्तों और अक्षरोंका बचन करनेपर भी सुन्दरका रूप नहीं मिलता है। मंगल अमंगल भी इसी प्रकारका है। साहित्यमें वह प्रजन व्यापक है इसे स्वीकार किये बगैर भी ठाँ नहीं रहा जाता।

पूछता हूँ, सत्य अगर सुन्दरका विरोधी होता है कस्यापन भक्त्यापन गौण होता है, साहित्य-साधनामें इस समस्याका समाधान किस प्रकारसे होगा ?

भवदीय—श्री धारण्यन्द्र चट्टोपाध्याय
(प्रवचक अगस्त १९४४)

१९

[श्री पञ्चपति चट्टोपाध्यायको लिखित]

गुहाय प्रण है—मैं मादक क्यों नहीं मिलता। शायद गुहारे मनमें यह विचार हो कारणोंसे जाई है। प्रथम नाट्यकार और दूसरे ग्रन्थकारों द्वारा रचित उपन्यासोंके मादकत्वका भीषण योगेय चौधरीने हाथमें 'वातापन' पत्रिकामें बंगला मादकके सम्बन्धमें जो मन्तव्य प्रकट किया है उसे गुम पूरी तरह नहीं मान लें और दूसरी बात है गुम निरन्तर किन नाटकोंका अभिनय दम्भा करते हैं उनके माध माध परिचयन हाथोंको विचारकर रक्तपर गुहारे मनमें यह बात जाई है कि धारण्यन्द्र नाटक लिखे तो चायद रंगमंचके सेहरेमें कुछ परिचयन हो सकता है।

रही है। और किसी वृत्ते उपायसे अपने अधिकारको कायम रखना पक्ष के लिए कैसा व्यर्थता ही नहीं सिद्धमाना भी है।

तुम्हें बचपनसे आनता है। तुमने अपने आदर्श, अपने अनुभवकी मेरे सामने न जाने कितनी बार पर्चा की है। छोटे मार्गकी तरह उपदेश माँगा है। जीवन-मात्रामें इन सबको तुम भूल न जाओ यही मेरी इच्छा है।

पत्रिका के सम्पन्नेका काम सिर्फ वापिसका नहीं है ज्ञाना धकाखे विम्वर है, निम्न-मिश्र प्रकारकी प्रतिकूलताओंका सामना करना पड़ता है। निस्सन्देह रूपसे अधिकार ही सामयिक है तथापि संवम और सहनशीलताकी अपेक्षा आवश्यकता है। जानता हूँ, निरंतर आलोचना साप्ताहिकका प्राण है कर्तव्य विमुक्तता अपराध है। फिर भी कहता हूँ कि इसमें भी कहीं अधिक सूक्ष्मज्ञान तुम्हारा अपना परिणाम और मर्चा है। असौख्यसे और कुरी बातोंसे अपने बचपनको कभी कल्पित न करना। किसीको छोटा बनानेके लिए नहीं, बड़ा बनानेके उद्यममें ही तुम्हारी प्रमुख शक्ति निरन्तर लगी रहे यही प्राप्ति करता हूँ। प्रगति के पथपर तुम्हारी अप्रतिहत विश्वास होकर ही चलो। इति।

७ भाषण १९४२

शुभाकांक्षी—

श्री शारदाम्बर चट्टोपाध्याय

१८

[श्री मणिलाल रायका लिखित]

१७ आश्विन, १९४१

परम भद्राशुभ ।" आपायोंने कहा है कलाकी साधनाका मूल गुण है स्वयं शिष्य और गुरु। अथवा साधना सत्यपर आधारित हो गुरुपर आधारित हो और उनका पक्ष कल्याणमय हो। जो विज्ञान के साधक हैं (तत्त्वज्ञान नहीं कह रहा हूँ) — साधारण सैमायिक अथ कह रहा हूँ) अथवा जो वैज्ञानिक हैं उनका एकमात्र मन्त्र है सत्य। साधनाका एक सुन्दर-असुन्दर कल्याणकर

कहना-हर हो—विष्णुमें उनही काशकि नहीं। हा ठीक बर बर नहीं हा हा
मी बर बर।

[illegible]

दूष्टा हैं सब कार सुधारका विरोधी शक्ता हैं। कल्याण अवस्थान में
होता है साहित्य-रूप में इस अवस्थाका उन्नायन दिन अक्षय्य होता !

मरदी—बी हरचन्द्र बहलाल
(प्रवक्तृ, १९४४)

[श्री पशुपति षड्हापाध्यायको लिखित]

दुःख ही है—मैं नाटक क्यों नहीं लिखता ! अगर तुम्हारे मनमें यह विचार हो जाए कि यह है। प्रथम नाट्यकार और दूसरे मनमें ही यह विचार उठानेवाले माहुरकथावादी श्रीयुक्त बापेय बीरमान इन्होंने 'बाह्य' परिकल्पना देना नाटकके सम्बन्धमें ही स्पष्ट कर दिया है। उसे ही ही नहीं मान लें और दूसरी बात है। शुभ निम्नतर कि नाटकका अन्तिम देखा करते हैं, उनके माहुर माहुर करीबतः ही हिन्दी विचारकर देना ही तुम्हारे मनमें यह बात आती है कि एल्लेखन नाटक लिखे तो माहुर माहुर ही नाटक ही परिकल्पना ही स्पष्ट है।

दुम्हारे प्रश्नके उत्तरमें मेरी पहली बात यह है कि मैं नाटक नहीं लिखता । इसका कारण है मेरी असमता । दूसरी इस असमताको अस्वीकार करके अगर नाटक लिखता हूँ तो मेरी मम्सूरी नहीं पोसावगी । यह मत समझना कि केवल रूपएकी दृष्टि ही यह लिख रहा हूँ । संसारमें उसकी आवश्यकता है, लेकिन एकमात्र आवश्यकता नहीं इस सत्यको एक दिन भी नहीं भूँटा हूँ । उपन्यास लिखनेपर ग्रासिक पत्रिकाओंके सम्पादक साग्रह उसे से आवेंगे उपन्यास छापनेके लिए प्रकाशकोंकी कमी नहीं होती कमसे कम अवसर नहीं दुर्लभ है और उस उपन्यासको पढ़नेवाले भी मिलते रहे हैं । कहानी लिखनेके निबन्धोंको मैं जानता हूँ कमसे कम सिला बीजिये' कहकर किसीका दरवाजा बटखटानेकी दुर्रति नहीं दुर्लभ है । लेकिन नाटक ! रंगमंचके 'अधिकारी ही इसके अन्तिम हार्डकोर्ड हैं । सिर दिहाके अगर कहते हैं कि इस जगह ऐक्शन कम है,—दर्शक नहीं स्वीकार करेंगे या यह नाटक नहीं चल सकता तो उसे बचानेकी कोई छूट नहीं । उन्हींकी राय इस विषयमें अन्तिम है । क्योंकि वे विशेषज्ञ हैं । रूपा देनेवाले दर्शकोंकी एक-एक बातको वे जानते हैं । अतएव इस मुसीबतमें खाम ख्याद घुल पड़नेमें हिषा होती है ।

नाटक घटका मैं लिख सकता हूँ । कारण नाटककी जो अत्यन्त प्रयोजनीय बात है—जिसे अच्छी नहीं होनेसे नाटकका प्रतिपाद्य किसी भी तरह दर्शकके हृदयमें प्रवेश नहीं करता है—उस कथोपकथनको लिखनेका अम्पास मुझे है । बात बैसे कहनी पारिष, किन्तु सख बनाई कहनेसे बह मनपर गहरा असर करती है इस कौशल्यको नहीं जानता ऐसा नहीं । इसके अतिरिक्त अगर चरित्र वा घटना निमाषकी बात कहते हो, तो उसे भी कर सकता हूँ ऐसा मुझे विश्वास है । नाटकमें घटना वा सिन्चुएशन तैयार करना पड़ता है चरित्र-सूचनके लिए ही । चरित्र-सूचन दो तरहसे हो सकता है—एक है प्रकाश अपवा पात्र पात्री जो है, उसीको घटना-परम्पराकी सहायतासे दर्शकोंके सम्मुख उपस्थित करना । और दूसरा है—चरित्रका विकास अर्थात् घटना-परम्पराके अन्दरसे उसके जीवनमें परिवर्तन दिखाना । वह अम्पछाईकी ओर हो सकता है और दुपछाईकी ओर भी । मान लो कोई आदमी बीस तक पढ़के बिलटन होटलमें खाना खाता था, शूट बोलता था और घूमे घूमे काम भी करता था । आज

पर धार्मिक वेधन है—बौद्धिकचक्र के घाटोंमें पतनकर मध्योका रज गिर जाता है तो उसे हाथसे धीछ देना है। फिर भी हो सकता है कि यह ठठका दिग्भाषयी पन न हो सप्या आन्तरिक परिवर्तन हो। हो सकता है बहुदूरी घटनाओंके आबधमें पड़कर दल-पाँच मते आहमियोंके सम्पर्कमें आकर उनसे प्रभावित हुँकर आज वह सचमुच ही बदल गया हो। अतएव वह बीत कर पहले जो या वह भी सत्य है और आज जो हो गया है वह भी सत्य है। लेकिन जैसे-तैसे करनेसे काम नहीं चलेगा—नाटकके अन्दरसे, रचनाके अन्दरसे पाठक या दृष्टाके सम्मुख इसे पथार्थ बनाना होगा। उन्हें देना नहीं क्याना चाहिए कि रचनामें इस परिवर्तनका कारण कहीं ईकनस भी नहीं मिलता है। काम कठिन है। और एक-बात। उपन्यासकी तरह नाटकमें लक्ष्यरूपन नहीं है, नाटकको एक निरिबत समयके बाद आये नहीं बहने दिया जा सकता। एकके बाद दूसरी घटनाको तयकर नाटकको दृष्टों या धर्मोंमें विमिश्रित करना,—वह भी प्रयत्न करनेपर शायद कुत्साप्य नहीं होगा। लेकिन सोचता हूँ करके क्या होगा! नाटक जो निर्मैगा उसे संवस्य करेगा कौन! विभिन्न समस्यार अभिनेता-अभिनेत्री कहीं हैं! नाटककी मासिदा बनगी, ऐसी एक मी तो अभिनेत्री नजर नहीं आती है। इसी प्रकारके नाना कारणोंसे साहित्यकी इस दिशामें पय रचनकी इच्छा नहीं होती। आधा करता हूँ किसी दिन वर्तमान रंगमंचकी यह कमी दूर होगी लेकिन शायद हम उसे जैसीसे नहीं देख सकेंगे। अवरन ही अगर वास्तविक प्रेरणा आए तो शायद कमी निम्न भी लूँ। लेकिन अधिक आशा नहीं रखना। (नायक, ६५ आस्तिन १९४१)

२०

[जहानपारा चौधुरीको लिखित]

११ मार्च, १९४९

मुमन अपनी धार्मिक धर्मिकमें थोड़ा-सा कुछ लिख देनेके लिए अनुपेक्षित है। मेरी वर्तमान अवस्थामें शायद थोड़ा ही लिखा जा सकता है।

तब मित्रता बेहरा विपन्न हो उठा बोले क्या तब इसी तरहका अस्वयंग (Non-co-operation) चिरकाक पड़ेगा !

बोका, नहीं, चिरकाक नहीं पड़ेगा, क्योंकि, जो चाहिये सेवक हैं उनकी शक्ति उनका सम्प्रदाय अच्छा नहीं मूकमें, इदमें वे एक हैं। उसी उत्पत्ती उपलब्धि करके इस असीमित सामयिक अन्तरको जान तुम्हीं लोगोंको तरम करना होगा।

मित्रने कहा, अक्से इसीकी चेष्टा करेगा। बोका करना। अपनी चेष्टाके बाद मगवान्के आशीर्वादका प्रतिदिन अनुभव करोगे।

[‘चर्पवाणी’ तृतीय वर्ष १९४२]

२१

[काबी वदको लिखित]

बाबे धिबपुर, हबटा

१०-१-१९१८

तबिनय विवेदन है कि दो दिन पहले आपका पत्र और ‘मित्र परिवार’ मिले। अन्तिम कहानी ‘इमीर’को छोड़कर बाकी तीनों कहानियाँ पढ़ ली हैं। आज-कल कहानी पढ़ कर आनन्द पाना और प्रशंसा कर सकना दोनों ही मामो कठिन हो गया है। पुस्तक उपहार पाकर मन्त्रकारको दो अच्छी बातें कहने और स्वागत-करणसे उत्साह देनेका मौका न पानेके कारण अतिशय कुम्भित रह्य हैं। आपने मुझे यह सुझाव दिया है इसलिए सम्प्रदाय देया है। समग्र ही मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। अगर यह आपकी पहली चेष्टा है तो भविष्यमें आपसे बहुत अधिक आशा की जा सकती है इसे कहनेकी आवश्यकता नहीं।

अम्नी रचनामें आपने उर्दू शब्दोंका व्यवहार करके अच्छा ही किया है। अल्पया मुख्यमान पाठक-पाठिका कमी इसे अपनी मातृ-भाषा समझकर निःसंकोच रूपसे स्वीकार नहीं कर पायीं। उन्हें बारम्बार यही बगता कि यह

हिन्दुओंकी माया है, उनकी नहीं। इन का अगल-बगल बसनेवाली जातिपोंमें साहित्यिक मिश्रण स्थापित करनेका शापद यही सबसे अच्छा तरीका है। हाँ, सब साहित्यिक इस मतके पक्षमें नहीं, पर मैं इसी तरहकी रचनाका पक्षनाती हूँ।

पर आपको एक बात स्मरण करा देनेकी जरूरत महसूस करता हूँ। मैं बहुत दिनोंसे यह व्यापार कर रहा हूँ। हाँ सच्चा है कि थोड़ा-बहुत अनुभव भी संवस किया हो। व्यापार करता हूँ यथोचित उपदेश देनेके कारण धुम्भ नहीं होंगे। बात यह है कि सभी जातिपोंमें मधे-सुरे बादमी हैं। हिन्दुओंमें भी हैं, मुसलमानोंमें भी हैं। इस सबको कभी न भूलें और एक बात याद रखें कि प्रत्येक किस्ती विशेष जाति-सम्वन्धाय या बमका नहीं होता। वह हिन्दू मुसलमान, इत्यादि, यहूदी सब-कुछ है।

भवदीय—

श्री दारुणन्द चट्टोपाध्याय

२२

[श्री रामप्रसाद मुखोपाध्यायको लिखित]

रामप्रसाद पो पानिवास

जि हबड़ा

२५ अगस्त १९३३

परमकृष्णायीदेयु । रामप्रसाद परलौं तुम्हारी बिट्ठी मिनी। मरी सबमुच ही बड़ी हज्जा होती है कि सदाको तरह इस बार भी और कैवल्य इस बार ही नहीं खारे मक्खनमें तुम सबसे आगे-आगे खचो। अध्ययन अच्छा नहीं हुआ है यह मैं जानता हूँ, फिर भी आशा है कि कोई आसानीसे तुमसे आगे नहीं बढ़ सकेगा।

उसके बादसे मैं कलकत्ता नहीं गया। इधर छापी परिधिमें बीते-तेज दिन कट जाते हैं लेकिन एक बार धरका मुँह देख आनेपर सँभलनेमें पाँच-सात दिन लग जाते हैं।

कीत होती है। अधिक न होनेपर भी ५६ हजार रुपयेका जमानतदार हूँ। सोचा है कि भारत कक्षीमें शामिल होकर इस जुका हूँगा। वे मुझे भीयार्ह दिस्ता दरो। अब सांसारिक बुद्धिवाले जैसा आचरण करते हैं मैं भी वैसा ही करूँगा। अर्थात् ठगा नहीं बालूँगा। दयाहरेके बाद ही सारी बातें तयसीजके साथ तय करूँगा। लेकिन इसी बीच साहित्यिक परिचित-अप्रचित बहुतरे भोग भिन्न रहे है कि उनकी रचना लेकर पैसागी रुपये मेंही। हाय इसकी शक्ति अगर होती। किन्तु इसी शक्तिकी मुझे परम आवश्यकता है।

बहुत दिनोंसे तुम्हें नहीं लेता है। तुम लोगोंकी बीमारी अगर अच्छी हो गई हो तो एक बार जब क्यों नहीं आते? मेरा स्नेहासोबास लेना।

—दादा

२४ अश्विनीदश रोड काशी घाट,
कलकत्ता

१९ कार्तिक, १९४३

कस्मापीयेतु। भिन् कल गाँवने यहाँ आनेपर तुम्हारी चिट्ठी मिली। जल्दीमें छोट आना पड़ा क्योंकि यहाँ खबर पढ़ीकी कि बड़ी बहू म्यूमानियासे लाल पकड़े हुए है। लेकिन मामला बहुत आगे नहीं बढ़ा है। आशा है जल्द ही अच्छी हो व्यर्थगी। नहीं तो गरीब आदमी हूँ कलकत्तेके हवाबका मारी पत्र बरखास्त नहीं कर सकूँगा।

मेरे ६१ व बयके प्रारम्भपर कबिने आधीबाद दिया है—अहमद मयामे दिव लोकर मंगलकामना की है। आनन्दबानार पत्रिकासे जितना प्रकाशित हुआ था वह तुम्हें भेज दिया है, अपने हाथने लिखा (आधीबाद) भुग दिया है। तुम्हारे आनेपर उनके वृत्ते पत्रोंकी तरह इसे भी रखनेके लिए तुम्हें हूँगा। तब हम प्रकाशको मुख मोड़ देना। मैं चंगा नहीं हूँ लही पर परमत्त बहुत अच्छा हो गया हूँ। तुम्हारे नहीं है। तुम मेरा आधीबाद लेना और तुम्हारे बड़े माइयोंमे कार्य हो तो उन्हें मेरी प्रियेष्टा करना।

—दादाजी भी शरदम्ब बहोपाध्याय

[रवीन्द्रनाथ ठाकुरको लिखित]

बाबे-धिवपुर, धिवपुर

१९ वीं १९२४

भीरवसेतु ! आज हम आपके पास आ रहे थे । लेकिन रास्तेमें बीसुक्त प्रथम बाबूके वही टकीटोने करनेपर पता चला कि आप बाबूपुरमें हैं । बाबूसेतुमें बापव बापगे । लेकिन उस वक्त मुक्तकाठ करना कठिन है ।

मेरे मुक्तमें एक छोटी-सी साहित्य-समा है । एक-दो महीनेमें किसीके घर पर उसका अधिवेशन होता है । बहुत ही नगण्य वस्तु सामान्य है । फिर भी निम्नमें बार हमने प्रथम बाबूको एकका या और वह कृपा कर सम्मति देने थे ।

कई दिनोंसे हम लगातार बहुत करके तब नहीं कर पा रहे हैं कि इस समामे आपकी परम्परा करनेकी कोई सम्भावना है वा नहीं ।

इस बार जब पर अर्ध तो अमर अनुमति दें, हम आकर आपसे निवेदन करें ।

—सर्वक श्री धारकन्ध चन्द्रायम्बाय

बाबे धिवपुर, हवड़ा

२५ दिसम्बर, १९२९

भीरवसेतु ! कइनोंसे सुना था कि आप मुक्तमें अधिवेशन अस्तित्व हुए हैं । उसमेंनामें आकर मुक्तमें हो लक्षता है कि आपके बारेमें कोई मित्रता बात कही हो । लेकिन जो व्यक्ति इसकी सजाई-सुझाईकी जाँच करने आपके पास गए थे उन्होंने माँ कुछ कम अवसर नहीं किया है । हममेंवही वर्तमान आप सुम्भ हुए हैं और सब-कुछ वही पंजाबवासी विपरीत दिष्ट । उसके न किस्सेसे वह सब नहीं होय—इन बातोंको मैंने उस समय ठीक-ठीक कैसे कहा था मुझे याद नहीं । आज तौरसे मैं बनाकर छूट नहीं बोलता, पर दोस्ती एकदम अवगम्य है ऐसा भी नहीं । कमसे कम इस बातोंको तो अवसर ही कहा है कि

इस बार विद्यापतने लौटकर आप बहुत बदक गये हैं और बंगालके लोगोंके प्रति आपका पहला स्नेह और समत्व अब नहीं है। परन्तु अलहबाग जाहिरपर आपकी छानिक भी आस्था या विश्वास नहीं है, इत्यादि।

आपके पालके एक दिन गुस्तेम ही मैं पक्षा आया था। उसके बाद ही आपसे कुछ झूठी बातोंका प्रचार किया होगा। शायद मेरे मनमें वह सब था कि काग गच्छत समस्त है तो समझे।

आपके प्रति मेने बहुत बड़ा अपराध किया है पर प्रथम अपराध होनेके कारण मुझे क्षमा करोगे। आपके छिपा आर कितनी बड़ आदमीके यहाँ मैं जान-बूझकर कभी नहीं जाता। पर मेरे लिए उसका रास्ता भी मेरे अपन ही बापसे बन हो गया है। सोचने पर दुःख होता है।

आपके भनका गिम्होमें एक मैं भी हूँ। उनकी तरह इतने दिनों तक मैंने भी कभी आपकी निन्धा नहीं की। लेकिन इस बार क्यों धमक आई, नहीं जानता।

मेरा प्रणाम स्वीकार करें। इति। —सबक भी धरतूबन्ध पशुपाप्याय

बाबे-धिवपुर, हबका

२९ वैशाख १३१६

श्रीबालेयु। मुझ स्वार्थके लिए आप पैदा हो जन्मगत करते इतनी बड़ी निन्धा प्रचार की ही हाँ तो उसके बाद बिना किसीकर आपसे धमा मोंगने जाना वैभव निम्नना हो नहीं है आगका निरूप करना भी है। अतएव आपके बगका स्वर इतना कठिन होगा हममें आशयकी कोई बात नहीं।

भारो अपराधकी बात जिन कारणों आपतक पहुँचाई है उन्होंने कहीं इतकी सीमा नहीं रखी।

इसके बाद मैं क्या कहूँ। मेरा प्रणाम स्वीकार करें।

सबक,

भी धरतूबन्ध पशुपाप्याय

बाबे दिगपुर इषका

२ मार्च, १९११

भीरवरेणु ! हमारी प्रकारके कामोंमें पिछड़ाव आपका तनिक भी फुरसत नहीं है। इस बातको हम सभी जानते हैं। फिर भी मैं यह सावकर दिला था कि कागज आपके लिए बात करने जैसा ही जहन है एकमात्र उसीके जोरसे मेरे मारककी सारी घुटियाँ टक जातीं।

स्वयंन्द औरत हाथ तो आपकी इस बिट्टीको दिलाकर आज आसानीसे उससे गीत दिला था लकठा था। उसके लिए यह बिट्टी आदेश जैसी होती। लेकिन वह परलोकमें है और दूसरा कोई नहीं बिनास जाकर गई।

कड़कता आनेपर तो आपको हम मारनको भी फुरसत नहीं मिलती। उस समय इस बातका लेकर मैं उत्साह नहीं करूँगा। मेरा अशेष प्रणाम स्वीकार करें।

—सबक

श्री छात्रवन्द चटोपाध्याय

रामठाबेद पानिनास इषका

२६ मार्च, १९११

भीरवरेणु ! मेरा बचपरेका अशेष प्रणाम स्वीकार करें। इस बीच आप नाना गुस्सा कामोंमें डूबे हुए थे और धान्ति निन्दन भी नहीं ठहर सके। राष्ट्रीय प्रणाम निन्दन करनेमें बिलम्ब किया।

समयकी गतिके साथ-साथ आपका जो आसीपाव मिला मेरे लिए वह अशेष पुरस्कार है। आपका तुच्छतम दान भी संसारमें किसी भी साहित्यिकके लिए सम्यक है। इस दानको तिर माये लेता हूँ।

मेरी तकदीर भण्डी है। ११ मार्चपरको आपका कड़कता आज सम्यक नहीं हुआ। आते तो उस दिनका अनाचार देखकर अत्यन्त व्यथित होते और सबसे बढ़कर दुःखकी बात है कि मेरे प्रायः समयपरक साहित्यिकोंने ही इस उपद्रवका सूत्रपात किया था। सामान्यताकी बात बेवकूफ नहीं है कि हमीको यह श्रेष्ठ पसन्द करते हैं, मैं उपद्रवप्रमाण हूँ। क्योंकि पिछले साल जबकी उत्तममें

इन्होंने कुछ कम दुःख देनेकी चेष्टा नहीं की थी। मैं एक दिन स्वयं आपकी प्रणाम कर आना चाहता हूँ। केवल संकोचके कारण नहीं आ पाता हूँ, कहीं कोई कुछ समय न बैठे।

आपकी तबीयत अब बेसी है। हम गिरे स्वास्थ्यको केवल आप बैठे रहना अधिक शारीरिक परिश्रम कर पाते हैं यही अमरत्वकी बात है। इति।

लेखक—

श्री शंखचन्द्र बहोपाध्याय

२४

[केदारनाथ बघोपाध्यायके लिखित]

बाबे मिश्रपुर, हरदो

१९-१०-१९२

महाशूरेणु। केदार बाबू आपका हाथ मुन भिया अब हल गरीबका हाथ मुनिये।

कुछ दिनोंसे रीढ़में जोड़े-बहुत बरका मजा ले रहा था, हमसे किसीका कोई लात काम मुकामन नहीं था। मैं मुझे और न गरीबीका। अकस्मात् एक दिन रातमें हचके नींद हूट आनेम देना कि साँस अना अममम है। बहुत एक-साँक मन्त्रिय बनेरह करनेपर लगे कुछ अच्छे मन्त्रिय दिलाई भी पढ़ तो शाम होत ही चेष्टा हुआ कि डाक्टरका बुलावा अनिवार्य हो गया। लगे मुगल रहा हूँ। इतने ऊपर एक दिन मोटरके स्थान हो जानेके कारण कमरमें जोरोंका बड़ा दर्द पर अमीमका मसोना है। अगर हममें अहिम भक्ति रण लफा तो बुरे दिन दूर होमे ही। भगवान् भी देवादिदेवने हमारे किए बर दिया है कि अर्थका लून बहामे गीर हम जमी केलाव नहीं आ लगेमे। लतका प्रारम्भ अस्तक नहीं दाता लतक कया मैं और कया आप निश्चित रह सकते हैं, किसी प्रकारकी बुद्धिवाकी करत नहीं।

इसीलिए मुझे भी कयाव नहीं दे लका। रिक्तगी वारते आपका—गुरु

भी हो चुक पीठा हैं। बड़ा ही सुन्दर और उपयोग्य बन पड़ा है। काष्ठों परामी भी अनिन्दनीय है। धारा-समी अच्छा बन पड़ा है। सुराक्षकी अतमात करानीके संवर्धने जब भी करनेका अवसर नहीं आता है। दो-बार रखनाएँ बार देखें। इस बातको सुनकर वह कितना कष्ट है उससे कहीं अधिक न समझ बैठे। पत्र विषय हत्यादिको किसी भी तरह अन्वय नहीं करा जा सकता है, पर मर्ममर्म अन्वय होता इसकी भाषा करना सोइता है।

मैं हूँ तो। बिगड़ने बैठ रहा हूँ। बस ही मेझकर निकल पड़गा बिबर भी गोनीं मौज से जायें। बीमारीके कारण इस बार 'मरतक' के लिए 'मैन देन' नहीं बिब्य सका।

आपका—भी दारु-पत्रायणी

आपके समयके हुए हाथोंमें पतवार रहा था और कुछ भी नहीं न हा 'प्रवास-वर्षों के होनेको सम्मानना नहीं। मुझे लगता है कि इस दुस्समयमें आपको अस्वस्थकी भाषा भी कुछ बढ़ा देना कठिन है। और कर्तव्य-पावन कैसी बड़ी बन्धु संसारमें दूसरी नहीं।

बाबे धिक्पुर, दक्का

१८-११-१९९०

मद्रासदेपु। कैदारबाबू आपकी छिड़ी स्नेहकर मागलपुरमें मिली। आपके साथ मेरा व्यवहार काही निन्दनीय हो गया। लेकिन सबभूर हाकर ही ऐसा हुआ। भाषा है मरिचमें फिर कभी ऐसा नहीं होगा। परन्तु बात है बीमारीमें विस्तारपर पड़ा था। कुछ मा अच्छा नहीं लग रहा था। इसके बाद जब धीरे स्वस्थ हुआ तो बूझने उपमग हिलाई पड़ा। आपके लिए रक्ता इस मर्दान में लकटा था पर 'मरतक'में न मेझनेके कारण आप लोगोंको भी न मेझ सका। उनका न देखर आप लोगोंको देनेसे उनको अच्छा लगता ही नहीं पहुँचती अस्मान भी होता।

इस मर्दानेन फिर सब-कुछ निपमित होगा। मुझे लेकर जो भी कोर कारबार करते हैं उन्हें इसी तरह धुमकता पड़ता है। मैं कैवल्य सुर ही अन्वय नहीं करता और पौन आदमियोंको भी निहमित करता हूँ। इसे आप लोग निज गुणसे धमा करें। स्वमाय।

अब कैसे हैं ? कभी-कभी लहर दिवा करें । मैं कितनी बसदी हो सकेगा मेरा रहा हूँ । इस नियममें इन बार निमित्त रह सकते हैं ।

दूर मिर्जाका मेरा नमस्कार कई और खुश भी हैं । आप लोगोंका—

शारङ्गभट्ट बट्टोपाध्याय

बाबे धिपपुर, दृष्ट

६ अप्रैल, १९९४

मित्रबोपु । केदार बाबू मेरे आभारपत्र, मेरी बातोंका मेरा नहीं है। इसमें अमर कई कि कितनी ही बार मन ही मन लाधा है कि कहीं अमानक मुकाकात हो जाय तो दोनोंको ही न जान कितनी प्रमत्ता होगी । इस बातपर आपसे आपको विश्वास न हो । आपका कभी चिन्ता नहीं बिगड़ा एक प्रकारसे किसीको नहीं बिगड़ा । लेकिन आप मुझसे कितना स्नेह करते हैं इस बातको एक दिनके लिए भी नहीं भूल्य ।

अन्धराष्ट्र लहर पाकर मेरे लिए बीपबीबनकी कामना की है, इसके अन्दर की बसु भूषनेकी नहीं ।

लेकिन बीपबीबनकी प्राप्ति नहीं ? आपने सच कह रहा हूँ कि अगर कल कीड आनेके लिए बुझाया या आप तो 'मेरा कल आना—एक दिन बाद जाऊंगा' मद नहीं करूँगा ।

बहुत दिनोंतक बिधा । अब धीरे धीरे बस देना ही देखने-सुननेमें सामन होगा । क्या सोचन नहीं होगा ? मेरी कुम्हनीमें लिखा है कि ४९ पूरा हानके पहले जाना किसी भी स्थानमें नहीं होगा । मैं कहता हूँ कि बाबा कुछ दिनों बाद माफी देना । माफी पानेकी बिधि तो ओमेजोंकी जगहमें भी है । कुछ पूछ दे दी ।

केदार बाबू मैं आमत हो गया हूँ इनके अन्धराष्ट्र बाई रास राग-व्याधिसे बच नहीं है । लोग इसे निरन्तर बातना ही चाहते हैं ।

आप केन है ? काशीमें आप क्यों नहीं रहते ? इन घरमें एक सुन्दरता यह है कि परिवर्तनीय मूर्त बीप-बीबन होनेको पिक जाता है ।

कमी-कमी यों ही जाना समाचार है । मेरी भद्रा और नमस्कार हैं ।

आपका सबक—भी शरत्-चन्द्र चट्टोपाध्याय

शारंगधरपुर, दिसम्बर

१४-१०-१९४४

शरत्चन्द्र । आज गेले आपकी बिनी मिनी । नाना कामोंमें मूढ़ रहता हूँ । प्रति दिन बहुतों की विद्विषों मिलती है । पर कभी कभी आपकी मिनी कुछ पक्षिर्वा मुझे जो आनन्द दती है वह सबमुझ ही दुःख है । प्रीतिसे अन्दरसे आते हुए वह मानो बहुत-कुछ साथ लाती है । कंदार बागू आरमीके सबसे प्यारकी मैं समझता हूँ । इसमें मैं अधिक मूढ़-मूढ़ नहीं करता हूँ । आपका शरीर ठीक नहीं है । माना क्या जल्द ही वह बीप हो गया । किसी दिन अगर वह बोस होनेसे इन्कार कर दे तो मैं हाथ हाथ नहीं करूँगा । पर क्या पहुँचेंगे । सब नर रचनाओंके साथ-साथ निरन्तर यही ज्योता कि एक देखा आदमी नहीं रहा जिसमें इस रचनाको ग्रहण करनेका इत्थ या शक्ति थी । अपनी नीची रचनाओंके सम्बन्धमें आपने कभी कुछ भी नहीं कहा । लेकिन आपका बाई का कुछ प्रभावित हुआ है वह कुछ पता है । प्रयत्नके बदले प्रयत्न करनेमें मुझे बड़ा संकोच होता था । निरन्तर यही ज्योता था कि कहीं आप विरहास न करें कहीं आपके आत्मनम्मानमें ठेस न लगे ।

कप मी आश्रमा दण्डरा मी आश्रमा—एक दिन पर आप भी नहीं आपने और मैं भी नहीं । आप ठगने मुझे बड़ हैं । आप मुझे आशीर्वाद देंगे । मेरे लिए वह दिन दूर न हो । मैं बहुत भयान हूँ । मुझ तुम्ह मुझ तुम्ह कमी हैसना कभी रोना—मेरे लिए बिल्कुल पुराना हा गया है । ४८ सालकी उम्र हुए—बहुत गर्ह । मेरी बड़ी इच्छा है कि इनके बाद भर क्या पाना बाकी रह गया है क्या ही अधिक दिलचस्पी आवश्यकता नहीं समझता हूँ । आप मुझे आशीर्वाद दें । सरके सम्मुख ही अगर आ गये हों तो आकर सच्चा आशीर्वाद मेरे लिए प्रेषित होगा ।

—आपका भी शरत्-चन्द्र चट्टोपाध्याय

साम्प्रदायिक,

पानिनास पोस्ट, भिन्ना इन्फा

८ बैशाख, १९३३

प्रियबोधु । केदार बाबू कई दिन हुए आपका एक पोस्टकार्ड मिला । पत्र छोटा होनेपर भी स्नेहसे भरा हुआ है । नहीं जानता हूँ कि आपने मुझसे प्यार क्यों किया । बिन गुणोंके कारण मनुष्य मनुष्यको प्यार करता है उनमेंसे मेरे पास कोई भी नहीं है । कमसे कम त्रुटियाँ इतनी अधिक हैं कि उनकी गिनती नहीं ।

उस दिन दिव्यीप्रकुमार रायको यह बाबूने दिखाया था “मुना है कि शरत् अपने कानूनके अनुसार अपनेको किसी शीपाम्बरमें बाँधना करके निस्संग बन्धी मत रह करके बैठ हुए हैं—उनका पता नहीं जानता तुम अथवा ही जानते होगे । अतएव मुझकात करके या पत्र द्वारा किसीना कि वह कहीं भी क्यों न रहे स्वाम्भ-करणसे उनके कल्याणकी कामना करता हूँ ।”

केदारबाबू बन्धी-मत ही लिया है । शहरमें रहूँ या गाँवमें रहूँ, मैं संसारके स्वार माटीसे दूर हो गया हूँ ।

स्वास्थ्य दिन प्रति-दिन-गिरता जा रहा है । आपको धावद धाव होगा कि मेरी कुण्डलीमें ५१ वें वर्षमें जानेकी बात किली है । अब उसमें अधिक देर नहीं है उद बपकी देर है । ईश्वर ऐसा ही कर । अब वह मेरी क्लान्तिको आगे न बढ़ायें ।

कानपुर जानेके एक दिन पहले अनानक कई बार के हो जानसे पेटमें इतना दर्द होने लगा कि आबरके कहनेपर ५-६ दिन बिस्तरपर पड़ा रहा । अब बेसी हाजत नहीं है । अब यथार्थ ही आपसे एक बार मुझकात करनेकी बहुत ही इच्छा होती है । गमी यदि इतनी अधिक न पड़ती तो मैं काशी जानेके लिए आपका किरायेपर मकान देनेके लिए अनुरोध करता ।

अब कुछ नहीं करता हूँ । स्वनाथपणके तीरपर घर बनाया है । इसी बेपरपर दिन-रात पड़ा रहता हूँ ।

हरिदास भाईसे मुझकात हो, तो मेरा आन्तरिक स्नेह व्यतीर्ण है ।

चिन्हाल मच्छा हैं। सामान्य शिक्षापत्रके छात्रका विशेष अभिरोग नहीं है।
मेरा भ्रष्टापूर्ण नमस्कार है। इति।—श्रीरामदास शर्मा पाण्ड्याय।

श्रीरामदास पाणिनाथ

२९ फ़ाब्रिक १९१३

प्रियबन्धु ! आपकी चिट्ठी मिली। केदार बाबू कहनेके लिए अब कुछ
नहीं है। परके एक पत्र-पत्रोंकी मृत्यु भी जिसमें रही नहीं जाती। उसके पास
कहनेके लिए है ही क्या ! आप लोगोंके पास जाकर बैठनेकी वही इच्छा होती है।
और सोचता हूँ कि मन्वर-ही मन्वर मैं इतना दुर्लभ था, वह तो नहीं जानता
था। इस मध्य (आनुविभाग) का कैसे सहीगा ? —आपका शरद

श्रीरामदास, पाणिनाथ

१३-२-१९२७

प्रमथदासरेणु ! केदार बाबू मैं तो अब भी चिन्ता हूँ। मेरा नमस्कार
है। और आप ! हैं न ! चिन्ता रहे तो समाचार है। नहीं है तो क्या करेंगे ?
उस शास्त्रमें ज्ञान न मिलनेपर मुझे शेष नहीं था। वचन ही मेरा मन
इतना उदार और समझौता हो गया है। यहिनो हैं या पहले ही खड़ी गई हैं !

—आपका शरद

श्रीरामदास पाणिनाथ

२९ फ़रवरी, १९१४

प्रियबन्धु ! नमस्कार करनेका समय हो गया है। इसीलिए काशी जाना
एक प्रकारसे तय है। परके लिए चिट्ठी मिल देता हूँ। वस, जबर मिलनेकी
है।

कैकिन आप न रहे तो ? बाबा विद्यावाक्यके कुछ दिन अनुपस्थित रहनेसे भी
मैं आपसे नहीं करूँगा, कैकिन आपकी अनुपस्थितिमें काशीमें एक दिन भी

मेरे लिए बोल हो जायगा। कृपा करके मेरे निवेदनको अतिशयोक्तिकी कोटिमें बाधकर निश्चित न रहें। मैं जानता हूँ कि मुझे आप समझते हैं। इति।

—आपका शरद

शामसावेड़ पानिवास पोस्ट

१ जून, १९२८

प्रियवरपु। मैं जाने कितने दिनोंके बाद आपकी लिखावट देखनेका मिश्री। सबसे पहले यह बात मनमें आई कि प्यार कहीं सच्चा है कहीं आन्तरिक वस्तु है कहीं कोई झग नहीं है। मन स्वयंसेवकी तरह मान लेता है। हमारे बाहरके आवरणका दबकर कोई नहीं चाब सकता कि हममें कोई एक-दूसरेको याद करता है। पर अपनी आरसे जानता हूँ कि जब कभी आपकी रचना पढ़ी है तभी काशीकी बात याद आ गई है। अन्तिम जीवनमें इतना ही पायेव रह गया। पहले अक्सर इच्छा होती थी कि काशी जाऊँ—अब वह इच्छा नहीं होती। क्योंकि आप काशीमें नहीं हैं। अच्छा केशर बाबू काशीबात क्या आपने छाड़ दिया? अन्तमें क्या पुष्पिका के अहन्तुमें हा रहेंग? जानता हूँ कि आपको पुष्पिका छाड़नेमें बहुतसे बाधाएं हैं। फिर भी आप उसी जगह हैं जहाँ-अनपस मुग लगता है। साथ भी नहीं छूटता कि यही तो काशी है। इच्छा हाते ही अकर केशर बाबूने मुझकात की आ लकड़ी है।

अब जगता है कि शामसावेड़का मेरा आत्म निगा। अब अच्छा नहीं लगता। अब मैं कहीं जानेपर ठीक अच्छा लगगा, यह भी निर्णय नही कर सकता। दयारेके बाद कोई फैसला करूँगा।

आपने 'पाइशी की बात कितने मुनी? पिथिरका अभिनय होता है। जेगा सुन्दर अभिनय करता है। नाटक मेरे उपन्यास 'सन्-दर्शन'स लिखा गया है। मनके बावक एक पुस्तक (नाटक) में छपा है। पढ़ा है। नाटक देता भी क्यों न हा अभिनय बहुत अच्छा होता है।

आपकी तरीपत अब कैसी है केशर बाबू? आप अच्छे तो हैं? आपका

करता हूँ कि आज कुछ दिन और जिम्मा रहकर कहानियाँ लिखें। मैं आपकी हर एक पंक्ति पढ़ता हूँ। मजूर रखना हानेके कारण नहीं बचार्थमें साहित्यिक आदमीकी रखना हानेके कारण पड़ता हूँ। मैं मजदूर हूँ। परन्तु जिम्मा रहना पुछना हाँ गवा है प्रति दिन इस बातका अनुभव कर रहा हूँ।
बिप्रीका बचाव देना न भूँके।
—भाषका घरत-पयापली बहागम्पाय

साम्प्रदायिक पानिनास पारद

२७ जुलाई, १९२९

प्रियकोपु। आज बिज्जा बहागम्पाकी सन्धा है। मेरा अन्तःपूष नमस्कार है। इस जीवनमें जिन इने-गिने आगका पचास स्नेह पाकर बन्व हुआ हूँ आप उम्हामेले एक हैं। लेकिन स्नेहकी मवादा केबल बढ़ता आर आलसके कारण ही नहीं रह सका। धायद देता एक भी महीना नहा बीतता जब आपको पाद नहीं करता और बाहरका अन्तःपूष जितना बढ़ता जाता है उतना ही तापता हूँ कि आप मुझे क्या गलत न समझते।
'कुल्लका पचास' आज सरे समाप्त हुआ। अच्छा मेरे जैसे मामूली १ कार्तिक आदमीका क्या समझकर इतना गौरव प्रदान कर बैठे। बचकारों का साहित्यिकोंका एक क्या लावेगा।

बहुत अच्छी लगी। बीन-गुली कियानियोंको कोई आज भी इस तरह अन्तरमें अपनाकर मनु छेकनीते संगारमें प्रकट नहीं करता। दर्शनासे कसेजें एक दोष-सौ ह्यां है। मया और दोषों मानी मगवानून आपपर निछावर कर दी है। इस पुस्तकसे एक दिवापन्था भी समझ किता है। रेकका तदप-जनि कमचारी जब कहता है कि दिनमें एक बार कापी हाथमें छेकर नहीं बैठनेसे कमजोर है कि सारा दिन बेकार गया। किन्तु सई या न किन्तु सई धोखे लेता हूँ कि भान जीवनमें इस परम तप्य वाक्यको आजसे प्रतिदिन पाठ्य करूँगा। मझेनेरा महीन बीत जाते हैं कापी बाबात-कलमका हाथसे छूनेका भी बी नहीं पाहता है। आपको आशीर्वादसे जितने दिनतक जिम्मा हूँ उतने दिनतक प्रति दिन इस बातको पाद रख लई।

पुस्तककी एकमात्र छुटिका ठाँलेन करूँगा। लेकिन आप नायब न हों, यही अनुरोध है। भगवानून आपकी कलनेकी शक्ति वषष्ट दी है पर इस बातको भूलनेत काम नहीं लमेगा कि ऐश्वरवानका मित्रभ्यपी होना चाहिये। कमाकको इसकी अकृत नहीं पड़ती। केवल कियते जाना ही नहीं है। ककनेकी बातको भी भूकना नहीं चाहिये।

इन बार काशी कब का रहे हैं ? अस्सी जार्ब लो मुझे दो अठर मिल दें।

अवत बिट्टीका क्वाव अगले दिन ही दूँगा। अम्पवा नहीं हांगा। नमस्कार।

—आपका शरद्

पुनश्च। अभी अभी बिक्काकी करवाव-कामनाके लाल-लाव का बिछो आपने लिखी है वह भिछी। मेरा भङ्गायुक्त नमस्कार और क्यवाह अं।

वाम्तावेद पत्रिकाव

२५ कार्तिक १९२६

मिरवरतु। कई दिन हुए आपका अलम स्नेह लेकर बिट्टी आई। लोवा का अल छात होकर अवाव दूँगा। उनके बिप मोका नहीं भिक् रहा है। लेकिन दो अठर ही क्यों न हों फिर भी आपकी बिट्टीका क्वाव दूँगा। बहुतेरी बुटियाँ हो गई हैं अलवाका अब आग नहीं बगाऊँगा। अतएव भिल रहा हूँ।

मौसम रहने जानेका वषष्टोय कलभोग आरम्भ हो गया है। बीबानी और बीबदारी मुकदमोंमें फँसकर मरगामीने होइ धूर कुर रहा हूँ।

इन तीनों बगौठक निर्मित और निर्दिष्ट आबठ बहुत आरामठे रहा पर गौषके दवताठे महा नहीं गया। निरयर मशर हो गया। बड़ अमीबारोठ पार पाया का लकठा है का स्थानीय बहुत लाल पलावारका दवाव अकृत है। बहुत दिनोंकी पिक्की बपादा ला-भार बीषा अमीन पी अमीदारकी दान की गई, किन्तु दो-भार लालके नव पत्तीदारने नहीं लहा गया। गरीब प्रजा रोने पोने करी में पी लग पडा। लवर मेर बी कि में जिन कामको हाथमें लेता हूँ उसे छोड़ता नहीं। इसके बाद बीबदारी छारु हुई। जाने बीबिय, इस बातका।

छेकट बंद गया है। सोच रहा हूँ कि इतकें किसी तरह समाप्त हो जानेपर भाईगा। एक प्रकारसे शहर ही सुन्दर है।

कुँहलीका को विचारन दिया है वह किसी भी दशामें अभिरवसनीय नहीं है। बुलारका एक नशा-खा होता है। पौख्तारी मामनेकी तरह उठना अधिक नहीं होनेपर भी ठगकी उछलना दुष्प्रवस्तु यहाँ है। बुलारमें लिम्बनेस ऐसा ही होता। होने कीप्रिये। इतके बाद शान्त और स्वस्थ होकर उसके बड़े बड़े हुए हिस्सेको काट कर निष्काक देना होगा। वह काम अम्ना है। मेरा विरासत है कि इन वृत्ता नहीं कर सकेंगा।

उक्त पुस्तकमें मशकके बहाने न जाने कितनी गहरी और कितनी मधुर बातें हैं। पुस्तक मेरे पढ़नेके कम्मेमें विस्तरपर रहती है। बीच-बीचमें अहाँ पन्न उछट आते हैं, वहाँ १०-१५ मिनट पढ़ लेता हूँ।

भाबुकी महाशयको कहानी मैन नहीं पढ़ी है। 'बमुम्मी' आते ही ऊपर चली जाती है, अकसर वापस नहीं आती। लेकिन परमें रहती है। पानमें कठि न्याह नहीं होमी।

पढ़नेकी ऊपर और किसी दिन हूँगा। लेकिन कहानी आपकी है आपहीने लिखी है। उठकी गुत्थिचोको में कैसे गुलसाऊँ? क्या इतनी बिचा है कि आपके ऊपर पीढाई करनेसे आग करदाप्त करेगे? लेकिन अगर आदेश करत ही हों तो बचानाच कहानीका सर्वनाथ करना ही होगा। बनवरी महीनमें काशी आई तो आहोरसे आपकीमें उतर पहुँगा। नमस्कार। आपका—

धरबन्ध बड़ोपाप्पाव

साम्प्रदायिक पानिबात, ७ पौष, १९१७

प्रियकोपु। सवासे समयके भीत जानेपर ही होश आया। इलीनिए इस बीचकी खरी काम्य कम्पुर्न हाथके निकट आइ लेकिन मुट्टीमें नहीं आ सकी। पारम्पर बिट्टी लिम्बनी खाही बार-बार दिन छप भीत गये। वह जिन्नी आच बिना गई पर उसका कम नहीं लिम्ब। मुट्टीके बाहर ही रह गया। मुझे जानक्य है कि यह मरी उकदीरमें लिम्बा है, इतसे बर्पूगा कैसे। प्यार करके

कहा निबम नहीं बनाया है। आपको वह कितना बुरी समझता हूँ। कोई किरानी हफ्तरमें देरसे भाया करता था। लाहरीके जिक्र करनेपर उसने कहा था—बस सर आई कम जेड, बड आई आकवेन गो बर्षी। ऐसा भी होता है केदार बाबू।

आपका धरतूबाबू

२५

[चारुचन्द्र वन्योपाध्यायको लिखित]

हवड़ा रेलवे स्टेशन

१ अप्रैल, १९३०

आई बात आज छाकाके लिए खाना होकर भी घर लौटा जा रहा हूँ। आज कलकत्तेके गाड़ीवानोंके इइताक और ख्यामल करमेस अर्थात् भी एस पी सी ए के अधिकारियोंके विरुद्ध ख्यामल करनेके कारण एक मीरण घटना घटी, सरजेम्योसे मारपीट हुई,—किमेस गोरोन आकर गांभी बकई। मुनटा हूँ, बार आदमी मरे हैं।

यह तो हुए कलकत्तेकी बात। लेकिन हवड़ा शहरमें भी सी एस पी सी ए है और मैं उनका समापति हूँ। यह भी एक बड़ा विमोघ है। आज हवड़ाके मजिस्ट्रेट और पुलिस गुपरिरेन्जेमन्टे किती तरह हवड़ामें दंगा रोका है पर कहा नहीं जा सकता कि कल क्या होगा। इन विमोघका अधिकारी होनेके कारण इस समय मुकाम छाडकर नहीं जया महीं जा सकता है, इसीलिए रास्तसे लौटा जा रहा हूँ। कल लैरे ही फिर लौटना पड़ेगा।

आनटा हूँ इस अधिवाप मुःभी हंगे पर यह म जाना मेरे क्रिय नितान्त वैदिक घटना है।

गालमाल करत जमे, करने दानरका सैमक सूँ। तब मुमसे मुकाकात कर आर्डंगा। आणा करता हूँ माक करागे। गुम्हाय—धरतू

बामे-खिलपुर, हवड़ा

२१ अप्रैल, १९२५

माई चार, अभी-अभी तुम्हारी पिछी मिली : आब बिट्टी-पत्नी मिलनेके कायक मेरी मानसिक तन्हा नहीं है फिर भी तुम्हें इस बातको सूचित किये बगैर न रह सका । आनेके समय रास्तेमें एक मृतपाव बछड़ा बंधा था ठवकी बात तुम्हें धावद याद होगी । इसके बाद ही एक बिगड़ किया हुआ मुरमा दिखाइ पड़ा । तुमने कहा हूँ कि आब आते समय इतनी माते क्यों दिखाई पड़ रही हैं ? तुमने कहा कि गोह भी तो था मैंने कहा कि कहीं मैंने तो नहीं देखा ।

इसके बाद तुम लोग स्टेशनसे बने गए, गाड़ी छूटनेके बाद ही देखा रास्तेके किनारे गिहोंका झुण्ड लगा है और एक कुत्ता मरा पड़ा है । मेरा अपना कुत्ता अस्तित्वमें था—मेरा मन कितना खराब हो गया यह नहीं बतला सकता । बीग्रेजोमें बिले अबविभाजित करते हैं वह मुझमें नहीं पर तीन-तीन माँसकी रातने मुझे रास्तेमें क्षममरके लिए धाँपित नहीं की ।

पर आकर सुना कि मेरे बच्चा है और अस्पतालकी बिट्टी मिली ।

२४ अप्रैल २ २५

वृहस्पतिवारको पर के आया अगले वृहस्पति सबेरे ६ बजे मेरे मर गया । मेरा पानीले बसोंका संगी अब नहीं रहा । सधारमें इतनी पीड़ाकी बात भी है, इसे मैं ठीक ठीक नहीं समझता था । धावद इलीकिए मुझे इसकी आश्चर्यका थी । चार, और एक बात समझ सका, सधारमें objective कुछ भी नहीं, subjective ही सब-कुछ है । नहीं तो एक फूँकरके सिवा और कुछ था नहीं । एक भरतकी कहानी कभी सुनी नहीं है ।

पुष्पाण पत्र

२८ मार्च, १९४२

प्रियबोधु ! माई चार इली बीच में मर गया था । मौकका मिहीका पर और कपनाएवण मद—इनकी माँसके कारण मैं अधिक दिनोंतक नहीं नहीं रह पाया हूँ । संकित वह भी सब है कि इनकी माँसको लाँकर लगे आनेमें

अब अधिक देर नहीं है। पुराने इष्ट मित्र बहुतोंरे आगे चले गये हैं। उन्हें मैं निरन्तर स्मरण करता हूँ। अभी अभी बिर्बगत अष्टावक्र विपिन गुमके भाइयों अवनका निमंत्रण मिला। शिवपुरमें न जाने कितनी ही घामें इनके साथ बहनेमें होती हैं। गुम पुगने मित्रोंमेंने हाँ आशा है कमसे कम तुमसे पहले जा सकूँगा। निरन्तर पीछेकी बातें सोचता हूँ आगेकी ओर एक बार भी निगाह नहीं आती है। सेकिन जाने हाँ इन बातोंको तुम्हारा मन खराब करनेसे काम नहीं।

तुम्हारी दोनों ही जिद्दिया मिठीं अन्होंने मुझे उपाधि देनेका प्रस्ताव किया था उनको अज्ञात आर प्यार ही मजसे बड़ी उपाधि है। इत बातका बाद करनेसे शिक मर जाता है।

टाका अगर जा मडा तो तुम्हारे ही पहाँ जा चमकूँगा तुमने म्यादा मसे हो न दिया हा। अग्नी ए हनीका मेरा अज्ञातुक्त नमस्कार देकर कहना कि उनके आशानकी अकेशना मही करूँगा। तुम्हारा—शरत्

२६

['आत्मशक्ति' सम्पादककी लिखित]

५ ज्योतिष १९१४

श्रीगुरु आत्मशक्तिमत्प्राप्त महाशयकी लबाये। आपकी १ माद्रपदकी 'आत्मशक्ति' पत्रिकामें मुनाधिर लिखित साहित्यका सामग्री पना। किसी समय बंगला साहित्यमें मुनीति मुनीतिकी आकाशनाथ पत्रिकाओंमें कितनी ही कठार बातें गयी हा गई हैं और आज अकस्मात् साहित्यमें 'रस की आलोचना'में कटु रस हो मजबूत हो रहा है। ऐसा ही होता है। देवताके मन्दिरमें मजबूतकी जगह सेवापनों की लंका बजते रहनेने देवीके भागकी माया बजनेके बरसे पड़ती ही रहती है। और मायका ता रहता ही है।

आधुनिक साहित्य-लेखियोंकी विरक्त सम्प्रति बहुतसी कट्टीकियों बरतारं गरं

हैं। बरमानेके पुण्यकार्यमें जो योग लगा हुए हैं मैं भी उन्हींमें एक हूँ। अनि पारकी बिट्टी के घूँमें उसका प्रमाण है।

मुसाधिरिनिबद्ध इस साहित्यका मामला'क अधिकतर मन्तव्योंमें मैं सहमत हूँ केवल एक बातमें किन्चित् मतभेद है।

रवीन्द्रनाथजी बात रवीन्द्रनाथ बन पर अपनी निम्नी बात कितनी जानता हूँ उनके घराने का 'क' काटी कटम' या बंगालके किसी भी पत्रको नहीं पढ़ते हैं या पढ़नेको फुल्ल नहीं पाते हैं मुसाधिरका यह अनुमान सही नहीं है। लेकिन इस बातका मानना हूँ कि पढ़कर भी सारी बातें नहीं समझता। पर बिना उसे ही सारी बातें समझता हूँ इसका दावा नहीं करता।

यह तो हुई मेरी अपनी बात। लेकिन जिस बातको लेकर हमारा ठट्ठा हुआ है वह क्या है और बढ़कर किस प्रकारसे उसका निपटारा होगा यह मेरे सुझावे पर है।

रवीन्द्रनाथने साहित्यके धर्मका निरूपण कर दिया और नरदधन्यने इस धर्मकी सीमा निरिबद्ध कर दी। बैठा पाणिन्य है बैठा ही ठक मी। पढ़कर मुग्ध हो गया। जोधा बस इसपर और क्या कहा जा सकता है। लेकिन कहा बहुत-कुछ गया। तब कौन जानता था कि कितनी सीमामें कितने पैर बढ़ावा है और सीमाकी ओरहीका लेकर इतने कट्टप्राज पैरार हो जायेंगे। कुमारको बिचित्रा'में जो कुछ द्विजेन्द्रनाथका बागबानी महाधरने 'सीमानेपर बिचार'पर अपनी राय दी है। बीच पूरा लम्बी टोस बिनाइका मामला है। कितनी बातें हैं, कितने भाव हैं। बैठा गम्भीरता है बैठा ही विस्तार बैठा ही पाणिन्य मी। वेद धरास्त म्हाय गीता बिद्यापति, बन्धीराज काकिद्यासके स्थाक, उल्लसक नीलमणि केन, मय व्याकरणके अधिकरण कारकतक। बापरे बाप ! मनुष्य इतना कम पढ़ता है और न जाने कितने बाव बनता है।

इन्हीं मुकाबलमें जगन्मूर्खमिश्र बय-भाइनिर्मित ब्रिह्म-नागधीवहारी नरेण्यम्भ किन्तु मर्चा हो गए हैं। हमारे अकेलनिक नव-नाम्य-समाजके बड़े अभिनेता नरसिंह बाबू थे। राम कहा, राजन कहा, हरिश्चन्द्र कहा, सचवर उन्हींका हथारा था। अपना एक और सख्तन मा धमकै, उनका नाम था—राम-नरसिंह बाबू। और मी बड़े अभिनेता ! जैसे मुक स्वरसे पुकारते थे, हल-पद-संवाकनमें

अब अधिक देर नहीं है। पुगने हर मित्र बहुतों आगे बसे गये हैं। उन्हें मैं निरन्तर स्मरण करता हूँ। अभी अभी दिवंगत अध्यापक विविन गुप्तके भाइयों जानेका निमन्त्रण मिला। शिवपुरमें न जाने कितनी ही घामें इनके साथ बहगमें बीती हैं। तुम पुगने मित्रोंमें हो आशा है कमसे कम तुम्हें पहले का सङ्गैगा। निरन्तर पीछेकी बातें सोचता हूँ आगेकी ओर एक बार भी निगाह नहीं जाती है। लेकिन जाने का इन बातोंको, तुम्हारा मन लपक करनेसे काम नहीं।

तुम्हारी दोनों ही चिट्ठियाँ मिलीं जिन्होंने मुझे उपाधि देनेका प्रस्ताव किया था उनकी अच्छा और प्यार ही लपके बड़ी उपाधि है। इस बातको बाद करनेसे दिल भर आता है।

डाका अगर जा सका तो तुम्हारे ही यहाँ का घमकूँगा तुमने न्याय मछे हो न दिया हा। अगनी पृथ्वीका मेरा अच्छापुछ नमस्कार देकर कहना कि उनके आह्वानकी अवज्ञा नहीं करूँगा। तुम्हारा—शरत्

२६

['आत्मशक्ति' सम्पादकको लिखित]

५ आश्विन १३१४

श्रीमुक्त आत्मशक्तिसम्पादक महाशयकी सेवामें। आपकी 'आत्मशक्ति' पत्रिकामें मुझपर लिखित 'आत्मशक्ति' नामक पत्र। किसी समय पत्रिका आदिमें मुनीति कुनीतिकी आकाशनामे पत्रिकाओंमें कितनी ही कटार बसे गयी हो गई हैं और आज अकरमात् आदिमें 'रस की आलोचना' केन्द्र रस हो प्रवृत्त हो रहा है। ऐसा ही होता है। देखता हूँ मन्दिरमें सबकोकी जगह मेवायता की संकलन बहुतों रहनेसे खरीके भोगकी मात्रा बहुतोंके बदले पट्टी ही रहती है। और मामला तो रहता ही है।

आधुनिक साहित्य-संविधानोंके विरुद्ध सम्प्रति बहुतोंकी कटूकियाँ बरमाई गई

है। दरमानेके पुण्यकार्यों का बोध स्वयं हुए हैं मैं भी उन्हींमें एक हूँ। 'अनि कारकी चिन्ता के दृष्टिमें उसका प्रमाण है।

मुमानिश्चिन्तित हय साहित्यका सामान्य व आधिकार्य मन्तव्योक्तें मैं समस्त हूँ केन्द्र एक बातसे किञ्चित् मतभेद है।

रत्ननाथकी बात रत्ननाथकी बानी पर धरनी निम्नी बात जिनकी जानता हूँ उनमें 'रत्ननाथ' 'काव्य' 'कर्म' का बगानाई किसी भी प्रकार नहीं पड़ते हैं या फलनको फल नहीं पाते हैं मुमानिश्चिन्तित वह अनुमान नहीं है। लेकिन इन बातका मानना है कि पन्कर भी छापी बातें नहीं समझता। पर बिना यह ही छापी बातें समझता हूँ इसका दावा नहीं करता।

बह हा हूँ मेरी अन्नी बात। लेकिन जित बातका मकर समझा ठठ लड़ा हुआ है वह बहा है और लड़कर फल प्रकारसे उसका निराधार हाथा वह मरी सुदिने परे है।

रत्ननाथकी साहित्यके समझा निष्कर्ष कर दिया और नरेन्द्रनाथने हय बानकी सामा निरिक्त कर दी। मैसा पाणिन्य है येषा ही एक मी। पन्कर मुख हा गया। साक्षात् हय इनपर मर करा कहा जा सकता है। लेकिन कहा बहुत-कुछ गया। यह जान जानता था कि किसीकी सीमायें किन्तु पैर बढ़ाका है और सीमाकी बाहरीका लेकर हयने लड़नाय देवार हा। अर्थात्। कुम्हारको 'वि' 'का' में प्रोक्त प्रिन्सिपलसमय कागकी मन्तव्यने सीमानपर विचार पर अन्नी राय दी है। बीच पृष्ठ मन्नी ठान बिनाइका सामान्य है। चितनी बातें हैं, किन्तु ये हैं। मैसी सम्मेलन है वैसा ही विस्तार वैसा ही पाणिन्य मी। वेद वेदान्त, न्याय मीमांसा विद्यावति अन्नीदात काकिदातके मन्त्र उम्मत नौकर्मणि केते मय मन्त्ररत्नके अधिष्ठान करकतक। बापरे बाप। मन्त्रय इतना सब पढ़ता है और न जाने दिते बाद रक्ता है।

हयने मुद्रावधेयै काव्यपूर्णकित वय-मन्त्रनिमित्त श्रीहा-गणधीचयरी नरेन्द्रनाथ विष्णु मन्त्र हा गय है। हयने अर्थात् नव-नाट्य-समाजके बह अर्थमेता नरनिह बाध वे। राम कर्त रावण कहा हरिश्चन्द्र कहा सत्यर उन्नीका इकारण था। अर्थात् एक और समझ था मन्त्र उन्कर नाम था—राम-मन्त्रिह। और मी बड़े अधिनेता। मैने मुक्त रखते पुकारते थे, हय-वद-संवाक्यमें

भी उनका पराक्रम अप्रतिहत था। मानों मृतवासा हाथी। इस नबागव राम-
नरसिंह बाबूके रोबके सामने हमारे कैबल मरसिंह बाबू छलीयाकी धाति-कडाकी
मौति मर्दिय पड़ गए। मरेध-बाबूकी नहीं हैला है पर कस्यनामी उनका सेहर
देखकर ऐसा डग रहा है मानों वह हाथ जोड़कर अग्रगण्यसे कह रहे हैं—प्रभु !
मेरे किए बनये आकर रहना हमसे कहीं अच्छा है।

द्विजेंद्रबाबूकी बहलकी रोमी रोमी लगती है। हाँ भी बेसी ही धुरे-सी पैनी।
इतने सतक रहते हैं मानो कैबलसेके मनोदेमें वहीं एक अक्षरका भी अन्तर न
आने पावे। मानो वह आत्ममें रोहूसे लेकर खोया-सीरतक छान जानेके किए
बद-परिहार हैं।

हाथ रे पैरिया। हाथरे तादित्यका रत। मचत-मचते मानो सुनि नहीं हा रही
है। रबीन्द्रनाथ और नरेधबन्धका बाहिने बाँवें रखकर अवशान्तकमी द्विजेंद्रनाथ
निरपेक्ष समान गतिसे मानो वह चुन रहे हैं।

लेकिन क्या किम्।

पर वह किम् ही बड़ी निन्ताकी बात है। नरेधबन्ध अथवा द्विजेंद्रनाथ वे
बोग तादित्यक व्यक्ति हैं इनका माक-दिनिमय और प्रीति-समापन समझमें
आता है। लेकिन इन आकर-छापागीका रूप पकड़कर जब बाहरवासे आकर
उत्सवमें योगदान करते हैं, तब उनके तादित्यक रूपको कौन रोक सकता है।

एक ठराहरण वू। इसी कुर्मीरके 'प्रवासी'में श्रीब्रह्मचर्यम हाजिर नामक
एक व्यक्तिने रत और रनिकी आलोचना की है। इनके आक्रमणका कस्य
उक्तोंका रक है। और अप्पन रबिका परिचय देते हुए कहते हैं— 'हम समय
त्रिज प्रकार राजनीतिको पचामें शिशु और लक्षण छान और बेकार व्यक्ति
निरन्तर लक्ष्मीन है उनी प्रकार अर्थोसर्जनके लिए इन बेकार तादित्यकोंका रक
बयारबनामें लगा हुआ है। और उनका परिचामका यह पुकार है कि 'हैंसी
वज्राहर बलम पकड़नेसे भी कुछ होना चाहिए वही हुआ है'।"

हम व्यक्तिने डिपुटीगीरी बरके ऐसा कस्य किया है और आक्रमण गुलामीका
पुरस्कार करी फैशन भी इमे नगीब नहीं है। हमीलिए तादित्य-वक्तियोंके निर-
लिप्त तादित्यका उद्भाव करनेमें हमें संशोक नहीं हुआ। यह आदमी जानता
भी नहीं है कि तादित्य अस्पष्ट नहीं है और सभी देशों और सभी मुल्लोंमें इन्होंने

अनपान करके प्राप्त किया है। इसीलिए साहित्यको आज इतना बड़ा गौरव मिला है।

अब तक हम जानूँ भये ही न आँ मैं पर 'प्रवासी' के प्रतीय और लहू व लग्नदफ़से तो वह बात किसी नहीं हुई है कि साहित्य के मध्य-सुख की आश्वेयना और दरिद्र साहित्यिक के धृष्ट न बचने की आश्वेयना एक ही वस्तु नहीं है। मेरा विश्वास है कि उनके अन्तर्गत ही इतनी बड़ी बहूति उनकी परिकल्पना छप गई है। और इसके लिए वह पीढ़ाका ही अनुभव करेंगे और छावद अपने लेखकों को बुलाकर जानमें कह देंगे, मेरा अनुभव की गरीबी की निम्नलिखित उद्घाटनमें का अर्थ प्रकट होती है वह मात्र समाजकी नहीं है और अन्तर्गत बुद्धि के अन्तर्गत होनेसे साहित्य के 'रस' का विचार करनेका अधिकार नहीं उठाया जाता है। इन दोनोंमें अन्तर है पर वह तुम्हारी समझसे बड़े है।

२७

[श्री मनीन्द्रनाथ रायको लिखित]

अमृतपुर, पवित्राष्ट, मिला हबहा

१ अक्टू १९२७

परमहंसजीके। मनीन्द्र, तुम्हारी लिखी बधावमय मिला गई थी, लेकिन कुछ तो अन्तर्गत और कुछ सार्वजनिक हास्यके कारण अस्वाभाविक होनेमें डेर हो गई।

तुम हमारे नहीं आश्वेयने इस बातको सुनकर मुझे खुशी होगी वह तुम्हें मान्य है। मगर तुम्हें कह होगा। परन्तु बात है बड़ी गरीबी है, और मेहनतों के बीचों के अन्तर्गत माना बड़ी अन्तर्गत बात है। कुछ पानी-पानी करत काय तो और बिलो बिलो अन्तर्गत। इसके अन्तर्गत इस ६ सार्वजनिक में सिवपुरमें रहूँगा। कुछ काम भी है और एक-दो दिन अन्तर्गत मनुष्य के विवेकमें पोषणका विवेक देखूँगा।

(प्रत्यक्ष ज्ञान 'प्रवासी' में प्रकाशित हुईं सभी विवरण अन्तर्गत मिलाऊँगे)

सच है। लेकिन मुझे यह पत्थर नहीं। नौकरी-खाकरी छोड़कर यह अस्वस्थ शरीर सेकर खानाबदोश बनना बिल्कुल पत्थर नहीं। और, किसीके पास व्यकर रहना—यह तो एकदम असंभव है। मैं बसिक अस्पतालमें मर्हगा पर किसी भी हालतमें इस पीडित शरीरको किसीके घरमें अन्तिम शर नहीं रखूंगा। इससे मैं दुःखा करता हूँ। मेरे बहुतरे सम्बन्धी और भिन्न हैं, इसे जानता हूँ। जानेपर कुछ दिनोंतक ऐल-प्लैक नहीं होगी ऐसा नहीं समझता। लेकिन मैं क्यासम्पाद कर नहीं देना चाहता। अगर गया तो अपनी बड़ी बहनके यहाँ ही रहूंगा एक प्रकारसे बड़ी मेरा परहार है। उसकी हालत भी बहुत बग़्गरी है—अनेके लिए बार-बार तयाबा भी कर रही है। लेकिन अस्वस्थ शरीर सेकर मैं कहीं जाना नहीं चाहता। मुझे बारम्बार हमी बातका डर लगता है कि कहीं अजानक मरकर लहँ स्वेधान न करूँ। पर अब शायद मायकाके लिए काम्य नहीं। क्या अनुका समय मेरे लिए बड़ा ही कठिन होता है। यह तो समाप्त हुई। अब आशा है बीरे बीरे बगा हो बाँटेंगा। अपने दुःखयवमें अगर 'परिभ्रष्ट' समाप्त नहीं कर लूँ तो दुःख कीन कर सकता है, इसे निकली बार पुता या। इसका उत्तर देकर निश्चित करना।

यक बात और जानेकी इच्छा है। 'नारीका मूर्ख' समाप्त हो गया। हमकी इसकी प्रतीता होगी इसे साधा भी नहीं या लेकिन अब परिचित-परिचित आगोंसे हमकी कितनी ही आकाशनाई और पप पाकर कम रहा है कि हमने आगोंकी इधि अग्रन्ति की है। मैं पूरी तरह स्वस्थ होता तो जैज पहले संकरा किया या शायद पैना ही होता।

पर एक बात यह भी है कि जो भी प्रतिवाद क्यों न करें निरान्त महिलाकी रचना होनेके कारण सबदेखना न करे। अगली बात है यह मेरी किन्नी हुई है। यह बात महिलाको कैसे मायम हुई? मानती, प्रचारी, तादिर इहोंने ही कैसे जाना। कहीं तुमने तो प्रचार नहीं कर दिया? हाँ जो मेरी रचनाओंसे धर्मिष्ठ रूपसे परिचित हैं वे समझ आवेंगे। लेकिन यह बात साधारण आगोंके समझमें आनेकी नहीं।

(पुगास्थ, मय १९४४)

३०

[१]

५४ १६ बॉ स्टीड, रंगल

१२१९

समिन्व निवेदन । परिषदका सीमाव न होनेसे भी महाशयका आशीर्वाद और प्रशंसा पाकर अपनेको बारम्बार बन्ध समझ रहा हूँ । आपने अपनेको बड़ छिन्ना है मैं भी तो एक प्रकारसे बड़ी हूँ । मेरी उम्र (१९) उन्मत्तासीत है, फिर भी अगर उम्रमे कुछ छोटा होऊँ तो मेरा प्रणाम स्वीकार करें ।

पक्षमें आपने जन्मा को थोड़ा सा परिषद दिया । उसीसे समझमें आ जाता है कि सभारके मित्र-मित्र समझताके केन्द्रोंको अपनी आँखोंसे देख आनेके कारण ही बन्धमूर्तिक प्रति आपकी समझका कम जाना तो पूर रहा बसिक बह बड़ गई है । या यह बात भी ध्याव डीक नहीं है । क्योंकि ज्ञान भार अनुभवके आधार पर ही बन्धमूर्ति प्राम-बन्धनीके प्रति स्नेह उमन्न होता है ऐसा भी नहीं । मैं कलकत्ता-प्रवासी बहुरे बड़े आदर्शियोंके सम्प्रदाय अपनी आँखोंसे देख आया हूँ । लेकिन उनकी दुर्बलकी कोई सीमा नहीं । उनमें कितना सामर्थ्य है उसका ध्याव भी अगर वे उत दिग्गम पान देते, तो पावक कुली गाँवोंके सीमावका पावकार नहीं रहता ।

मेरे पाठ समझ और सामर्थ्य दोनों इतने कम हैं कि उन्हें छेकहों आने गिनलीमें न देनेसे भी किलीका योग नहीं दिया जा सकता । फिर भी मैं केवल यही प्रेरणा करता हूँ कि कहीं एक भी गाँवमीकी दृष्टि अपने गाँवकी ओर आकर्षित हो जाय । इसीलिए अत्यन्त अधिक और क्लेशदायक होनेपर भी गाँवके सम्प्रदायमें अच्छी बातें लिखनेकी प्रेरणा करता हूँ । पावकके योग कल्पनाके आधार पर गाँवकी का प्रशंसा करते हैं । अधिकांशमें वह समाय नहीं होती बसिक गाँव कीरी पीरे अवनतिकी ही ओर आ रहे हैं । हम पावको 'ग्रामीण सम्प्रदाय नामक पुस्तकमें कठनेकी प्रेरणा की थी । लेकिन प्रेरणा करने और सफलतामें जो अन्तर होता है मेरी रचनामें भी उतना कुछा है ।

आपने इसे नाटकके आकारमें प्रकाशित करनेका उपदेश दिया है। धावद करनेसे अच्छा हो जागा। लेकिन सुझमें तो वह क्षमता नहीं है। कमसे कम है या नहीं, इसकी कभी परीक्षा नहीं की। अगर दूसरा कोई कष्ट करके करता है जिसमें क्षमता है तो धावद अच्छा भी हो सकता है। लेकिन मेरा करना धावद स्वर्ण परिश्रममात्र होगा। और कोई नाट्यमंथ अपने समान और सामर्थ्यका व्यपश्रव करके उस मंथन में भी नहीं करना चाहेगा। पर आपके उपदेशको ध्यानमें रखकर मविध्यमें अगर कुछ कर सका तो श्रेय कहेंगा। पहले गौबड़े सम्बन्धमें मेरी 'पश्चित महाधर्म पुस्तक'को भी किसी-किसीने 'नाटक' करनेकी बात उठाई थी पर हो नहीं सका। वह धावद और भी अच्छा बन सकता था।

जो कुछ भी हो इस उपदेशको मैं भूलूँगा नहीं और इसके लिये आपको प्रणाम करता हूँ।

—भी शरत्चन्द्र बहोपाध्याय

स मा स

